विशेषांक

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 64 अंक : 4 पृष्ठ : 76 फरवरी 2018 मूल्य : ₹ 30

कृषि से समृद्धि

प्रधानमंत्री ने आई क्रिएट सुविधा राष्ट्र को समर्पित की

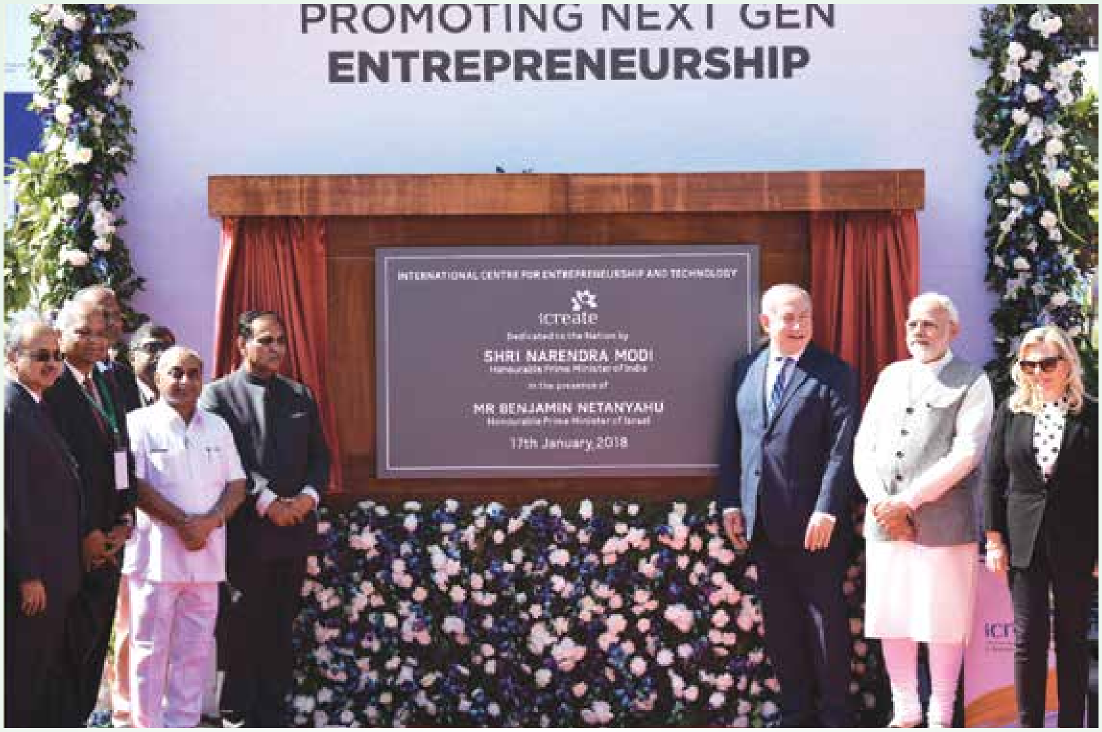

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी और इज़राइल के प्रधानमंत्री श्री बेंजामिन नेतन्याहू 17 जनवरी, 2018 को देव धोलेरा गांव, अहमदाबाद, गुजरात में आई क्रिएट सेंटर का उद्घाटन करते हुए। साथ में, गुजरात के मुख्यमंत्री और अन्य गणमान्य व्यक्ति भी।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी और इज़राइल के प्रधानमंत्री श्री बेंजामिन नेतन्याहू ने 17 जनवरी, 2018 को अहमदाबाद के नजदीक आई क्रिएट सुविधा राष्ट्र को समर्पित की। आई क्रिएट एक स्वतंत्र केंद्र है, जिसका उद्देश्य सृजनात्मकता, नवोन्मेष, इंजीनियरिंग, उत्पाद डिजाइन और उभरती हुई प्रौद्योगिकियों के जरिए उद्यमिता को बढ़ावा देना है। यह केंद्र खाद्य सुरक्षा, साइबर सुरक्षा, जल संपर्क, आईटी और इलेक्ट्रॉनिक्स, ऊर्जा व बायो–मेडिकल उपकरणों जैसे प्रमुख क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण उद्यम सृजित करने के लिए भारत में एक पारिस्थितिकी प्रणाली विकसित करने की दिशा में कार्य करेगा।

इस अवसर पर संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि नए अविष्कारकों की भारत और इज़राइल के लोगों को एक–दूसरे के करीब लाने में महत्वपूर्ण भूमिका है। उन्होंने कहा कि समूचे विश्व में इज़राइल के प्रौद्योगिकी कौशल और सृजनात्मकता की ख्याति है। साथ ही कहा कि भारत के युवाओं में ऊर्जा और उत्साह है और इन युवाओं को प्रोत्साहन और संस्थागत सहायता देने की जरूरत है।

प्रधानमंत्री ने कहा कि सरकार समूची प्रणाली को नवोन्मेष अनुकूल बनाने के लिए कार्य कर रही है, ताकि इस प्रयोजन से नई योजनाएं सामने आएं। नई योजनाओं से अविष्कार होते हैं और नए अविष्कारों से नए भारत का निर्माण करने में मदद मिलेगी।

उन्होंने कहा कि इस सफलता की पहली शर्त साहस है। उन्होंने आई क्रिएट में नवोन्मेष कार्यों में लगे साहसी युवाओं को बधाई दी और भारत के युवाओं से आग्रह किया कि वे राष्ट्र के सामने मौजूद चुनौतियों से निपटने के लिए नए अविष्कार करें व कम से कम लागत पर आम आदमी के जीवन में सुधार करें। ❑

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 64★ मासिक अंक : 4★ पृष्ठ : 76 ★ माघ–फाल्गुन 1939★ फरवरी 2018

प्रधान संपादक

दीपिका कच्छल

वरिष्ठ संपादक

ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार

संपादक

कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय

सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,

लोधी रोड, नई दिल्ली–110 003

दूरभाष : 011–24365925

वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)

विनोद कुमार मीना

व्यापार प्रबंधक

दूरभाष : 011–24367453

ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण

आशा सक्सेना

सज्जा

मनोज कुमार

मूल्य एक प्रति	:	22 रुपये
विशेषांक	:	30 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	230 रुपये
द्विवार्षिक	:	430 रुपये
त्रिवार्षिक	:	610 रुपये

इस अंक में

किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में प्रयास	नरेश सिरोही	5
सदाबहार क्रांति का लक्ष्य	सुरिंदर सूद	11
राष्ट्रीय कृषि बाज़ार : एक राष्ट्र-एक बाज़ार	सुभाष शर्मा	15
प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना से संवरेगा भारत	चंद्रभान यादव	21
प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना एवं कृषि ऋण	सतीश सिंह	26
मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण	गजेन्द्र सिंह 'मधुसूदन'	31
समन्वित कृषि प्रणाली से होंगे किसान समृद्ध	एन. रविशंकर, ए.एस.पंवार	37
कृषि आय बढ़ाने वाली कम लागत की तकनीकें	अशोक सिंह	43
खाद्य प्रसंस्करण से मूल्य संवर्धन	देवाशीष उपाध्याय	47
जैविक खेती की ओर बढ़ता रुझान	डॉ. वीरेन्द्र कुमार	52
भारत में दलहन उत्पादन बढ़ाने की रणनीति	जे.एस. संधू, एस.के. चतुर्वेदी	57
भारतीय कृषि के विकास में क्षेत्रीय असंतुलन	डॉ. जसपाल सिंह, डॉ. अमृतपाल कौर	63
कृषि क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता	गौरव कुमार	66
स्वच्छता को पोषण, स्वास्थ्य और आजीविका से जोड़ हासिल की सफलता	---	69
स्वच्छ सर्वेक्षण-2018	---	70
मल प्रबंधन : स्वच्छ भारत अभियान के लिए चुनौती	पद्म कांत झा, योगेश कुमार सिंह	71

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रभाग, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24367453

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए 'कुरुक्षेत्र' उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

कृषि क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। यह देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। आज भी देश की आधी आबादी जीवनयापन के लिए कृषि या उससे जुड़े व्यवसायों पर निर्भर है। कृषि क्षेत्र देश की खाद्य सुरक्षा की जरूरत पूरी करने के साथ–साथ निर्यात के लिए अतिरिक्त पैदावार भी उपलब्ध कराता है। साथ ही, उद्योगों के लिए भी बड़े पैमाने पर कच्चा माल कृषि क्षेत्र से ही प्राप्त होता है। किंतु इसके बावजूद हमारे देश में किसानों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं है जिसकी वजह हमारी आर्थिक नीतियों में किसान को केंद्र में रखने के बजाय कृषि पैदावार बढ़ाने पर जोर देना रहा है। इसी कमी को दूर करने के लिए सरकार किसानों के हितों को ऊपर रखकर काम कर रही है। किसानों की स्थिति सुधारने के लिए प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का लक्ष्य रखा है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रधानमंत्री ने सात सूत्री कार्यक्रम रखा है। कृषि मंत्रालय इस सात सूत्री कार्ययोजना पर तेजी से काम कर रहा है।

प्रधानमंत्री की सात सूत्री कार्ययोजना में प्रति बूंद अधिक फसल के लिए सिंचाई पर विशेष ध्यान मृदा स्वास्थ्य के आधार पर श्रेष्ठ बीजों एवं पोषकता पर जोर, फसल कटाई के बाद नुकसान को कम करने के लिए भंडारण और कोल्ड स्टोरेज पर बड़े पैमाने पर निवेश, खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से मूल्यवर्धन, राष्ट्रीय कृषि बाजार की स्थापना, किसानों का जोखिम कम करने और उनकी फसल की कम खर्च पर सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए नई प्रधानमंत्री फसल बीमा की शुरुआत के साथ–साथ सहायक गतिविधियां जैसे डेयरी–पशुपालन, मधुमक्खी पालन, मत्स्य पालन, मुर्गीपालन आदि को बढ़ावा देकर किसानों की आय में बढ़ोतरी का लक्ष्य है।

अगर फसल अच्छी हो भी जाए तो भी किसानों के लिए खेतों से बाजार तक का सफर आसान नहीं है। आढ़ती, साहूकार, बिचौलिए और सरकारी खरीद केंद्रों का बुनियादी ढ़ांचा शोषण भरा है। उससे किसानों और उपभोक्ताओं के बजाय बिचौलियों का हित ही सध रहा है। इसी के मद्देनजर सरकार ने वर्ष 2016 में कृषि मार्केटिंग में आमूलचूल परिवर्तन करने के प्रयास आरंभ किए। इलेक्ट्रॉनिक राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) द्वारा देश की सभी 585 मंडियों को जोड़े जाने का प्रावधान किया गया है। केंद्र सरकार ई–नाम के तहत प्रत्येक बाजार को 75 लाख रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान कर रही है। ई–नाम के अंतर्गत अब तक 14 राज्यों की 470 मंडियों को जोड़ा जा चुका है। इस योजना को कृषि विपणन सुधारों के साथ जोड़ा गया है और राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों से अपेक्षा की गई है कि वे योजना के तहत सहायता का लाभ उठाने के लिए उत्पाद बाजार कमेटियों से संबंधित अपने कानून में आवश्यक संशोधन करें।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना केंद्र सरकार की अन्य महत्वाकांक्षी योजना है। 2 जुलाई, 2015 को अनुमोदित योजना में केंद्र और राज्यों को 75:25 के अनुपात में खर्च वहन करना होगा। पूर्वोत्तर और पर्वतीय राज्यों के लिए अनुदान का अनुपात 50:50 होगा। इससे जहां किसानों को समुचित सिंचाई सुविधा मिल सकेंगी वहीं देश के लिए चुनौती बनते जा रहे जलस्तर को भी बढ़ाया जा सकेगा।

किसानों की आय बढ़ाने में जैविक खेती की भी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है चूंकि मृदा, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को सशक्त बनाए रखने के लिए जैविक खेती नितांत आवश्यक है। इससे न केवल उच्च गुणवत्तायुक्त, स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता बढ़ेगी बल्कि खेती में उत्पादन लागत कम करने में भी मदद मिलेगी। साथ ही मृदा उर्वरकता में सुधार के साथ–साथ किसानों की आमदनी में भी इजाफा होगा।

देश में मानसून की अनिश्चितता के चलते किसानों के लिए एक नई फसल बीमा योजना की जरूरत काफी समय से महसूस की जा रही थी। इसी के मद्देनजर प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना प्रस्तावित की गई जिसे 13 जनवरी, 2016 को कैबिनेट ने अपनी मंजूरी दे दी। इस बीमा योजना के तहत किसानों द्वारा देय बीमा प्रीमियम दरों को काफी कम रखा गया है। हालांकि बीमा कंपनियों को सरकार वास्तविक बीमा किस्त का भुगतान कर रही है जिसका भार केंद्र और राज्य सरकार मिलकर उठा रहे हैं। उल्लेखनीय है कि योजना के शुरू में बीमा किस्त दर पर ऊपरी सीमा का प्रावधान था जिससे दावे की स्थिति में किसानों को कम राशि का मुआवजा मिलता था, लेकिन बाद में इस प्रावधान को हटा दिया गया। साथ ही, इस योजना को सशक्त बनाने के लिए प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल को तरजीह दी गई है। दावा भुगतान में देरी न हो, फसल कटाई का डाटा अद्यतन हो, आदि के लिए स्मार्ट फोन, रिमोट सेंसिंग, ड्रोन और जीपीएस तकनीक का उपयोग चुनिंदा स्थानों पर किया जा रहा है।

कृषि पद्धतियों को आधुनिक बनाने और इस क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा टेक्नोलॉजी का प्रयोग बेहद महत्वपूर्ण है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के शब्दों में ''भारत के भविष्य का निर्माण कृषि विकास, भारत के किसानों और गांवों की समृद्धि की बुनियाद पर किया जा सकता है। भारतीय कृषि में अगली क्रांति प्रौद्योगिकी और आधुनिकीकरण का उपयोग करते हुए लानी होगी और भारत के पूर्वी इलाकों में इसे प्राप्त करने की अधिकतम संभावना है।''

सरकार सस्ती प्रौद्योगिकी, क्वालिटी बीज, जैविक खाद और इनपुट लागत घटाकर किसानों की आय बढ़ाने की दिशा में कार्यरत है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड और प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना इनपुट लागत घटाने की दिशा में बहुत महत्वपूर्ण कदम हैं। साथ ही, खेती की गतिविधियों में विविधता के माध्यम से किसानों की आय बढ़ सकती है जिससे कृषि से जुड़े जोखिम भी कम होंगे। कृषि जोखिम कम करने के लिए नई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत न्यूनतम प्रीमियम पर अधिकतम सुरक्षा देने का प्रयास किया गया है और सरकार इसका दायरा और विस्तृत करने की दिशा में भी कार्य कर रही है। किसान सुविधा एप सहित कई एप आज उपलब्ध हैं जो किसानों का खेती के लिए मार्गदर्शन कर सकते हैं।

निरंतर अनुसंधान और विकास प्रयासों से दलहन उत्पादन और उत्पादकता में भी काफी वृद्धि हुई है। उम्मीद है कि निकट भविष्य में भारत दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर हो जाएगा। देश में कृषि और कृषक की स्थिति सुधारने की दिशा में उठाए जा रहे व्यापक कदमों को देखते हुए उम्मीद है कि निकट भविष्य में देश में न केवल कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ेगी बल्कि देश का किसान भी समृद्ध होगा। और नई प्रौद्योगिकी और जैविक खेती के बूते देश में सदाबहार क्रांति आएगी।

किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में प्रयास

–नरेश सिरोही

प्रधानमंत्री द्वारा किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने का लक्ष्य सराहनीय होने के साथ–साथ चुनौतियों भरा है लेकिन असंभव नहीं है। आय दोगुना करने के लक्ष्य की ओर बढ़ने से पहले वर्तमान 2016–17 में किसान की आमदनी क्या है, ये जानना जरूरी है क्योंकि वर्तमान में उपलब्ध एनएसएसओ के आंकड़े 2012–13 के अनुसार देश के किसान की औसत मासिक आमदनी 6426 रुपये है। आमदनी दोगुनी करने के संकल्प में यह भी स्पष्ट करना होगा कि हम न्यूनतम आय अथवा वास्तविक आय में से किसे दोगुना करना चाहते हैं।

कृषि भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था दोनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। आज भी आधी आबादी के जीवनयापन का साधन कृषि या उससे जुड़े अन्य व्यवसाय हैं। यह देश की खाद्य सुरक्षा की जरुरत पूरी करने के साथ ही निर्यात के लिए अतिरिक्त पैदावार उपलब्ध कराने के साथ–साथ उद्योग क्षेत्र के लिए अधिकतर कच्चा माल भी उपलब्ध कराती है। वर्ष 2011 में हुए सामाजिक–आर्थिक और जाति सर्वेक्षण यानी एसईसीसी के अनुसार देश के कुल 24.39 करोड़ परिवारों में 17.9 करोड़ परिवार गांवों में रहते हैं और अधिकतर कृषि पर निर्भर हैं। लेकिन जब हम भारतीय किसान की स्थिति पर नजर डालें तो हालात बहुत अच्छे नहीं दिखते और इसका मुख्य कारण है कि अभी तक हमारी आर्थिक नीतियां किसान को केंद्र में रखने के बजाय कृषि पैदावार बढ़ाने पर ज्यादा जोर देती रही हैं।

श्री नरेंद्र मोदी देश के पहले ऐसे प्रधानमंत्री हैं जिन्होंने अपनी आर्थिक नीति के केंद्र में किसान को प्रतिष्ठित किया है। अब तक हमारी आर्थिक नीतियां किसान को केंद्र में रखने के बजाय खेती और उद्योग क्षेत्र के उत्पादन को ध्यान में रखकर ही बनाई जाती रही हैं। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कृषि उत्पादन बढ़ाने की जगह किसान की आय दोगुनी करने का लक्ष्य घोषित किया है। किसान की आय बढ़ेगी तो उसका लाभ सबसे पहले आसपास के समाज को होगा। प्रधानमंत्री की ये घोषणा मात्र एक सरकारी घोषणा नहीं मानी जानी चाहिए। उनकी घोषणा को एक राष्ट्रीय संकल्प के रूप में लिया जाना चाहिए। इस संकल्प को पूरा करने में ना केवल हमारे समूचे शासकीय तंत्र को जुटना चाहिए बल्कि किसानों सहित देश के सभी नागरिकों को इस संकल्प में साझीदार बनाया जाना चाहिए। लेकिन प्रधानमंत्री की इस घोषणा को काफी समय बीत चुका है। पर ऐसा लगता नहीं कि हम किसान–केंद्रित कृषि के अनुरूप अपनी दशा–दिशा बदल पाए हैं। हां, संकल्पशील किसानों का एक ऐसा नया वर्ग अवश्य उभरा है जो कृषि की परंपरागत विधियों और विवेक को आत्मसात करके खेती को एक नया स्वरूप देने में लगा है। खेती में किसान का अपनी मिट्टी, पानी, पशु, बीज, ऋतु चक्र और आसपास के समाज और भूगोल से आत्मीय संबंध होता है। कृषि पंडितों ने इस संबंध को भुलाकर केवल टेक्नोलॉजी के सहारे जो नई कृषि विधियां विकसित की उसके परिणाम उर्वराशक्ति के क्षय से लेकर किसानों की बदहाली के रूप में हमारे सामने हैं। हमारे परंपरागत विवेक में कृषि का प्राथमिक उद्देश्य अपना और समाज के अन्य लोगों का भरण ही नहीं बल्कि पोषण भी था। हमें बाजार के लिए नहीं अपने समाज के लिए पैदा करना है। इसलिए हमारी खेती का लक्ष्य केवल मात्र अधिकता नहीं बल्कि पूर्णता भी होना चाहिए; पूरे समाज को पोषक और पर्याप्त भोजन उपलब्ध करवाना होना चाहिए।

आजादी के बाद ये दूसरा अवसर है जब कृषि और किसानों को लेकर व्यवस्था में बड़ा बदलाव होने जा रहा है। साठ के दशक में खाद्यान्न की कमी से जूझ रहे देश को हरितक्रांति के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाया गया और अब प्रधानमंत्री कर्ज में डूबे किसानों की आय को दोगुना कर उनके जीवन–स्तर को ऊपर उठाने का प्रयास कर रहे हैं। इसके लिए प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने एक सात सूत्री कार्ययोजना तैयार की है। इसके तहत प्रत्येक खेत के मृदा स्वास्थ्य के आधार पर गुणवत्ता वाले बीजों और पोषक तत्वों

प्रधानमंत्री की किसानों की आय दोगुनी करने की सात सूत्री रणनीति

किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने देश के सामने वर्ष 2022 तक किसानों की आमदनी दोगुनी करने का एक लक्ष्य रखा है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए उन्होंने सात –सूत्री कार्यक्रम का समर्थन किया है। कृषि मंत्रालय योजनाबद्ध तरीके से इस सात सूत्री कार्ययोजना पर काम कर रहा है।

1. प्रति बूंद अधिक उपज के लक्ष्य के साथ सिंचाई पर विशेष ध्यान।
2. हर खेत के मृदा स्वास्थ्य के आधार पर श्रेष्ठ बीजों एवं पोषकता पर जोर।
3. उपज के बाद नुकसान को कम करने के लिए ग्रामीण भंडारण एवं एकीकृत शीत श्रृंखला पर बड़े पैमाने पर निवेश।
4. खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से कृषि में गुणवत्ता को बढ़ावा।
5. राष्ट्रीय कृषि बाजार योजना की स्थापना।
6. किसानों का जोखिम कम करने और उनकी फसल की कम खर्च पर सुरक्षा एवं सहायता के लिए नई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की शुरुआत।
7. सहायक गतिविधियों जैसे मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, पशुपालन, डेयरी विकास एवं मत्स्यपालन के माध्यम से किसानों की आय में बढोतरी।

का प्रावधान, प्रति बूंद अधिक फसल पाने के लिए सिंचाई पर विशेष ध्यान, फसल कटाई के बाद नुकसान से बचने के लिए भंडारण और कोल्ड स्टोरेज में निवेश, खाद्य प्रसंस्करण, मूल्यवर्धन, राष्ट्रीय कृषि बाजार का सृजन और नई फसल बीमा योजना की शुरुआत के साथ–साथ डेयरी– पशुपालन, मधुमक्खी पालन, बागवानी , मछली पालन, मुर्गी पालन और मेढ़ पर पेड़ों को बढ़ावा देना भी शामिल है।

भारत में कृषि के मौजूदा परिदृश्य पर नजर डालें तो एक अनुमान के अनुसार 69 फीसदी किसान परिवारों के पास एक हेक्टेयर से भी कम ज़मीन है। 17 फीसदी परिवारों के पास एक से दो हेक्टेयर के बीच ज़मीन है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) के अनुसार 36 फीसदी किसान भूमिहीन हैं। वर्ष 2015–16 का आर्थिक सर्वेक्षण कहता है कि कुल कार्यबल आबादी के 48.9 फीसदी लोग जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) में मात्र 17 प्रतिशत का योगदान दे रहे हैं। और मौजूदा वित्तवर्ष में कृषि और उससे जुड़े अन्य क्षेत्रों की वृद्धि दर 2.1 फीसदी रहने की उम्मीद है।

प्रधानमंत्री द्वारा किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने का लक्ष्य सराहनीय होने के साथ–साथ चुनौतियों भरा है लेकिन असंभव नहीं है। आय दोगुना करने के लक्ष्य की ओर बढ़ने से पहले 2016–17 में किसान की आमदनी क्या है, ये जानना जरूरी है क्योंकि वर्तमान में उपलब्ध एनएसएसओ के आंकड़े 2012–13 के अनुसार देश के किसान की औसत मासिक आमदनी 6426 रुपये है। आमदनी दोगुनी करने के संकल्प में यह भी स्पष्ट करना होगा कि हम न्यूनतम आय अथवा वास्तविक आय में से किसे दोगुना करना चाहते हैं (वास्तविक आय का अर्थ महंगाई जैसे समुचित मुद्रास्फीति कारक डिफ्लेटरों का इस्तेमाल करके न्यूनतम आय को कम करने के बाद लगाए गए अनुमान)। बता दें कि न्यूनतम आय छह से सात वर्ष में स्वतः दोगुनी हो जाती है जबकि वास्तविक आय को दोगुना होने में लगभग 20 वर्षों का समय लग जाता है। ऐसे में वास्तविक आय को वर्ष 2022 तक दोगुना करने के लिए वर्तमान गति में चल रहे प्रयासों को तीन गुना बढ़ाने की जरूरत होगी।

कर्ज में फंसा किसान

देश ने साठ के दशक में हरितक्रांति द्वारा किसानों और कृषि व्यवस्था में पहले बदलाव की शुरुआत की थी लेकिन हरितक्रांति द्वारा उत्पादन बढ़ाने के बावजूद सामाजिक–आर्थिक प्रभाव बहुत अधिक उत्साहवर्धक नहीं रहा जिसके चलते मिट्टी, पानी, पर्यावरण के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य पर भी इसके दुष्प्रभाव देखने को मिल रहे हैं। उत्पादन मूल्य के बदले खेती में लगी लागत ने किसानों को कर्जदार बना दिया है। वर्ष 2013 के सर्वेक्षण के अनुसार देश के करीब 52 से 56 प्रतिशत कृषक परिवार ऋणग्रस्त हैं। तथा प्रत्येक परिवार पर ऋण लगभग 48,000 रुपये था।

न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रणाली में सुधार की आवश्यकता

निदान की नई कार्ययोजना बनाने से पहले वर्तमान कृषि परिस्थितियों और नीतियों का विश्लेषण करना जरुरी है। किसी समुदाय की खुशहाली इस बात पर निर्भर करती है कि उसे अपने उत्पादन के मूल्य कैसे मिलते हैं। यदि सरकारी मूल्य नीति अन्यायपूर्ण हो तो वह समुदाय कभी पनप नहीं सकता। सरकार 24 कृषि जिंसों का न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित करती है लेकिन कृषि लागत एवं मूल्य आयोग (सीएसीपी) जिस पद्धति से फसलों का मूल्य निर्धारण करता है उसमें भारी विसंगतियां हैं। असल में न्यूनतम समर्थन मूल्य नाम के अनुसार फसलों के असली लागत

मूल्य को कम करके आंकता है। और कम पर ही खरीदने का सुझाव देता है। सीएसीपी द्वारा जो लागत मूल्य अनुमानित किया जाता है, वह अखिल भारतीय–स्तर पर सभी लागत मूल्यों का औसत होता है। अक्सर एमएसपी किसानों के लागत मूल्य से कम होता है। इसलिए सीएसीपी द्वारा मूल्य निर्धारण पद्धति को किसी भी पुराने वर्ष को आधार वर्ष मानकर अन्य वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य में हुई वृद्धि के अनुपात से फसलों के मूल्य तय किए जाएं। दूसरे, सरकार द्वारा यह भी सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है कि बाजारों में उन सभी जिंसों के भाव सरकार द्वारा तय एमएसपी से नीचे न जाने पाएं व खरीद की गारंटी भी सुनिश्चित हो क्योंकि वर्तमान में मात्र छह प्रतिशत फसलों की खरीद ही एमएसपी पर हो पाती है। शेष कृषि जिंसों के भाव बाजार में 10 से 30 प्रतिशत कम हासिल होते हैं। भारत बागवानी फसलों (फल एवं सब्जी) का 28 करोड़ टन से अधिक का उत्पादन कर विश्व का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। लेकिन अभी तक पर्याप्त मात्रा में खाद्य प्रसंस्करण उद्योग एवं प्रौद्योगिकी की कमी के चलते, किसानों को उपभोक्ता खरीद मूल्य का मात्र 20 से 30 प्रतिशत मूल्य ही हासिल हो पाता है।

कृषि बाजार में सुधार की आवश्यकता

भारतीय किसान का जीवन अनिश्चितताओं और मुसीबतों से भरा होता है। बढ़ती लागत, मौसम की मार, कीटों के हमले से अगर उसकी फसल बची हो तो वही उसकी सबसे बड़ी आशा होती है। लेकिन खेतों से बाजारों का सफर भी आसान नहीं है। किसानों की उम्मीदों के उलट आढ़ती, साहूकार, बिचौलिये और सरकारी खरीद केंद्रों का बुनियादी ढांचा शोषणभरा है। उससे किसानों और उपभोक्ताओं के बजाय बिचौलियों का हित ही सध रहा है । भारत सरकार ने वर्ष 2016 में नए सिरे से कृषि मार्केटिंग में आमूलचूल परिवर्तन करने के प्रयास आरंभ किए हैं। एकीकृत राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) द्वारा देश की 585 मंडियों को जोड़े जाने का प्रावधान है। केंद्र सरकार ई–नाम के अंतर्गत प्रत्येक बाजार को 75 लाख रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

मंत्रालय ने 24 अप्रैल, 2017 को एक मॉडल मार्केटिंग अधिनियम जारी किया जिसे ''कृषि उपज और मवेशी विपणन (संवर्धन और सुविधाएं अधिनियम 2017)'' का नाम दिया गया। राज्यों द्वारा अपनाए जाने के बाद यह अधिनियम विविध विपणन चैनल प्रदान करेगा। और एपीएमसी का एकाधिकार समाप्त करेगा। इसका मकसद प्रतिस्पर्धा को बढ़ाना और किसानों को विकल्प प्रदान करना है ताकि वे अपनी उपज के प्रतिस्पर्धात्मक मूल्य का लाभ उठा सकें। ऐसे में कृषि मार्केटिंग व्यवस्था में सुधार से किसानों को मिलने वाली कीमत में वृद्धि हो सकती है। घरेलू मार्केटिंग व्यवस्था को ठीक करने के साथ ही आयात–निर्यात नीति को भी ठीक करने की आवश्यकता है क्योंकि उदारीकरण के बाद नीतियों में आए बदलावों ने देश के किसानों के हितों की अनदेखी की है। इसलिए किसानों की फसल कटाई के समय उन जिंसों का आयात न किया जाए तथा ये भी सुनिश्चित किया जाए कि सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य से नीचे भाव पर आयात न किया जाए। इसके अलावा कृषि निर्यात को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए इससे स्थानीय बाजारों में कृषि जिंसों के मूल्य में गिरावट नहीं आएगी और किसानों को लाभकारी मूल्य मिलते रहेंगे।

फसल उत्पादकता में वृद्धि की संभावनाएं

फसल उत्पादकता की बात करें तो वर्ष 2030 तक भारत की आबादी बढ़कर 150 करोड़ हो जाने का अनुमान है और अनाज

तालिका–1

फसल	उपज (प्रति हेक्टेयर)		
	भारत में	विश्व में औसत उपज	कुछ गिने–चुने देशों में
चावल	3.62 टन	4.53 टन	चीन – 6.74 टन
गेहूं	3.03 टन	3.27 टन	फ्रांस – 7.36 टन
	2.75 टन	5.57 टन	अमेरिका – 10.73 टन
दालें	6.45 क्विंटल	9.06 क्विंटल	कनाडा – 20.30 क्विंटल

की आवश्यकता बढ़कर 35 करोड़ टन पहुंच जाएगी। इसलिए प्रति हेक्टेयर पैदावार बढ़ानी जरुरी है। वर्ष 1950 के मुकाबले भारत में पैदावार के स्तर में काफी सुधार हुआ है। लेकिन अंतर्राष्ट्रीय–स्तर की तुलना में पता चलता है कि देश की प्रमुख फसलों की औसत पैदावार में बढ़ोतरी की व्यापक संभावनाएं हैं। (तालिका–1 देखें) लेकिन खेतों में प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ाने में तीन बातों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है। एक, जलवायु; दूसरा, किसान की शिक्षा का स्तर और तीसरा, निवेश। जलवायु की दृष्टि से भारत 127 कृषि जलवायु ज़ोन वाला क्षेत्र है। विश्व में उपलब्ध 64 प्रकार की मिट्टियों में से 46 प्रकार की मिट्टियां हमारे पास उपलब्ध हैं। पर्याप्त वर्षा जल के अतिरिक्त 445 नदियां जिनकी लंबाई लगभग दो लाख किलोमीटर से अधिक है। हम पानी और जैव विविधता के मामले में दुनिया के सबसे ज्यादा समृद्ध देश हैं। लेकिन कृषि शिक्षा क्षेत्र में भारत बहुत ही पिछड़े देशों में गिना जाता है। भारत में स्नातक पाठ्यक्रमों में 12 प्रतिशत विद्यार्थी विज्ञान–आधारित पाठ्यक्रमों में पंजीकरण कराते हैं जिसमें मात्र 0.65 प्रतिशत विद्यार्थी कृषि विज्ञान में पंजीकरण कराते हैं। ऐसी स्थिति में एक आम किसान की शिक्षा का स्तर कैसा होगा, आसानी से जाना जा सकता है। तीसरा, निवेश–देश के किसान की मासिक औसत आय और औसत मासिक उपभोग खर्च करने के बाद कुछ बचता ही नहीं है जिससे वो गुणवत्ता वाले बीज, उर्वरक, कीटनाशी, उच्च मूल्य वाली फसलें, सिंचाई, कृषि यंत्र और तकनीक पर निवेश कर सके। अगली फसल बोने के लिए किसान बैंकों, सहकारी संस्थाओं तथा भूमिहीन किसान तो केवल साहूकारों से ऊंची ब्याज दर पर कर्ज लेने को मजबूर हैं। दरअसल संभावनाओं और उपलब्धियों में अंतर केवल इसलिए है कि कृषि की अवहेलना हुई है और किसानों के साथ अनुचित व्यवहार हुआ है।

सरकार पैदावार बढ़ाने के लिए प्रत्यक्ष तौर पर उर्वरकों, सिंचाई तथा बिजली पर सीधे सब्सिडी देती है। बैंकों व अन्य संस्थाओं द्वारा सस्ते ऋण अथवा ब्याज दर को कम करके अप्रत्यक्ष रूप से सब्सिडी देकर किसानों की सहायता करती है। अकेले उर्वरकों की सब्सिडी में पिछले दस वर्षों में पांच गुना बढ़ोतरी हुई है। वर्ष 2001–02 में सब्सिडी 12,995 करोड़ रुपये से बढ़कर वर्ष 2014 में 67,971 करोड़ रुपये हो गई। सरकार द्वारा वर्ष 2015–16 के बजट में 73,000 करोड़ रुपये की सब्सिडी का प्रावधान किया जोकि कुल जीडीपी का 0.5 फीसदी है। बैंकों की ब्याज पर भी लगभग 15,000 करोड़ रुपये की सब्सिडी दी जाती है।

सिंचाई में अब तक हुए निवेश के बावजूद आधे से अधिक कृषि क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा नहीं है जिसका सीधा असर असिंचित क्षेत्र के किसानों की आय और पोषण तथा देश की खाद्य सुरक्षा पर पड़ता है। देश के सिंचित कृषि क्षेत्रों में अनाज की औसत पैदावार 4.00 टन प्रति हेक्टेयर है तो वर्षा–आधारित कृषि क्षेत्रों में मात्र 1.2 टन प्रति हेक्टेयर है। सिंचाई के अभाव का प्रभाव अनाजों के अलावा बागवानी और पशुपालन के उत्पादन पर पड़ता है।

कृषि पैदावार बढ़ाने के साथ किसानों की आय तथा कुपोषण दूर करने के लिए भी सिंचाई क्षेत्र में निवेश करने की जरुरत है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012–2017) में छोटी–बड़ी मिलाकर 337 सिंचाई योजनाओं को पूरा करने के लिए लगभग 4.25 करोड़ लाख रुपये की आवश्यकता के बदले मात्र 20,000 करोड़ रुपये वार्षिक ही मिल पाए। सरकार ने बजट 2017–18 में दीर्घकालिक कृषि सिंचाई कोष को 100 प्रतिशत बढ़ाकर 40,000 करोड़ रुपये कर दिया है। तथा ''प्रति बूंद अधिक फसल'' के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 5000 करोड़ रुपये का समर्पित सूक्ष्म सिंचाई कोष बनाया है तथा प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के बजट को बढ़ाकर 7377 करोड़ रुपये किया गया है।

पशुपालन

भारतीय अर्थव्यवस्था में खेती के अलावा पशुपालन का कितना महत्व है यह इसी बात से समझा जा सकता है कि सकल घरेलू कृषि उत्पाद में पशुपालन का 28–30 प्रतिशत तथा किसानों की औसत मासिक आय में 11.9 प्रतिशत का सराहनीय योगदान है। देश में 86 प्रतिशत छोटे और सीमांत किसान हैं जिनके पास कुल भूमि की तीस प्रतिशत जोत है। उसमें 70 प्रतिशत किसान पशुपालन व्यवसाय से जुड़े हैं जिनके पास कुल पशुधन का तकरीबन 80 प्रतिशत भाग मौजूद है। गौरतलब है कि भूमिहीन किसान जिनके पास फसल उगाने और बड़े पशु पालने के सीमित अवसर हैं, उनके लिए छोटे पशु जैसे भेड़, बकरी, सूकर और मुर्गी पालन आदि रोजी–रोटी का साधन और गरीबी से निपटने का एक आधार है। अगर लोगों में पशुपालन के प्रति अभिरूचि बढ़े और सरकार की सकारात्मक पहल का लाभ उठाएं तो निश्चित आय में बढ़ोतरी हो सकती है। केंद्र सरकार ने पिछले दिनों देसी गाय के संरक्षण और संवर्धन के लिए ''राष्ट्रीय गोकुल मिशन'' और ''कामधेनु प्रजनन केंद्रों'' की स्थापना की योजना बनाई है। इससे जलवायु परिवर्तन के मद्देनजर देसी नस्ल के पशुओं का विकास तथा उच्च गुणवत्तायुक्त ए–2 दूध प्राप्त हो सकेगा।

खाद्य प्रसंस्करण

किसानों की आय को दोगुना करने एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को आकर्षक निवेश के काबिल बनाने के लिए खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय द्वारा ''वर्ल्ड फूड इंडिया 2017'' का आयोजन किया गया। इस आयोजन में 60 से अधिक देशों और पूर्वोत्तर के राज्यों सहित 27 राज्यों के पांच हजार से अधिक उद्यमी और कंपनियों ने हिस्सा लिया। मंत्रालय का कहना है कि अगले तीन वर्षों में देश में 65 हजार करोड़ रुपये से अधिक का निवेश और दस लाख से अधिक रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे। इसके साथ ही, भारी मात्रा में बागवानी फसलों की बर्बादी पर भी रोकथाम लग सकेगी। यहां विचारणीय बिंदु यह है कि इससे किसान कच्चा माल पैदा करने वाला ही बना रहेगा और

मूल्यवर्धन का सारा लाभ कंपनियों की जेब में ही जाएगा। दूसरे भौगोलिक परिस्थितियों के फसल पैटर्न के अनुसार खान–पान और स्वाद की विविधता भी समाप्त होती है। लघु और कुटीर उद्योगों में लगे लोगों के सामने बेरोजगारी का संकट उत्पन्न हो जाएगा। खाद्य प्रसंस्करण कंपनियों द्वारा पानी और कोल्ड ड्रिंक्स की बोतलों, दूध की थैलियों, चिप्स, नमकीन आदि की पैकिंग सामग्री में लाखों टन प्लास्टिक का इस्तेमाल होता है जो ज़मीन को बंजर और भूजल को जहरीला बनाने का काम करती है। किसान कच्चा माल पैदा करने के अतिरिक्त को–ऑपरेटिव के माध्यम से मूल्य संवर्धन के काम में लगे तो उसे अतिरिक्त रोजगार और लाभ के अवसर प्राप्त होंगे।

बढ़ती जनसंख्या और छोटी होती जोत

देश में बढ़ती आबादी का कृषि पर बोझ और जोतों का छोटा होता आकार किसान परिवारों के लिए एक अभिशाप बन गया है। भारतीय कृषि परिस्थिति के अनुसार एक किसान परिवार को जीवनयापन के लिए दो हेक्टेयर से कम और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता बनाए रखने की दृष्टि से दस हेक्टेयर से ज्यादा जोत का होना अलाभकारी माना जाता है। जबकि आज देश में लगभग 70 फीसदी जोत एक हेक्टेयर से कम हैं। इसलिए किसानों की आय और उनके रहन–सहन को सम्मानजनक बनाए रखने के लिए जोतों के आकार को बढ़ाना और खेती पर आश्रित आबादी के बोझ को कम करना अति आवश्यक कदम है। इसलिए नीति आयोग ने ''मॉडल एग्रीकल्चर लैंड लीज़िंग एक्ट 2016'' तैयार किया है। सरकार का मानना है इससे खेती पर आबादी का बोझ घटेगा, उत्पादकता बढ़ेगी, समानता को बढ़ावा मिलेगा और गरीबी घटाने में मदद मिलेगी।

निश्चित ही ज़मीन पट्टे पर दिए जाने की व्यवस्था को कानूनी वैधता मिलने से, ज़मीन मालिकों को पट्टे पर दी गई ज़मीन पर मालिकाना हक खोने का डर खत्म होगा, पट्टेदार को भी सरकार द्वारा फसली ऋण, फसल बीमा सहित खेती पर मिलने वाली तमाम सुविधाएं आसानी से मिल सकेंगी। तथा खेती में लगी आबादी नॉन–एग्री सेक्टर की तरफ शिफ्ट हो सकेगी। राष्ट्रीय कौशल विकास परिषद ने भी 2022 तक खेती में कार्यरत 57 फीसदी लोगों की संख्या घटाकर 38 फीसदी करने का लक्ष्य निर्धारित किया है यानी लगभग 20 फीसदी लोगों को गैर–कृषि क्षेत्र में रोजगार की व्यवस्था करनी पड़ेगी।

दरअसल किसानों की आय बढ़ाने के लक्ष्य को पूरा करने के लिए नीति आयोग, नाबार्ड, कृषि वैज्ञानिकों, कृषि अर्थशास्त्रियों और तमाम विशेषज्ञों से प्राप्त सुझावों पर अमल करने से पहले पंजाब की कृषि परिस्थिति और किसानों की दशा और उन सभी कारणों का विश्लेषण करना भी जरुरी है जिनके कारण विश्वस्तरीय पैदावार, सबसे अधिक सिंचाई वाली उपजाऊ ज़मीन, नए बीज, फर्टीलाइजर, पेस्टिसाइड और यंत्रीकरण एवं पशुपालन में भी अग्रणी रहने वाले पंजाब की कृषि परिस्थिति गड़बड़ाती चली गई और किसान समृद्ध होने के बजाय आत्महत्या के कगार पर पहुंच गया है। वहीं दूसरी ओर, वर्षा–आधारित कम उत्पादकता वाले क्षेत्र जहां गरीबी और अभाव तो है लेकिन किसान आत्महत्या जैसी परिस्थितियों से दूर हैं।

पारंपरिक कृषि पद्धतियां कारगर

प्रधानमंत्री द्वारा किसानों की आय दोगुना करने तथा देश को कुपोषण मुक्त करने के संकल्प को पूरा करने के लिए दृष्टिकोण में स्पष्टता और नीतियों में आमूलचूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। कृषि परिस्थितियों में सुधार के लिए स्थानीय कृषि, भौगोलिक क्षेत्र और गांव को केंद्र में रखकर कृषि पद्धति में ऐसे फसल चक्र को अपनाने की आवश्यकता है जो खाद्य सुरक्षा के मामले में आत्मनिर्भर और कुपोषण को दूर करने में सक्षम हो जिससे गांव में होने वाले उपभोग के लिए कुल अनाज, दलहन, तिलहन, शाक–सब्जी, फल, गन्ना (गुड़, शक्कर, राब और खांड आदि), कपड़े के लिए कपास तथा पशुओं के लिए पौष्टिक चारे की आपूर्ति कर, समस्त ग्रामीण आबादी को स्वावलंबन प्रदान करते हुए, बाजारों पर निर्भरता को कम किया जा सके। पारंपरिक कृषि पद्धति के तहत रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों से परे एक प्राकृतिक जैव तंत्र है जिसमें सभी की पोषण व्यवस्था सुनिश्चित है। भूमि में सक्रिय सूक्ष्म जीव, जैविक क्रियाओं के फलस्वरूप भूमि में पड़े अनुपलब्ध पोषक तत्वों को सहज उपलब्ध कराते हैं। अतः प्राकृतिक खेती में पोषक तत्व आसानी से उपलब्ध होते हैं। अब क्योंकि प्राकृतिक खेती में दलहन

आधारित मिश्रित फसल व्यवस्था एक बेहतरीन पद्धति है जो आसान पोषण व्यवस्था के साथ ज़मीन को गहराई तक मुलायम, हवादार बनाए रखने के साथ–साथ उपजाऊ तथा स्वस्थ बनाए रखने में सक्षम है। इसमें मिट्टी में नमी के कारण भूजल की खपत भी आधी रह जाती है। साथ ही, यह पद्धति मौसम में हो रहे बदलावों के असर का मुकाबला करने में पूरी तरह सक्षम है। दरअसल सनातन वैदिक परंपरा आधारित भारतीय कृषि पद्धति दार्शनिक, वैज्ञानिक और व्यावहारिक दृष्टि से परिपक्व है। इसमें प्रकृति–प्रदत्त उन सभी नियमों का सम्मान अथवा पालन किया गया है जिसमें सभी जीवों के पोषण का नियम है। इस पद्धति से प्राप्त भोजन मानव के भौतिक शरीर के साथ–साथ उसके सूक्ष्म शरीर यानी मन और आत्मा को तृप्ति प्रदान करने वाला है।

पारंपरिक कृषि पद्धति द्वारा उर्वरकों और खाद्य सुरक्षा के नाम पर दी जाने वाली सब्सिडी घटेगी और राजकोषीय घाटे में कमी आएगी। इससे स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च में कमी आएगी और महंगाई पर भी काबू पाया जा सकेगा। (सरकारी कोशिशों से इतर किसानों को स्वयं अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए जैविक अथवा उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पादन के अतिरिक्त वैल्यू एडिशन यानी मूल्यवर्धन और मार्केटिंग नेटवर्क बनाने की आवश्यकता है।) मैं कई किसानों, किसान उत्पादक संगठन, सहकारी संस्थाओं और गैर–सरकारी संस्थाओं को जानता हूं जिन्होंने अपनी आर्थिक स्थिति, भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार आमदनी बढ़ाने के लिहाज से खेतीबाड़ी में नवाचार, मूल्यवर्धन और ग्रामीण एवं शहरी उपभोक्ताओं से सीधे खरीद–फरोख्त के लिए स्थानीय वितरण प्रणाली विकसित की है।

सेहरा गांव (बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश) के जयवीर सिंह (एमएससी एग्रीकल्चर) पढ़े–लिखे, सूझबूझ संपन्न किसान हैं। उन्होंने खेती में लगने वाली लागत को आधा किया है। मिट्टी की उर्वराशक्ति को बढ़ाया है तथा पानी की खपत को भी आधा किया है। क्रॉप प्लानिंग यानी कितने रकबे में किस फसल की बुवाई की जाए, इंटर क्रॉपिंग यानी मिश्रित खेती द्वारा कई फसलों के उत्पादन के साथ–साथ खेती के जोखिम को भी कम किया है। इन्होंने सामान्य के मुकाबले भी प्रति हेक्टेयर उत्पादन डेढ़ गुना तक बढ़ाकर लिया है। इनकी खासियत यह है कि ये अपने आसपास के किसानों को भी प्रशिक्षण दे रहे हैं।

कनेरी मठ (कोल्हापुर महाराष्ट्र) के श्री अदृश्य कांड सिद्धेश्वर स्वामी जी ने एक एकड़ में गोवंश आधारित लखटकिया खेती का अद्भुत मॉडल विकसित किया है। जोर की ढाणी गोधाम (कटराथल सीकर, राजस्थान) के कानसिंह निर्वाण प्राकृतिक खेती के साथ–साथ ग्रामीण टूरिज्म को भी बढ़ावा देने का काम कर रहे हैं। कामधेनु गौशाला नूरमहल, पंजाब ने भी देसी गौवंश की नस्ल सुधार के साथ–साथ प्राकृतिक खेती में भी अनोखे प्रयोग किए हैं। वृंदावन थारपारकर क्लब, पुणे ने जैविक खेती के साथ देसी थारपारकर गायों की नस्ल में सुधार एवं गोबर और गोमूत्र से अंतर्राष्ट्रीय मानकों पर खरे उतरने वाले उत्पाद ही नहीं बनाए बल्कि पंचगव्य चिकित्सा के लिए केंद्र भी खड़ा कर दिया है। देश के जाने–माने राजनीतिज्ञ और समाजसेवी स्वर्गीय मोहन धारिया जी द्वारा वनराई संस्था, पुणे ने भी ग्रामीण विकास के क्षेत्र में सफल प्रयोग किए हैं। वाराणसी के जयप्रकाश सिंह अधिक पैदावार देने वाले बीजों की वरायटी तैयार कर आमदनी बढ़ाने के साथ–साथ लोगों को रोजगार की नई राह दिखा रहे हैं। कर्नाटक के मंडिया के पढ़े–लिखे सैयद गनी खान धान की देसी वरायटी के साथ फल–सब्जी और मसालों की खेती कर जैव विविधता का संरक्षण और संवर्धन करने में योगदान कर रहे हैं। खेती विरासत (पंजाब) के उमेंद्र दत्त, पश्चिम बंगाल के अनुपम पॉल, ओडिशा के देव बलदेव सहित देश में अनेक उदाहरण हैं जो अन्य किसानों के साथ–साथ सरकार के लिए भी रोडमैप का काम कर सकते हैं।

निष्कर्ष

शासन व्यवस्था में निजी व सामाजिक जीवन जीने का तरीका शामिल होता है जिसमें कुछ बातें बहुत जरूरी हैं। इसमें जहां छोटे से लेकर बड़े स्तर तक जनसाधारण से जुड़े फैसलों में लोगों की भागीदारी हो, वहीं ऊपर से नीचे की तरफ लगातार चलने वाली जवाबदेही की व्यवस्था होनी चाहिए तथा राष्ट्रीय संसाधनों और विकास के फलों के बंटवारे की दिशा नीचे से ऊपर की ओर होनी चाहिए। हमें किसानों को केंद्र में रखकर उनके और कृषि क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के बारे में सोचना है। अगर किसान की आय दोगुना करने के लिए सारा ध्यान पूरे देश को एक बड़े बाजार का तंत्र विकसित करने में लगाया जाता रहा तो हम वही गलती करेंगे जो हरितक्रांति के समय हुई। हरितक्रांति का लाभ उद्योगों, कृषि क्षेत्र की बड़ी व्यापारिक कंपनियों और बड़े किसानों को मुख्यतः इसी क्रम में हुआ और उससे कृषि विविधता समाप्त हुई, मोनोक्रॉपिंग बढ़ी। इससे आम भारतीय लोगों के भोजन की गुणवत्ता में काफी गिरावट आई है। पूरे देश को सबसे पहले एक बड़ा बाजार बनाने की उतावली हमें इसी दिशा में ले जाएगी। यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि हमारा तंत्र ऊपर से नीचे की ओर नहीं बल्कि नीचे से ऊपर की ओर विकसित होना चाहिए। सबसे पहले गांव का, फिर कस्बों को केंद्र बनाकर ग्राम समूह का, फिर जनपद का, उसके बाद प्रांत का और इसके ऊपर देश का तंत्र विकसित होना चाहिए। मजबूत गांव ही मजबूत राष्ट्र बना सकते हैं। गांव का तंत्र अविकसित रहेगा तो राष्ट्रीय तंत्र उनका शोषण ही करेगा। हमें कृषि को ऐसा बनाना है कि उसमें हमारे सबसे कुशल और प्रतिभावान लोग भी अच्छे, प्राकृतिक और समृद्ध जीवन की झलक पा सकें। कृषि फिर से उत्तम व्यवसाय हो जाए और समाज में किसानों की इज्जत पहले की तरह ऊंची हो।

(लेखक दूरदर्शन किसान चैनल में संस्थापक सलाहकार रह चुके हैं।)
ई–मेल : nnareshsirohi@gmail.com

सदाबहार क्रांति का लक्ष्य

–सुरिंदर सूद

हरितक्रांति को तब तक अधूरा माना जाना चाहिए, जब तक यह उस सर्वांगीण और सर्वव्यापी सदाबहार क्रांति में नहीं बदल जाती, जो भरपूर उपज देगी और गांवों में संपन्नता लाएगी। इसके लिए कई मोर्चों पर एक साथ काम करना होगा और केवल कुछ उत्पादों तक सीमित होकर नहीं बैठना होगा। हरितक्रांति को सदाबहार क्रांति में बदलने का मुख्य उद्देश्य इसे कम से कम अस्वास्थ्यकर परिणामों के साथ सभी फसलों तथा सभी क्षेत्रों में फैलाना है।

सदाबहार क्रांति की अवधारणा वास्तव में 1960 के दशक की उस हरितक्रांति की ही अगली कड़ी है, जिसने देश को खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर बनाया था और खाद्य सहायता तथा अन्न आयात पर इसकी खतरनाक निर्भरता समाप्त कर दी थी। फसलों की अधिक उपज देने वाली प्रजातियों से आई यह क्रांति पूरी तरह वरदान साबित नहीं हुई क्योंकि इनके लिए पानी, उर्वरकों तथा पौधों की रक्षा करने वाले रसायनों का अधिक इस्तेमाल करना पड़ता है। इससे फसलचक्र में गड़बड़ी भी हुई और कुछ अनचाहे पारिस्थितिकी दुष्प्रभाव झेलने पड़े, जैसे मिट्टी और पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों का क्षय, नई तरह के कीट, रोग और खरपतवार पैदा होना आदि। किंतु इससे लाभ अधिक हुए और दुष्प्रभाव कम हुए, जिसके कारण इसे ऐसी शाश्वत या सदाबहार क्रांति के रूप में चलाते रहने की जरूरत महसूस की जा रही है, जिसके हानिकारक प्रभाव नहीं हों। इसीलिए हरितक्रांति को सदाबहार क्रांति में बदलने का मुख्य उद्देश्य इसे कम से कम अस्वास्थ्यकर परिणामों के साथ सभी फसलों तथा सभी क्षेत्रों में फैलाना है।

कृषि तथा उससे जुड़े क्षेत्रों के सभी पहलुओं को समेटने वाली और पूरे देश में फैलने वाली ऐसी पर्यावरण के अनुकूल तथा प्राकृतिक संसाधनों के साथ तालमेल वाली सदाबहार क्रांति को अपरिहार्य मानने के पीछे कुछ अन्य कारण भी हैं। कुछ फसलों के उत्पादन तथा प्रति हेक्टेयर उपज में जबर्दस्त प्रगति के बावजूद भारतीय कृषि की कुल उत्पादकता कृषि के मामले में उन्नत कई अन्य देशों के मुकाबले कम ही है। इसके अलावा, भारतीय कृषि अब भी मानसून पर बहुत अधिक निर्भर है। जलवायु परिवर्तन के कारण अक्सर होने वाली मौसम की तीव्र गतिविधियों तथा प्राकृतिक आपदाओं से निपटने की क्षमता इस क्षेत्र में बहुत कम है। फसली भूमि को बढ़ाने की संभावना लगभग खत्म हो गई है। जोत छोटी होती जा रही हैं और उनके टुकड़े होते जा रहे हैं, जिससे खेती की व्यवहार्यता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। कुछ अक्षमताओं का खामियाजा कृषि विपणन को भुगतना पड़ रहा है। विपणन तंत्र न तो पर्याप्त है और न ही इतना सक्षम है कि उससे किसानों को उनकी उपज का उचित प्रतिफल सुनिश्चित किया जा सके। साथ ही गांवों में श्रम बहुत कम और महंगा होता जा रहा है। ये सभी कारण मिलकर खेती की दुर्गति कर रहे हैं, जिसका नतीजा किसानों की आत्महत्या और दूर–दूर तक फैले ग्रामीण असंतोष

के रूप में दिख जाता है, जो कभी–कभी हिंसक रूप भी धारण कर लेता है। इसीलिए हरितक्रांति को तब तक अधूरा माना जाना चाहिए, जब तक यह उस सर्वांगीण और सर्वव्यापी सदाबहार क्रांति में नहीं बदल जाती, जो भरपूर उपज देगी और गांवों में संपन्नता लाएगी। इसके लिए कई मोर्चों पर एक साथ काम करना होगा और केवल कुछ उत्पादों तक सीमित होकर नहीं बैठना होगा।

हरितक्रांति की अगुआई करने वाले प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन ने ही सबसे पहले चेतावनी दी थी कि अधिक उपज देने वाली फसल उत्पादन तकनीक के कितने प्रतिकूल प्रभाव हो सकते हैं। इसे पर्यावरण के लिए अनुकूल तथा सतत सदाबहार क्रांति में बदलने की जरूरत भी उन्होंने ही बताई थी। वर्ष 1968 में भारतीय विज्ञान कांग्रेस में अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ. स्वामीनाथन ने अल्पकालिक लाभ के लिए शोषणकारी खेती करने के खिलाफ चेतावनी दी थी। उन्होंने रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों के अत्यधिक इस्तेमाल तथा निकासी की उचित व्यवस्था के बगैर भूजल से अत्यधिक सिंचाई से मिट्टी की भौतिक एवं रासायनिक सेहत पर पड़ने वाले हानिकारक असर का विशेष तौर पर जिक्र किया था। उन्होंने मिट्टी तथा पौधों के स्वास्थ्य प्रबंधन के वैज्ञानिक सिद्धांतों पर टिके रहने की सलाह दी थी ताकि बढ़ी हुई उत्पादकता के लाभ लंबे समय तक बरकरार रखे जा सकें। इसीलिए कम ज़मीन पर कम पानी और किफायती सामग्री के साथ अधिक फसल उपजाने की आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण को खेती पर निर्भर रहने वाली भारी–भरकम आबादी की आजीविका सुरक्षित रखने के लिए ही नहीं बल्कि हरितक्रांति को बरकरार रखने के लिए पारिस्थितिकी जांच भी करने के लिए आवश्यक माना जाता है। इसलिए डॉ. स्वामीनाथन का सदाबहार क्रांति का आधार पर्यावरण को नुकसान पहुंचाए बगैर ज़मीन तथा उपज में वृद्धि बनाए रखने पर टिक जाता है।

प्रधानमंत्री भी पहली हरितक्रांति और दूसरी हरितक्रांति के बजाय सदाबहार क्रांति की आवश्यकता पर जोर देते आए हैं। वह सदाबहार क्रांति की अपनी अवधारणा बताने का कोई भी मौका नहीं चूकते, जो कम भूमि और कम पानी के प्रयोग तथा कम से कम लागत में अधिक उत्पादन करने पर केंद्रित है। कृषि की पारंपरिक प्रणालियों को खेती के आधुनिक तथा वैज्ञानिक तरीकों के साथ मिलाकर ऐसा संभव हो सकता है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग पूरी तरह आवश्यकता पर ही आधारित हो और उसका निर्धारण फसल तथा भूमि की उर्वरता से ही हो। उर्वरकों के स्थान पर जैविक खाद का प्रयोग करने से मिट्टी की भौतिक, रासायनिक सेहत बनी रहेगी और उसमें सूक्ष्म जीव भी मौजूद रहेंगे। "मोर क्रॉप पर ड्रॉप" (प्रत्येक बूंद में अधिक फसल) ही सदाबहार क्रांति के लिए उनका मंत्र है। वह खाद्य सुरक्षा के विचार को पोषण सुरक्षा तक भी ले जाना चाहते हैं ताकि कुपोषण से लड़ा जा सके।

हमारे प्रधानमंत्री की एक सलाह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है और वह है औद्योगिक क्लस्टरों की तर्ज पर कृषि क्लस्टरों का निर्माण। कृषि जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप खास फसलों को उगाने के लिए अलग–अलग क्षेत्र चिह्नित किए जा सकते हैं। इससे विभिन्न फसलों की जरूरत के मुताबिक ढुलाई, भंडारण और प्रसंस्करण की सुविधाएं तैयार करने में मदद मिलेगी।

सरकारी विचार समूह नीति आयोग ने यह बात महसूस की है कि 1991 में आरंभ हुए आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया में कृषि क्षेत्र को हाशिये पर ही डाल दिया गया है। इसकी भरपाई के लिए आयोग सदाबहार क्रांति के जरिए किसानों की आय बढ़ाने की रणनीतियां तैयार करने में जुटा है। वह नियमित रूप से ऐसे उपाय पेश कर रहा है, जो खेती को सुधार कर टिकाऊ और लुभावना कार्य बनाने में मदद कर सकते हैं, जिससे कृषि देश के समग्र आर्थिक विकास में योगदान कर पाएगी। नीतिगत उपायों, कार्यपत्रों और अन्य दस्तावेजों के जरिए नीति आयोग द्वारा सुझाए गए उपायों का मुख्य लक्ष्य कृषि की लाभदेयता को बहाल करना है, जो सदाबहार क्रांति की पहली सीढ़ी होगी।

इसीलिए नीति आयोग ने कृषि के विकास के लिए बहुआयामी कार्यसूची तैयार की है। इसमें फसलों की उत्पादकता बढ़ाना, पशुओं का उत्पादन बढ़ाना, लागत कम करने के लिए

सामग्री के उपयोग को अधिक प्रभावी बनाना, भूमि के एक ही टुकड़े से और पानी के कम से कम इस्तेमाल और रसायनों के समझदारी भरे उपयोग से अधिकाधिक फसल उपजाकर फसल की गहनता बढ़ाना, कृषि में विविधता लाकर अधिक कीमत वाली फसलें उगाना, किसानों को अधिक कीमत दिलाना, कृषि जोत से होने वाली आय के साथ ही गैर–कृषि ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अतिरिक्त मौके सृजित करना और सुधारों पर केंद्रित कई अन्य उपाय करना आदि शामिल हैं। कृषि विपणन में मौजूदा सुधारों को और आगे ले जाने पर विशेष जोर दिया जा रहा है ताकि ग्रामीण बाजार तथा कोल्ड चेन समेत खेती से जुड़ी बुनियादी ढांचागत सुविधाएं तैयार करने के लिए निजी क्षेत्र के निवेश को बढ़ावा दिया जा सके और उसमें मदद की जा सके।

एक दस्तावेज में नीति आयोग ने कृषि के ऐसे पांच व्यापक पहलू छांटे हैं, जिन पर लाखों कृषक परिवारों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए तुरंत ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। ये ऐसे बुनियादी मसले हैं, जिन पर सदाबहार क्रांति की आधारशिला रखने के लिए ध्यान देना ही पड़ेगा।

पहला बिंदु कृषि उपक्रमों में प्रति हेक्टेयर उपज के लिहाज से उत्पादकता बढ़ाने की बात करता है। हरितक्रांति के बाद तेज बढ़ोतरी होने के बाद भी वर्तमान औसत उत्पादकता कई अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। देश के भीतर ही अलग–अलग क्षेत्रों में फसलों की उपज में काफी अंतर है। इन समस्याओं को दूर करना सदाबहार क्रांति की बुनियाद रखने में बहुत मदद कर सकता है। इसके लिए नई किफायती तकनीकों का विकास करना होगा और उन्हें गरीब किसानों तक पहुंचाना होगा। साथ ही उनका इस्तेमाल करने के लिए किसानों को वित्तीय रूप से सक्षम भी बनाना होगा।

दूसरा बिंदु यह है कि फिलहाल अधिकतर किसानों को फसलों का लाभकारी मूल्य हासिल नहीं होता है क्योंकि देश के विभिन्न हिस्सों में कृषक समुदायों तक न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) की प्रणाली ठीक से नहीं पहुंची है। मूल्य संबंधी सहायता प्रदान करने के लिए खरीद के जरिए बाजार हस्तक्षेप की व्यवस्था 1960 के दशक के मध्य से ही है, लेकिन अब भी यह गेहूं, चावल और कभी–कभार कुछ अन्य फसलों तक ही सीमित है और मुट्ठी भर राज्यों में ही है। बाकी स्थानों पर कृषि विपणन का मौजूदा नेटवर्क बेहद अपर्याप्त, अप्रभावी और अपारदर्शी है। असली उत्पादकों को यह अंतिम कीमत का मामूली हिस्सा ही दिला पाता है। उत्पादकों को मिलने वाली कीमत और ग्राहकों द्वारा चुकाई जाने वाली कीमत में भारी अंतर इसका सबूत है। स्पष्ट है कि ग्राहकों द्वारा खर्च की जा रही रकम का बड़ा हिस्सा बाजार श्रृंखला में भारी संख्या में मौजूद बिचौलिये ले जाते हैं।

तीसरी बात, अधिकतर कृषक परिवारों के पास मौजूद जोतों का आकार घटकर अलाभकारी–स्तर पर पहुंच गया है, जिससे किसानों को खेती छोड़ने और दूसरी जगहों पर नौकरी तलाशने के लिए मजबूर होना पड़ रहा है। 85 प्रतिशत से अधिक कृषि जोतों का आकार 1.5 हेक्टेयर से कम है। उनमें से कई आर्थिक रूप से फायदेमंद नहीं बची हैं। चूंकि भूमि को पट्टे पर देने की वर्तमान व्यवस्था को अधिकतर राज्यों में कानूनी मान्यता नहीं मिली है और भूस्वामी खेती के लिए अपनी ज़मीन किसी और को देने में खतरा मानते हैं, इसीलिए उपजाऊ ज़मीन का बड़ा हिस्सा बिना खेती के पड़ा है। इसीलिए मालिकाना हक गंवाने के डर के बिना ही भूमि पट्टे पर देने को कानूनी मान्यता प्रदान करने के लिए पट्टा कानूनों में संशोधन किया जाए तो खेती के लिए कृषि जोतों को एक साथ मिलाने और खेती में नया निवेश आकर्षित करने में मदद मिल सकती है। इससे ऐसी ज़मीन पर भी खेती हो सकती है, जिसके मालिक मौजूद ही नहीं हैं और जो खेती के बगैर बेकार पड़ी है। उससे भी अहम बात यह है कि इससे पट्टे पर खेती करने वालों को भी कर्ज और सरकारी कार्यक्रमों के अन्य लाभ हासिल हो पाएंगे।

चौथा बिंदु यह है कि प्राकृतिक आपदा आने पर किसानों को राहत और मुआवजे के वर्तमान उपाय पर्याप्त नहीं हैं, उनमें प्रक्रियागत खामियां हैं और देर भी लगती है। जोखिम से निपटने के उपाय भी खराब तरीके से लागू किए जाते हैं और कारगर साबित नहीं हुए हैं। इस स्थिति में सुधार की जरूरत है।

पांचवीं बात, पूर्वी क्षेत्र की कृषि संबंधी संभावनाओं का बहुत कम दोहन किया गया है। इस क्षेत्र की कृषि जलवायु परिस्थितियों के कई उत्पाद उपजाए जा सकते हैं। इस क्षमता का भरपूर इस्तेमाल करने की आवश्यकता है। इसके लिए ग्रामीण संपर्क, परिवहन, भंडारण और विपणन के साथ–साथ संस्थागत सहायता और तकनीकी नवाचारों में निवेश की जरूरत भी होगी।

इन प्रमुख आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए नीति आयोग ने कम से कम तीन क्षेत्रों के लिए विस्तृत कार्ययोजना तैयार कर ली हैं, जो किसानों की आय दोगुनी करने और सदाबहार क्रांति लाने की समग्र कार्ययोजना का हिस्सा बन सकती हैं। सबसे पहले तो आयोग ने दलहन उत्पादन बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अभियान को अधिक कारगर बनाने का प्रस्ताव रखा है क्योंकि लाखों लोगों के लिए प्रोटीन का प्रमुख स्रोत होने के बावजूद घरेलू आवश्यकता पूरी करने के लिए बड़ी मात्रा में दालों का आयात करना पड़ता है। यह अभियान अधिकाधिक उपज के लिए पहले ही कई योजनाएं चला रहा है, जिनमें दलहन उपजाने के बेहतर तरीकों को बढ़ावा देने के लिए क्लस्टर–स्तर पर प्रदर्शन शामिल है। अधिक उपज देने वाली दलहन प्रजातियों के बीजों की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने के इसके हालिया कदम दालों की उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाने तथा देश को भोजन एवं पोषण सुरक्षा के इस महत्वपूर्ण घटक के मामले में आत्मनिर्भर बनाने में बहुत मदद कर सकते हैं। इस मामले में आत्मनिर्भर बनना

तरीके से बढ़ाने के लिए ऑनलाइन कारोबार तथा एक बाजार से दूसरे बाजार में होने वाले सौदों को एक साथ मिलाना शामिल है। साथ ही इसमें पंचायत–स्तर पर बीज उत्पादन तथा प्रसंस्करण इकाइयां स्थापित करने का प्रावधान भी है ताकि किसानों के लिए अधिक उपज देने वाली एवं रोग तथा कीटाणुमुक्त प्रजातियों के बेहतरीन बीज तैयार किए जा सकें। इस योजना का एक अच्छा पहलू चावल की करीब 10 लाख हेक्टेयर ऊसर भूमि का इस्तेमाल दलहन और तिलहन उत्पादन के लिए करना है। यह भूमि बरसात वाले धान की कटाई के बाद बिना जुताई के पड़ी रहती है।

कृषि मंत्रालय की कार्ययोजना एक कदम और आगे जाकर कृषि से जुड़ी सहयोगी गतिविधियों को बढ़ावा देने की बात कहती है, जो कृषि आय में किसी भी तरह की कमी की भरपाई कर सकती हैं और खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को सशक्त बनाने में योगदान कर सकती है। इसके लिए कार्ययोजना में मत्स्य पालन को लोकप्रिय बनाने के साथ ही देसी नस्लों की गाय–भैंसों के पालन को बढ़ावा देने पर जोर दिया गया है क्योंकि ये नस्लें इतनी मजबूत हैं कि जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का सामना आसानी से कर सकती हैं। गहरे समुद्र में मछली के शिकार को भी बढ़ावा देने की बात है ताकि घरेलू खपत और निर्यात के लिए मछलियों के उत्पादन तथा उपलब्धता में इजाफा हो सके। मंत्रालय को भरोसा है कि ऐसे कदमों से देश सदाबहार क्रांति की ओर बढ़ेगा और ग्रामीण इलाकों में अधिक आर्थिक कल्याण होगा।

हरितक्रांति को सदाबहार या हमेशा रहने वाली क्रांति में बदलने के प्रयासों की सफलता बहुत हद तक इस बात पर टिकी है कि प्रस्तावित कार्यक्रमों और योजनाओं का क्रियान्वयन कितनी अच्छी तरह से किया जाता है। इस बात के संकेत पहले से मिल रहे हैं कि कृषि विकास में उत्पादन की बजाय आय पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है, जिसके लिए खेत से लेकर खाने की मेज तक कृषि विकास श्रृंखला की सभी कड़ियों पर पैनी नजर रखनी होगी। इसीलिए हरितक्रांति को सदाबहार क्रांति में तब्दील करना है तो खेती से जुड़े हरेक काम में तकनीक से हासिल होने वाले सिद्धांतों को मूलमंत्र बनाना होगा।

सदाबहार क्रांति का महत्वपूर्ण उद्देश्य भी है। बीजों, विशेषकर किसानों द्वारा खुद उगाए और संजोए गए बीजों की गुणवत्ता सुधारने के लिए सरकार पहले ही बीज ग्राम कार्यक्रम चला रही है। इसके तहत छोटे और सीमांत भूस्वामियों को दलहन, तिलहन और पशु चारे जैसी विभिन्न फसलों के प्रमाणित बीजों के लिए बतौर वित्तीय सहायता 50 से 75 प्रतिशत सब्सिडी दी जाती है।

कृषि उत्पादों की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करने और पहले से तय कीमतों पर उनकी खरीदारी करने के महत्वपूर्ण कदम के रूप में नीति आयोग ने राज्य सरकारों के लिए आदर्श अनुबंध खेती अधिनियम तैयार करने में कृषि मंत्रालय की मदद की है। यदि राज्य ठेके पर खेती के अपने कानून भी केंद्र के आदर्श अधिनियम की तर्ज पर ही बनाते हैं तो इससे खेती की इस व्यवस्था को लोकप्रिय बनाने में मदद मिल सकती है, जो विभिन्न फसलों के उत्पादकों और अंतिम उपभोक्ताओं के बीच सीधी कड़ी तैयार करने में मदद करेगी। बिचौलिए खत्म हुए और उपज को सामान्य मंडियों में ही बेचने की बाध्यता समाप्त हुई तो बाजार शुल्क समेत विपणन के खर्च में बहुत कमी आ सकती है, जिसका फायदा उत्पादक और उपभोक्ता दोनों को मिलेगा।

दूसरी ओर, कृषि एवं कृषक कल्याण मंत्रालय ने भी सदाबहार क्रांति के युग में प्रवेश करने और 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने के लिए खाका तैयार कर लिया है। इस योजना के अंतर्गत सोचे गए नए उपायों में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए अत्याधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करना, कृषि में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के लाभ उठाने के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम आरंभ करना और किसानों को मिलने वाली कीमत प्रभावी तथा पारदर्शी

(लेखक वरिष्ठ कृषि पत्रकार हैं और इस समय बिजनेस स्टैंडर्ड में सलाहकार संपादक के रूप में कार्यरत हैं।)
ई–मेल : surinder.sud@gmail.com

राष्ट्रीय कृषि बाज़ार
एक राष्ट्र-एक बाज़ार

–सुभाष शर्मा

मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति ने एग्रिटेक इंफ्रास्ट्रक्चर फंड (एटीआईएफ) के माध्यम से राष्ट्रीय कृषि बाज़ार को बढ़ावा देने के लिए केंद्रीय क्षेत्र की एक योजना को पहली जुलाई 2015 को स्वीकृति प्रदान कर दी थी जिसे 2015–16 से 2017–18 के दौरान लागू किया जा रहा है। इस योजना को कृषि, सहकारिता और किसान कल्याण विभाग के स्माल फार्मर्स एग्रिबिजनेस कंसोर्टियम द्वारा चलाया जा रहा है जिसके लिए एक साझा इलेक्ट्रॉनिक प्लेटफार्म बनाया गया है जिसे देशभर के चुने हुए विनियमित बाजारों में लागू किया जा सकता है।

रोजगार और आय सृजन की दृष्टि से कृषि क्षेत्र अब भी भारतीय अर्थव्यवस्था का अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र बना हुआ है। भारत की अधिकांश जनसंख्या कृषि और इससे जुड़े क्षेत्रों में काम में लगी है। भारत सरकार किसानों के कल्याण के लिए वचनबद्ध है और इसके लिए वर्ष 2016–17 के बजट में देश के किसानों की आमदनी 2021–22 तक दुगुनी करने की स्पष्ट घोषणा भी की गई थी। कृषि मूलतः राज्यों का विषय है, लेकिन भारत सरकार का मानना है कि इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए केंद्र और राज्यों को मिलकर काम करना होगा।

1960 के दशक में हरितक्रांति अभियान की शुरुआत से भारत ने कृषि क्षेत्र में अच्छी प्रगति की है और खाद्य सुरक्षा का लक्ष्य प्राप्त किया है। यह मुख्य रूप से कृषि उत्पादन के क्षेत्र में नई टेक्नोलॉजी अपनाने से संभव हो पाया है। अब वक्त आ गया है कि उत्पादन के बाद की गतिविधियों से संबंधित मुद्दों पर ध्यान दिया जाए जिनमें खाद्य प्रसंस्करण और विपणन भी शामिल हैं।

कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय का मानना है कि भारत की कृषि में बदलाव के अगले चरण में कृषि विपणन प्रणाली में सुधार की आवश्यकता होगी। अगर किसानों को उनकी उपज के लिए फायदेमंद दाम दिलाने हैं तो देश की वर्तमान कृषि विपणन प्रणाली में सुधार करने ही होंगे।

फसल कटाई के बाद का कृषि प्रबंधन और कृषि विपणन अर्थव्यवस्था में हुए बदलावों के अनुसार परिवर्तित नहीं हुए हैं, खासतौर पर एक कुशल सप्लाई–चेन यानी आपूर्ति–श्रृंखला कायम नहीं हो पाई है। इसलिए हमारे सामने नई चुनौती है कि किस तरह बेचे जा सकने योग्य कृषि पदार्थों के लिए कुशल बाजार खोजा जाए। हमारी कृषि विपणन प्रणाली के कई पहलुओं को लेकर गंभीर चिंताएं व्यक्त की जाती रही हैं। पहली चिंता तो यही है कि कृषि विपणन गतिविधियों का प्रशासन राज्यों द्वारा अपने–अपने कृषि विपणन विनियमों के तहत किया जाता है जिसमें किसी राज्य को बाजार क्षेत्रों में बांट दिया जाता है जिसमें से प्रत्येक अलग कृषि उपज विपणन समिति (एपीएमसी) होती है जो अपने बनाए विपणन संबंधी कायदे–कानून (इसमें शुल्क भी शामिल हैं) थोप देती है। नतीजा यह होता है कि किसी राज्य के भीतर ही अलग–अलग बाजार होने से एक बाजार क्षेत्र से दूसरे बाजार को कृषि जिंसों का मुक्त आवागमन नहीं हो पाता। कृषि उत्पादों की कई जगह उठा–पटक होती है और कई स्तरों पर मंडी शुल्क देना होता है। इससे एक ओर तो उपभोक्ताओं के लिए दाम बढ़ जाते हैं और दूसरी ओर किसानों को उसी अनुपात में फायदा नहीं होता। इसलिए राज्यों और केंद्र दोनों ही स्तरों पर बाजारों को एकीकृत करने की आवश्यकता वक्त की पुकार है। इन सुधारों

के बल पर एक अखिल भारतीय ऑनलाइन व्यापार मंच से, जहां बाजार में एकरूपता आएगी, वहीं एकीकृत बाजारों में प्रक्रियाओं को चुस्त–दुरुस्त किया जा सकेगा। खरीदारों और विक्रेताओं के बीच सूचनाओं को लेकर तालमेल का अभाव दूर होगा और वास्तविक मांग व आपूर्ति के आधार पर कीमतों की तत्काल यथातथ्य जानकारी मिल सकेगी। इससे कृषि मंडियों में नीलामी प्रक्रिया में पारदर्शिता आएगी और राष्ट्रव्यापी बाजार तक किसानों की पहुंच आसान हो जाएगी। किसानों को अपने उत्पादों की गुणवत्ता के अनुसार उचित मूल्य मिलेगा और बेहतरीन किस्म के उत्पाद उपभोक्ताओं को मिलने लगेंगे। इससे ऑनलाइन भुगतान की सुविधा भी उपलब्ध हो जाएगी और उपभोक्ताओं को बेहतरीन किस्म के उत्पाद अधिक वाजिब दामों पर मिलने लगेंगे।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (एनएएम) अखिल भारतीय इलैक्ट्रॉनिक व्यापार पोर्टल है जिसका उद्देश्य मौजूदा कृषि उपज विपणन कमेटियों तथा अन्य बाजारों को आपस में जोड़ना है ताकि कृषि जिंसों के लिए एकीकृत राष्ट्रीय बाजार का निर्माण हो। हालांकि राष्ट्रीय कृषि बाजार एक वर्चुअल यानी आभासी बाजार है मगर इसके पीछे मंडी के रूप में एक भौतिक बाजार भी अस्तित्व में रहता है। 'नाम' पोर्टल एपीएमसी से संबंधित तमाम सूचनाओं और सेवाओं के लिए एकल खिड़की सेवा उपलब्ध कराएगा। अन्य सेवाओं के अलावा इनमें जिंसों की आवक और दाम, लिवाली और बिकवाली संबंधी बोलियां और बोलियों के आधार पर खरीदारी के लिए इंतजाम भी शामिल हैं। हालांकि जिंसों का प्रवाह (खेती के उत्पाद) मंडियों के जरिए ही होगा, मगर ऑनलाइन बाजार बन जाने से लेन–देन की लागत कम होगी और बाजार संबंधी सूचनाओं में असंतुलन भी दूर होगा।

अनिवार्य विपणन सुधारों की स्थिति

स्थिति	राज्य/केंद्रशासित प्रदेश
ऐसे राज्य जिन्होंने अनिवार्य सुधार कर लिए हैं और जो ई–नाम में शामिल हो चुके हैं।	आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, तमिलनाडु (15)
ऐसे राज्य जिन्होंने सुधार तो कर लिए हैं मगर जो ई–नाम में शामिल नहीं हुए हैं।	कर्नाटक और गोवा (2)
वे राज्य जिन्होंने ई–नाम में शामिल होने के लिए प्रस्ताव भेजे हैं और जहां सुधार प्रक्रिया जारी है।	चंडीगढ़ और पुडुचेरी तथा पश्चिम बंगाल (3)
ऐसे राज्य/केंद्रशासित प्रदेश जहां ई–नाम में शामिल होने के लिए अनिवार्य सुधार अभी करने वाकी हैं।	अरुणाचल प्रदेश, दिल्ली, मेघालय, असम, मिजोरम, नगालैंड और त्रिपुरा (7)
ऐसे राज्य जिनमें एपीएमसी अधिनियम काम नहीं कर रहा है।	सिक्किम और जम्मू–कश्मीर (2)
ऐसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश जिनमें एपीएमसी अधिनियम नहीं है।	बिहार, केरल, मणिपुर, अंडमान निकोबार, दमन और दीव, दादरा और नगर हवेली तथा लक्षद्वीप (7)

योजना का खाका

देश में कृषि विपणन प्रणाली में सुधार और किसानों/उत्पादकों की बाजार तक पहुंच बढ़ाने के उद्देश्य से राष्ट्रीय कृषि बाजार (एनएएम) की परिकल्पना की गई थी और मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति ने इसे 1 जुलाई, 2015 को स्वीकृति प्रदान की थी। योजना के तहत पहले चरण में ई–प्लेटफार्म में शामिल होने के इच्छुक राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों की 585 चुनी हुई विनियमित थोक मंडियों को जोड़ने वाले उपयुक्त साझा ई–मार्केट प्लेटफार्म की स्थापना करना है। स्मॉल फार्मर्स एग्रिबिजनेस कन्सोर्टियम (एसएफएसी) राष्ट्रीय ई–प्लेटफार्म को लागू करने वाली एजेंसी है। कृषि, सहकारिता और किसान कल्याण विभाग इसके लिए साफ्टवेयर के विकास और राज्यों तथा केंद्रशासित प्रदेशों के लिए इसके निःशुल्क कस्टमाइजेशन की सुविधा उपलब्ध करा रहा है। विभाग 585 विनियमित मंडियों में सूचना टेक्नोलॉजी और गुणवत्ता आकलन से संबंधित उपकरणों/बुनियादी ढांचे की स्थापना करके ई–मार्केट प्लेटफार्म बनाने के लिए एकमुश्त अनुदान के रूप में एक बार के लिए अधिकतम 30 लाख रुपये चुनी हुई मंडियों को उपलब्ध करा रहा है। यह सहायता 2017–18 के बजट में की गई घोषणा के अनुसार हर मंडी के लिए बढ़ाकर 75 लाख रुपये कर दी गई है और इसके तहत ई–नाम मंडियों में कृषि पदार्थों की छंटाई/ग्रेडिंग/सफाई की सुविधा उपलब्ध कराने और पैकेजिंग तथा कम्पोस्ट इकाइयां लगाने के काम को भी शामिल कर लिया गया है। राज्य सरकारों से अपेक्षा की गई है कि वे उन कृषि उपज विपणन कमेटियों के नाम और उनकी जरूरतों के बारे में बताएंगी जिनमें ये परियोजना शुरू की जाती है।

ई–नाम के शामिल होने के लिए बाजार सुधार करना अनिवार्य

इस योजना को कृषि विपणन सुधारों के साथ जोड़ा गया है और राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों से अपेक्षा की गई है कि वे योजना के तहत सहायता का लाभ उठाने के लिए कृषि उत्पाद बाजार कमेटियों से संबंधित अपने कानूनों में निम्नलिखित तीन क्षेत्रों में आवश्यक संशोधन करें–

(1) राज्यभर में वैध एकल व्यापार लाइसेंस का प्रावधान

राज्य/केंद्रशासित प्रदेश संबंधित कृषि उपज विपणन कमेटी

अधिनियम/विनियमों के तहत उपयुक्त कानून बनाकर एकल व्यापार लाइसेंस जारी करें। ऐसे लाइसेंस देशभर में किसी भी पात्र व्यक्ति को जारी किए जा सकते हैं चाहे वह कहीं का भी रहने वाला क्यों न हो और वह ई–नाम पोर्टल के जरिए समूचे राज्य/केंद्रशासित प्रदेश में व्यापार कर सकता है।

इसके अलावा राज्य/केंद्रशासित प्रदेश को थोक व्यापारियों/खरीदारों के लिए एकल व्यापार लाइसेंस की ऐसी उदार प्रक्रिया की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे वे समूचे राज्य में कहीं भी कारोबार कर सकें। इसमें जमानत की मोटी रकम जमा कराने या खरीद की न्यूनतम मात्रा संबंधी अथवा खरीद केंद्र/परिसर आदि स्थापित करने जैसे निषेधकारी प्रावधान नहीं होने चाहिए।

(2) पूरे राज्य में एक ही स्थान पर बाजार शुल्क लगाने का प्रावधान

राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को कृषि उपज विपणन कमेटी अधिनियम/विनियमों के अनुरूप उपयुक्त कानून/कार्यकारी आदेश से किसी राज्य में एक ही जिंस के थोक व्यापार के लिए एक ही स्थान पर बाजार शुल्क लेने की व्यवस्था करनी चाहिए। यानी किसी राज्य के अंतर्गत बाजार शुल्क/उपकर पहले लेन–देन के समय ही ले लिया जाना चाहिए। उसी जिंस की थोक में अगली खरीद–फरोख्त के लिए बाजार शुल्क/उपकर/सेवा कर या किसी अन्य नाम से इसी तरह का कोई शुल्क या कर नहीं लिया जाना चाहिए।

(3) राज्यों के कृषि विपणन विभाग/बोर्ड/कृषि उपज विपणन कमेटियां/विनियमित बाजार कमेटियां कीमतों की जानकारी हासिल करने के तरीके के रूप में ई–नीलामी/ई–ट्रेडिंग का प्रावधान करें : राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को अपनी कृषि उपज विपणन कमेटी (एपीएमसी)/विनियमित बाजार कमेटी (आरएमसी) अधिनियम/विनियमों के अनुरूप उपयुक्त कानून बनाकर/कार्यकारी आदेश से आवश्यक कानूनी ढांचा और उसके लिए वांछित अवसंरचना तैयार कर लेनी चाहिए जिससे राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) को बढ़ावा मिले।

उद्देश्य

(1) बाजारों को पहले राज्यों के स्तर पर और उसके बाद समूचे देश से साझा ऑनलाइन मंच के जरिए जोड़ना, कृषि जिंसों का अखिल भारतीय व्यापार को सुविधाजनक बनाना;

(2) विपणन/लेनदेन प्रक्रियाओं को चुस्त–दुरस्त करना और उन्हें तमाम बाजारों के लिए एक समान बनाना ताकि बाजारों के सुचारू संचालन में मदद मिले;

(3) अधिक से अधिक संख्या में खरीदारों/बाजारों तक ऑनलाइन संपर्क सुविधा के जरिए किसानों/विक्रेताओं के लिए बेहतर विपणन अवसरों को बढ़ावा देना, सूचनाएं प्राप्त करने में असंगतियों को दूर करना, कृषि जिंसों की वास्तविक मांग और आपूर्ति के आधार पर बेहतर और रीयल टाइम कीमतों के बारे में जानकारी, बोली लगाने की प्रक्रिया में पारदर्शिता, उत्पाद की गुणवत्ता के आधार पर मूल्य तय करना, ऑनलाइन भुगतान आदि की व्यवस्था ताकि विपणन में दक्षता का संचार हो;

(4) गुणवत्ता आश्वासन के लिए गुणवत्ता आकलन प्रणालियों की स्थापना ताकि खरीदारों द्वारा सोच–समझकर बोली लगाने को बढ़ावा मिले;

(5) उपभोक्ताओं को उच्च गुणवत्ता वाले बेहतरीन उत्पाद उपलब्ध कराना और कीमतों में स्थिरता लाना;

राष्ट्रीय कृषि बाजार के घटक

- विनियमित बाजारों, किसान मंडियों, गोदामों और निजी बाजारों में पारदर्शी बिक्री गतिविधियों और मूल्य जांच के लिए ई–बाजार मंच का निर्माण। इच्छुक राज्य अपने–अपने एपीएमसी अधिनियम के अनुसार ई–ट्रेडिंग के लिए प्रावधान बनाएंगे;
- व्यापारियों/खरीदारों और कमीशन एजेंटों की बाजार में मौजूदगी या बाजार में अपनी दुकान अथवा जगह के बिना राज्य अधिकारियों द्वारा उन्हें उदारतापूर्वक लाइसेंस जारी किए जाएंगे।
- किसी व्यापारी को जारी किया गया लाइसेंस राज्य की सभी मंडियों में स्वीकार्य होगा।
- कृषि उत्पादों के गुणवत्ता संबंधी मानदंडों में तालमेल और हर बाजार में गुणवत्ता आकलन के इंतजाम ताकि बोली लगाने वाले सूझबूझ से बोली लगा सकें।
- कृषि उपज विपणन कमेटी (एपीएमसी) का अधिकार मौजूदा समूचे बाजार क्षेत्र की बजाय मंडी या उप–मंडी के दायरे तक सीमित किया गया।
- तमाम बाजार शुल्कों की उगाही केवल एक स्थान पर यानी किसान से पहली बार थोक खरीद के समय।

कार्यान्वयन नीति

कृषि मंत्रालय के कृषि, सहकारिता और किसान कल्याण विभाग ने स्मॉल फार्मर्स एग्रिबिजनेस कनसोर्टियम (एसएफएसी) को राष्ट्रीय कृषि बाजार की प्रमुख कार्यान्वयन एजेंसी के रूप में कार्य करने की जिम्मेदारी सौंपी है। कंसोर्टियम ने मैसर्स नागार्जुन फर्टिलाइजर्स एंड केमिकल्स लिमिटेड को खुले टेंडर के जरिए अपना नीतिगत साझेदार बनाया है और राष्ट्रीय कृषि बाजार प्लेटफार्म के विकास, संचालन और रखरखाव की जिम्मेदारी सौंपी है।

चुने हुए नीतिगत साझेदारों की भूमिका काफी विस्तृत है और इसमें ये बातें शामिल हैं:

राष्ट्रीय कृषि बाजार का गठन करने वाले एप्लिकेशंस और मॉड्यूल्स के सेट का डिजाइन तैयार करना, उसे विकसित करना, उसका परीक्षण करना, लागू करना, रखरखाव करना, प्रबंधन करना, उसे बढ़ाना और उसमें संशोधन करना।

समन्वित मंडियों को ज़मीनी–स्तर का सहयोग प्रदान करने के लिए शुरू के एक साल तक सहायक कर्मचारियों की तैनाती करके विभिन्न उपयोक्ताओं को प्रशिक्षण उपलब्ध कराना और मंडियों में जागरूकता शिविर आयोजित करना।

हेल्प डेस्क स्थापित कर जिज्ञासाओं का समाधान और कामकाज के दौरान सामने आए उपयोग करने वालों के मसलों को सुलझाना/निपटाना।

पोर्टल की मार्केटिंग और उपयोग : नीतिगत साझेदार उपयुक्त किस्म की संवर्धन और विपणन गतिविधियां संचालित करेगा ताकि विभिन्न सहभागियों में ई–नाम पोर्टल की स्वीकार्यता और उपयोग बढ़े।

मैनेजमेंट इंफार्मेशन सिस्टम (एमआईएस) रिपोर्ट बनाना: नीतिगत साझेदार ई–नाम पोर्टल में एमआईएस रिपोर्ट प्राप्त करने की व्यवस्था करेगा।

प्रोसेस फ्लो यानी प्रक्रिया प्रवाह

किसान अपने उत्पादों को निकट के ई–नाम बाजार में ऑनलाइन प्रदर्शित कर सकते हैं और व्यापारी किसी भी स्थान में ऑनलाइन बोली लगा सकते हैं। इससे खरीदार व्यापारियों की संख्या के साथ–साथ प्रतिस्पर्धा भी बढ़ेगी जिससे किसानों को खुली कीमतों का पता लगेगा और बेहतर दाम मिलेंगे।

समाशोधन और निपटान

एक बार सौदे की पुष्टि हो जाने पर प्राथमिक इनवॉयस ई–नाम सॉफ्टवेयरर से स्वतः बनकर तैयार हो जाएगा जिसे व्यापारी संबंधित डैशबोर्ड पर देख सकते हैं या बोली में जीतने वाले को भेजे गए ई–मेल/एसएमएस द्वारा हाथोंहाथ हासिल किया जा सकता है। बोली जीतने वाला बिक्री समझौते में की गई गणना के अनुसार राशि जमा कराएगा जिसमें बाजार शुल्क, कमीशन एजेंट का शुल्क, उतराई/लदाई/पैकेजिंग शुल्क आदि भी शामिल होंगे। बोली जीतने वाला इस राशि को आरटीजीएस/एनईएफटी या ई–नाम में उपलब्ध कराए गए ऑनलाइन भुगतान गेटवे के जरिए सेटलमेंट खाते में ऑनलाइन जमा करा सकता है। ई–नाम पर एक बार राशि की प्राप्ति की हो जाने पर किसान–विक्रेता/कमीशन एजेंट को पुष्टि संदेश आ जाएगा। डिलीवरी की शर्तों के अनुसार बोली जीतने वाला एपीएमसी बाजार में सामान की डिलीवरी खुद या अधिकृत एजेंट के जरिए या सुविधा प्रदाता से ले सकता है। खरीदार भी कमीशन एजेंट/बेचने वाले को अपने पसंद के ट्रांसपोर्टर के जरिए देय–भाड़ा (फ्रेट टू पे) आधार पर खुद के जोखिम, बीमा और भाड़ा भुगतान की शर्तों पर सामान भेजने का अनुरोध कर सकता है। किसान–विक्रेता/कमीशन एजेंट और एपीएमसी जैसे सेवा प्रदाताओं आदि को चुकाई जाने वाली राशियों को ई–नाम में पंजीकृत उनके बैंक खातों में तब अंतरित किया जाएगा जब ई–नाम खाते को संचालित करने वाला बैंक इस बात की पुष्टि कर देगा कि खरीदार या उसके प्रतिनिधि ने एक कार्यदिवस के भीतर सामान की डिलीवरी ले ली है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (नाम) की कार्यान्वयन स्थिति

क्र.सं.	राज्य	कुल
1	आंध्र प्रदेश	22
2	छत्तीसगढ़	14
3	गुजरात	40
4	हरियाणा	54
5	हिमाचल प्रदेश	19
6	झारखंड	19
7	मध्य प्रदेश	58
8	महाराष्ट्र	45
9	उड़ीसा	10
10	राजस्थान	25
11	तमिलनाडु	15
12	तेलंगाना	44
13	उत्तर प्रदेश	100
14	उत्तराखंड	5
	कुल	470

राष्ट्रीय कृषि बाजार पोर्टल

- विक्रेता द्वारा कीमत संबंधी बोली को स्वीकार किया जाना
- खरीदार द्वारा बोली लगाना
- खरीदार
- विक्रेता (किसान/व्यापारी/कमीशन एजेंट)
- खरीदार
- व्यापारिक मिलान
- निर्धारित प्रयोगशालाओं द्वारा गुणवत्ता प्रमाणन
- एपीएमसी/चैनल पार्टनर/विक्रेता सुविधा
- सौदे
- सामान की डिलीवरी
- भुगतान
- समाशोधन बैंक
  (पैसा जमा कराएं)

परीक्षण के तौर पर शुरुआत

राष्ट्रीय कृषि बाजार की परीक्षण तौर पर शुरुआत माननीय प्रधानमंत्री ने 8 राज्यों की 21 मंडियों में 14 अप्रैल, 2016 को की थी। अब तक ई–नाम 14 राज्यों की 470 मंडियों में लागू किया जा चुका है।

कार्यान्वयन में प्रगति

भारत सरकार ने 16 राज्यों और 2 केंद्रशासित प्रदेशों में 579 मंडियों को ई–नाम के तहत समन्वित करने की मंजूरी दी है। इनमें से 14 राज्यों की 470 मंडियों को पहले ही जोड़ा जा चुका है।

ई–नाम पोर्टल हिंदी और अंग्रेजी के अलावा क्षेत्रीय भाषाओं जैसे गुजराती, तेलुगु, मराठी और बंगाली में भी उपलब्ध है। इसी तरह ई–नाम वेबसाइट हिंदी और अंग्रेजी के साथ–साथ गुजराती, तेलुगु, मराठी, बंगाली, तमिल और उड़िया भाषाओं में भी उपलब्ध है।

मोबाइल एप्लिकेशन

ई–नीलामी के लिए हिंदी और अंग्रेजी में मोबाइल एप जारी किया गया है जिसे गूगल प्लेस्टोर (play.google.com) से डाउनलोड किया जा सकता है। ई–नाम मोबाइल एप मंडियों के अनुसार जिंसों की आवक और उनकी कीमतों के बारे में सूचनाएं किसानों को उपलब्ध कराता है। इसमें मोबाइल फोन के जरिए व्यापारियों के लिए कहीं भी बोली लगाने की सुविधा भी उपलब्ध है।

अब तक की प्रगति

पूर्व निर्धारित लक्ष्यों के अनुसार मंडियों को समन्वित किया गया है।

विभिन्न राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों में राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) के विस्तार का दायरा इस प्रकार है:

क) कार्यनिष्पादन : एक नज़र में (31 दिसंबर, 2017 तक):

ई–नाम के तहत पंजीकृत किसानों की संख्या	: 63.82 लाख
पंजीकृत व्यापारियों की संख्या	: 99,531
पंजीकृत कमीशन एजेंटों की संख्या	: 52,768
व्यापार की कुल मात्रा	: 1.37 करोड़ एमटी
मूल्य (करोड़ रुपये में)	: 32425
व्यापार मानदंड अधिसूचित	: 90 वस्तुएं

ख) माननीय प्रधानमंत्री ने सिविल सेवा दिवस (21 अप्रैल 2017) के अवसर पर ई–नाम को लागू करने में शानदार कार्य के लिए सोलन (हिमाचल प्रदेश) और निजामाबाद (तेलंगाना) की मंडियों को उत्कृष्टता पुरस्कार प्रदान किए।

ग) प्रशिक्षण और जागरूकता

किसानों, व्यापारियों, कमीशन एजेंटों, मंडी कार्यकर्ताओं और ई–नाम मंडियों में पंजीकरण से संबंधित अन्य लोगों के लिए जागरूकता शिविर आयोजित किए जा रहे हैं ताकि वे किसानों को तत्काल पंजीयन की सुविधा उपलब्ध करा सकें। अब तक 200 मंडियों में इस तरह के शिविर आयोाजित किए जा चुके हैं। प्रतिभागियों से निर्धारित प्रपत्र में फीडबैक लिया जा रहा है और इसमें सुधार के लिए इसका विश्लेषण किया जा रहा है।

उपस्थित चुनौतियां

विभिन्न राज्यों में गुणवत्ता संबंधी असमान मानदंड, खासतौर

पर बागवानी उत्पादों के गुणवत्ता संबंधी मानदंड राज्यों के बीच और मंडियों के बीच व्यापार बढ़ाने में सबसे बड़ी बाधा हैं। देशभर के राज्यों के बीच गुणवत्ता संबंधी मानदंडों में तालमेल समय की आवश्यकता है। प्रमुख कार्यान्वयन एजेंसी के रूप में स्मॉल फार्मर्स एग्रिबिजनेस कंसोर्टियम (एसएफएसी) कृषि, सहकारिता और किसाल कल्याण विभाग के अंतर्गत विपणन और जांच निदेशालय (डीएमआइ) की मदद से गुणवत्ता मानदंडों में एकरूपता लाने की संभावनाओं का पता लगा रहा है। इस प्रक्रिया में 90 वस्तुओं के गुणवत्ता संबंधी मानदंड तैयार कर लिए गए हैं और ई–नाम मंडियों द्वारा अनुपालन के लिए अधिसूचित भी किए जा चुके हैं।

राज्यों से अपेक्षा की जाती है कि वे प्रशिक्षित कर्मचारियों और उपयुक्त मूल्यांकन उपकरणों से युक्त गुणवत्ता परीक्षण सुविधाएं स्थापित करेंगे। विपणन और जांच निदेशालय ई–नाम मंडियों के कर्मचारियों को गुणवत्ता के आकलन के लिए अपनी क्षेत्रीय एगमार्क प्रयोगशालाओं के माध्यम से आवश्यक प्रशिक्षण उपलबध करा रहा है।

मंडियों के बीच और राज्यों के बीच व्यापार को बढ़ावा देने के लिए राज्यों से अपेक्षा की जाती है कि वे व्यापारियों के पर्याप्त संख्या में एकीकृत व्यापार लाइसेंस के मुद्दे को आगे बढ़ाएंगे। आज तक बहुत कम व्यापारियों ने एकीकृत लाइसेंसों के लिए आवेदन किया है।

खरीदारों द्वारा किसानों के बैंक खातों में सीधे ऑनलाइन भुगतान चिंता का दूसरा विषय है जिसमें प्रगति बहुत धीमी रही है। इसमें प्रबंधन में बदलाव जरूरी है क्योंकि परंपरागत रूप से किसानों को भुगतान कमीशन एजेंटों द्वारा किया जाता है और वे विक्रेताओं को साख यानी ऋण भी उपलब्ध कराते हैं। इसके अलावा ई–नाम में मंडियों में व्यापारी भारत सरकार की प्रत्यक्ष लाभ अंतरण नीति के भुगतानों की तरह किसानों के बैंक खातों में सीधा भुगतान कर सकते हैं।

(लेखक स्मॉल फार्मर्स एग्रिबिजनेस कंसोर्टियम में सलाहकार हैं और ई–नाम परियोजना से जुड़े हैं।)

ई–मेलः nam@sfac.in

उर्वरकों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु उठाए गए कदम

उर्वरक खेती के महत्वपूर्ण उपादान हैं। हरितक्रांति के समय से ही उर्वरकों ने खेतों की उत्पादकता बढ़ाने में प्रमुख भूमिका अदा की है। लेकिन किसानों को उर्वरकों की तंगी का सामना करना पड़ता रहा है। लिहाजा सरकार ने उर्वरकों की बारहों महीने आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए कई कदम उठाए हैं। इनमें से कुछ कदम इस प्रकार हैं–

1. **यूरिया मूल्य निर्धारण नीति–2015:** इस नीति को 25 मई, 2015 को अधिसूचित किया गया। इसका मकसद देश में यूरिया के उत्पादन को अधिकतम स्तर तक ले जाना है। इसमें यूरिया इकाइयों में ऊर्जा के बेहतर इस्तेमाल को बढ़ावा देने और सरकार के ऊपर सब्सिडी के बोझ को तार्किक बनाने पर भी ध्यान दिया गया है।
2. **यूरिया का नीम संलेपन:** 100 प्रतिशत नीम संलेपन हासिल कर लिया गया है।
3. यूरिया की 50 किलो की जगह 45 किलोग्राम की बोरियां शुरू की गई हैं।
4. **फॉस्फेट और पोटेशियम उर्वरकों की दरों में गिरावट:** सरकार ने उर्वरक कंपनियों को फॉस्फेट और पोटेशियम उर्वरकों की दरें घटाने के लिए प्रोत्साहित किया है। इससे डाईमोनियम फॉस्फेट (डीएपी), म्यूरिएट ऑफ पोटाश (एमओपी) और मिश्रित उर्वरकों के अधिकतम खुदरा मूल्यों में गिरावट आई है।
5. **वार्षिक उत्पादन की न्यूनतम सीमा खत्म करना:** पहले के प्रावधानों के तहत अपनी कम–से–कम 50 प्रतिशत क्षमता का इस्तेमाल करने या न्यूनतम 40000 मीट्रिक टन उत्पादन वाली सिंगल सुपर फॉस्फेट (एसएसपी) इकाई ही सब्सिडी की हकदार होती थी। लेकिन अब सरकार ने इस प्रावधान को खत्म करने का फैसला किया है।
6. भारतीय उर्वरक निगम लिमिटेड (एफसीआईएल) की सिंदरी और गोरखपुर इकाइयों तथा हिंदुस्तान उर्वरक निगम लिमिटेड (एचएफसीएल) की बरौनी इकाई को फिर से शुरू करने का फैसला किया गया है।
7. **मॉडल उर्वरक खुदरा दुकान:** वित्त वर्ष 2016–17 के बजट में तीन साल में 2000 मॉडल उर्वरक खुदरा दुकानें खोलने की घोषणा की गई थी। ये दुकानें उचित मूल्यों पर गुणवत्तापूर्ण उर्वरक बेचने के अलावा मिट्टी और बीज की जांच करेंगी तथा पोषकों के संतुलित इस्तेमाल को बढ़ावा देंगी।
8. **शहरी कंपोस्ट को बढ़ावा देने की नीति:** उर्वरक विभाग ने शहरी कंपोस्ट को बढ़ावा देने की नीति को 10 फरवरी, 2016 को अधिसूचित किया। इसमें शहरी कंपोस्ट का उत्पादन और इस्तेमाल बढ़ाने के लिए 1500 रुपये प्रति मीट्रिक टन की बाजार विकास सहायता (एमडीए) की व्यवस्था की गई है। शहरी कंपोस्ट बनाने वाली कंपनियों को अपना उत्पाद किसानों को सीधे बेचने की इजाजत दी गई है।
9. उर्वरक सब्सिडी योजना में लाभ के सीधे स्थानांतरण की प्रायोगिक परियोजनाओं पर काम चल रहा है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना से संवरेगा भारत

–चंद्रभान यादव

पानी के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। यही वजह है कि प्राचीनकाल में बस्तियां उसी स्थान पर बसती थीं, जहां पर्याप्त पानी होता था। ऐसे में यह साफ है कि पानी के बिना खुशहाली नहीं आ सकती है। किसान खुशहाल होंगे तो देश खुशहाल होगा। किसानों की खुशहाली के लिए सिंचाई सुविधाओं का विस्तार करना होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार ने किसानों को समुचित सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराने की योजना बनाई है। यह खुशहाली प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के जरिए मिल रही है। इस योजना का उद्देश्य सिर्फ सुनिश्चित सिंचाई के लिए स्रोतों का सृजन करना नहीं है बल्कि 'जल संचय' और 'जल सिंचन' के माध्यम से सूक्ष्म–स्तर पर वर्षा जल का उपयोग करके संरक्षित सिंचाई का भी सृजन करना है। एक तरफ गांवों में तालाब खुलवाए जा रहे हैं तो दूसरी तरफ स्प्रिंकलर पद्धति से भी बूंद– बूंद सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है।

देश के किसानों को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में केंद्र सरकार की ओर से लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना इसी दिशा में एक प्रयास है। 2 जुलाई, 2015 को प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति ने इसे मंजूरी दी। इस योजना में केंद्र 75 प्रतिशत अनुदान देगा और 25 प्रतिशत खर्च राज्यों के जिम्मे होगा। जबकि पूर्वोत्तर क्षेत्र और पर्वतीय राज्यों में केंद्र का अनुदान 90 प्रतिशत तक होगा। इससे जहां किसानों को समुचित सिंचाई सुविधा मिल सकेगी वहीं देश के लिए चुनौती बनते जा रहे जलस्तर को भी बढ़ाया जा सकेगा क्योंकि जलस्तर को लेकर एक नई बहस छिड़ गई है। पानी का लेवल लगातार नीचे जा रहा है। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना एक तरह से कम पानी का दोहन करने और ज्यादा से ज्यादा पानी स्टोर कर भूगर्भ को रिचार्ज करने का उपक्रम है। इसमें तीन योजनाओं– त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम, एकीकृत जलग्रहण प्रबंधन कार्यक्रम और खेत में जल प्रबंधन योजनाओं का विलय किया गया है और नई योजना के रूप में पीएमकेएसवाई बनाई गई है। इस योजना में तीन मंत्रालयों–जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा पुर्नउद्धार मंत्रालय, ग्रामीण विकास मंत्रालय तथा कृषि मंत्रालय के विभिन्न जल संरक्षण, संचयन एवं भूमिजल संर्वधन तथा जल वितरण संबंधित कार्यों को समेकित किया गया है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के जरिए कम लागत में किसानों को संवारने की कोशिश की गई, जिसका नतीजा रहा कि पिछले साल कृषि विकास दर बढ़कर 4.1 प्रतिशत हो गई है। सरकार ने 'हर खेत को पानी' उपलब्ध कराने का लक्ष्य पाने के लिए संपूर्ण सिंचाई आपूर्ति श्रृंखला शुरू की है। वर्ष 2015–16 से 2019–20 के दौरान 50,000 करोड़ रुपये निवेश कर संपूर्ण सिंचाई आपूर्ति श्रृंखला, जल संसाधन, वितरण नेटवर्क और खेत–स्तरीय अनुप्रयोग समाधान विकसित करके 'हर खेत को पानी' उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा है। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना से सूखे की समस्या से स्थाई तौर पर निजात मिलेगी। यही वजह है कि इस योजना में तीन प्रमुख मंत्रालयों को शामिल किया गया है। इसकी अगुवाई जल संसाधन मंत्रालय कर रहा है।

भारत में विश्व की आबादी की 17 प्रतिशत जनसंख्या तथा 11.3 प्रतिशत पशुधन निवास करते हैं, जबकि अपने देश में विश्व का मात्र 4 प्रतिशत जल संसाधन उपलब्ध है। ऐसे में हमारे समक्ष

पशुधन और मानव को पेयजल उपलब्ध कराना बड़ी चुनौती है। इतना ही नहीं यदि हम देश में मौजूद कृषि भूमि का आंकड़ा देखें तो देश में कुल 20.08 करोड़ हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि है जिसमें से मात्र 9.58 करोड़ हेक्टेयर भूमि सिंचित है। यह कुल क्षेत्रफल का केवल 48 प्रतिशत है। इसलिए 52 फीसदी असिंचित कृषि भूमि में उन्नत कृषि अपनाने के लिए आवश्यक जल की आपूर्ति कराना भी दूसरी बड़ी चुनौती है। इस चुनौती से निबटने के लिए समुचित जल प्रबंधन करना होगा। यह प्रबंधन ही प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना है। इसके जरिए इस चुनौती से मुकाबला करने की रणनीति बनाई गई है। वास्तव में प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना एक समग्र योजना है, लेकिन इसका सबसे ज्यादा फायदा सूखा–प्रभावित इलाकों को मिलेगा। केंद्र सरकार सूखे की जद में रहने वाले इलाकों पर विशेष तौर पर ध्यान दे रही है। पिछले दो वर्षों में दस राज्यों में गंभीर सूखा पड़ा, जिससे कृषि क्षेत्र पर बुरा प्रभाव पड़ा। वर्षा–आधारित कृषि भूमि के अतिरिक्त छह लाख हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई के अंतर्गत लाने के लिए योजना के कार्यान्वयन के पहले एक वर्ष में पांच हजार तीन सौ करोड़ रुपये का आवंटन किया गया है। दरअसल सिंचाई क्षेत्र में छह दशकों के निवेश के बावजूद सुनिश्चित सिंचाई के तहत 14.2 करोड़ हेक्टेयर कृषि भूमि में से केवल 45 प्रतिशत ही कवर हो पाई है। ऐसे में प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई) हर खेत को पानी देने पर ध्यान केंद्रित करने की दिशा में एक सही कदम है। इसके अंतर्गत मूल स्थान पर जल संरक्षण के जरिए किफायती लागत और बांध–आधारित बड़ी परियोजनाओं पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इस योजना में जन–प्रतिनिधियों की भूमिका भी शामिल की गई है। जिला सिंचाई योजना तैयार करते समय ससंद सदस्य एवं स्थानीय विधायक के सुझाव लिए जाएंगे और जिला सिंचाई परियोजना में सम्मिलित किया जाएगा। इस जिला–स्तरीय परियोजना को अंतिम रूप देते समय स्थानीय संसद सदस्य के उपयोगी सुझावों को प्राथमिकता दी जाएगी।

योजना के तहत चलने वाले प्रमुख कार्यक्रम

इस योजना में ग्रामीण विकास मंत्रालय मुख्य रूप से मृदा एवं जल संरक्षण हेतु छोटे तालाब, जल संचयन संरचना के साथ–साथ छोटे बांधों तथा सम्मोच्च मेढ़ निर्माण आदि कार्यों का क्रियान्वयन राज्य सरकार के माध्यम से समेकित पनधरा प्रबंधन कार्यक्रम के तहत करेगा। जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा पुर्नउद्धार मंत्रालय संरक्षित जल को खेत तक पहुंचाने के लिए नाली इत्यादि का विकास करेगा। साथ ही त्वरित सिंचाई लाभ संबंधी कार्यक्रम समयबद्ध तरीके से पूर्ण करेगा। इसके अंतर्गत निम्न–स्तर पर जल निकाय सृजन, नदियों में लिफ्ट सिंचाई योजनाएं जल–वितरण नेटवर्क तथा उपलब्ध जल स्रोतों की मरम्मत, पुर्नभंडारण का कार्य करेगा। कृषि मंत्रालय, कृषि एवं सहकारिता विभाग, वर्षा जल संरक्षण, जल बहाव नियत्रंण कार्य, जल उपलब्धता के अनुसार फसल उत्पादन, कृषि वानिकी, चारागाह विकास के साथ–साथ कृषि जीविकोपार्जन के विभिन्न कार्यक्रमों को भी चलाएगा। जल प्रयोग क्षमता बढ़ाने के लिए सूक्ष्म सिंचाई योजना के तहत ड्रिप, स्प्रीकंलर, रेनगन आदि का उपयोग विभिन्न फसलों की सिंचाई के लिए किया जाएगा।

साल–दर–साल जारी किया बजट

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना है। इसके लिए वर्ष 2015–16 में सूखा निरोधन, प्रसार कार्य एवं जिला सिंचाई योजना बनाने के लिए 555.5 करोड़ रुपये जारी किए गए। इसके अंतर्गत 175 करोड़ रुपये मनरेगा के अंतर्गत जल संरक्षण के लिए पक्के निर्माण कार्यों में सामग्री घटक को पूरित करने एवं 259 करोड़ रुपये देश के 219 बारंबार सूखा–प्रभावित जिलों में तथा केंद्रीय भूजल बोर्ड द्वारा चिन्हित अति–दोहित 1071 ब्लॉकों में भूजल पुनर्भरण (रिचार्ज), सूखा शमन तथा सूक्ष्म जल भंडारण सृजन के लिए राज्यों को जारी किए गए। इन कार्यो से एक तरफ जल संरक्षण की दिशा में काम हुआ तो दूसरी तरफ ग्रामीण इलाके में रोजगार को भी बढ़ावा मिला। इसी तरह वर्ष 2016–17 में सूखा निरोधन उपायों के लिए 520.90 करोड़ रुपये की राशि राज्यों को जारी की गई। वर्ष 2016–17 के दौरान पीएमकेएसवाई को 'प्रति बूंद अधिक फसल' के लिए 1991.17 करोड़ रुपये जारी किए गए जो वर्ष 2015–16 में जारी 1,556.73 करोड़ रुपये की तुलना में लगभग 28 प्रतिशत अधिक हैं। वर्ष 2015–16 में सूक्ष्म सिंचाई के अधीन 5.7 लाख हेक्टेयर क्षेत्र लाया गया था। वर्ष 2016–17 में 8.39 लाख हेक्टयर क्षेत्र को सूक्ष्म सिंचाई के तहत लाया गया, जोकि अब तक का सर्वाधिक क्षेत्र है। वर्ष 2017–18 के लिए 'प्रति बूंद अधिक फसल' के अंतर्गत 3400 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई है। सूक्ष्म सिंचाई के तहत वर्ष 2017–18 में 12 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को इसमें जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है।

2019 तक पूरी होंगी 99 परियोजनाएं

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई) तथा त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम के तहत चिन्हित 99 परियोजनाएं निर्धारित की गई हैं। इन्हें वर्ष 2019 तक पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। इन परियोजनाओं में से 23 परियोजनाओं को प्राथमिकता के तहत 2016–17 तक एवं 31 परियोजनाओं को 2017–18 तक और शेष 45 परियोजनाओं को दिसंबर 2019 तक पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। मंत्रालय से प्राप्त जानकारी के अनुसार, पीएमकेएसवाई तथा एआईबीपी के अंतर्गत नाबार्ड द्वारा 3,274 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। नाबार्ड ने आंध्र प्रदेश की पोलावरम सिंचाई परियोजना के लिए 1,981 करोड़ रुपये, महाराष्ट्र को 830 करोड़ रुपये तथा गुजरात को 463 करोड़ रुपये विभिन्न सिंचाई परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता के रूप में जारी किए हैं। एआईबीपी की 99 परियोजनाओं में से 26 परियोजनाएं महाराष्ट्र में, 8 आंध्र, प्रदेश में और एक गुजरात में है। महाराष्ट्र की 7 परियोजनाएं प्राथमिकता

श्रेणी की परियोजनाएं हैं। शेष 19 परियोजनाएं प्राथमिकता 3 श्रेणी की हैं। आंध्रप्रदेश में सभी 8 परियोजनाएं प्राथमिकता–2 श्रेणी की हैं। गुजरात में एकमात्र परियोजना सरदार सरोवर है और यह प्राथमिकता–3 श्रेणी की परियोजना है। इस परियोजना के 2018 के अंत तक पूरा होने की संभावना है और इसकी लक्षित सिंचाई क्षमता 1792 हजार हेक्टेयर क्षेत्र है।

निगरानी के लिए बड़ी कार्ययोजना

इस योजना की निगरानी के लिए टॉप टू बॉटम व्यवस्था बनाई गई है। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में सभी संबंधित मंत्रालयों के मंत्रियों के साथ एक अंतर–मंत्रालयी राष्ट्रीय संचालन समिति (एनएससी) बनाई गई है। कार्यक्रम के कार्यान्वयन संसाधनों के आवंटन, अंतर–मंत्रालयी समन्वय, निगरानी और प्रदर्शन के आकलन के लिए नीति आयोग के उपाध्यक्ष की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय कार्यकारी समिति (एनईसी) है। राज्य के स्तर पर योजना का कार्यान्वयन संबंधित राज्य के मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्य–स्तरीय मंजूरी देने वाली समिति (एसएलएससी) करती है। इस समिति के पास परियोजना को मंजूरी देने और योजना की प्रगति की निगरानी करने का पूरा अधिकार है। कार्यक्रम को और बेहतर ढंग से लागू करने के लिए जिला–स्तर पर जिला–स्तरीय समिति भी होगी।

कैसे होता है योजना का संचालन

योजना के तहत कृषि–जलवायु की दशाओं और पानी की उपलब्धता के आधार पर जिला और राज्य–स्तरीय योजनाएं बनाई जाती हैं। योजना में केंद्र 75 प्रतिशत अनुदान देगा और 25 प्रतिशत खर्च राज्यों के जिम्मे होगा। पूर्वोत्तर क्षेत्र और पर्वतीय राज्यों में केंद्र का अनुदान 90 प्रतिशत तक होगा।

पीएमकेएसवाई परियोजनाओं की निगरानी के लिए एमआईएस लांच किया

केंद्रीय जल संसाधन, नदी विकास तथा गंगा संरक्षण मंत्री उमा भारती ने पीएमकेएसवाई परियोजना की निगरानी के लिए एमआईएस लांच किया। एमआईएस से पीएमकेएसवाई परियोजनाओं की शीघ्र निगरानी हो सकेगी। नई एमआईएस के अंतर्गत परियोजना की भौतिक और वित्तीय प्रगति की जानकारी के लिए परियोजनावार नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं। एमआईएस को पब्लिक डोमेन में रखा गया है। एमआईएस में परियोजनावार प्राथमिकता अनुसार/राज्यवार भौतिक/वित्तीय ब्यौरे/टेबल/ग्राफ रूप में उपलब्ध हैं। इसमें तिमाही तौर पर परियोजना की प्रगति की तुलना की जा सकती है और परियोजना को प्रभावित करने वाली बाधाओं का विस्तृत वर्णन भी है।

पीएमकेएसवाई के 10 मुख्य उद्देश्य

- **सिंचाई में निवेश में एकरूपता लाना–** इसके जरिए जिला–स्तर से लेकर ब्लॉक स्तर तक बैठकें करके रणनीति बनाना। किसानों को स्थिति से अवगत कराना और उनकी जरूरतों को समझना।
- **हर खेत को पानी के तहत कृषि योग्य क्षेत्र का विस्तार करना–** देशभर में तमाम ज़मीनें पानी के अभाव में बंजर पड़ी हैं। ऐसी ज़मीनों को जिला–स्तर पर चिन्हित किया जाएगा। फिर उनका चयन करके उन्हें खेती योग्य बनाया जाएगा। मसलन, उसमें सिंचाई सुविधाओं का विस्तार किया जााएगा। यदि मिट्टी खेती योग्य नहीं है तो उसे उपचारित करके खेती योग्य बनाया जाएगा।
- **खेतों में ही जल का इस्तेमाल करने की दक्षता बढ़ाना–** सिंचाई के दौरान पानी का एक बड़ा हिस्सा निरर्थक रहता है। वह आसपास के गड्ढों में भरकर ज़मीन को अनुपजाऊ भी बनाता है। लगातार पानी भरा होने की वजह से मिट्टी की अम्लीयता बढ़ती है। ऐसे में इस योजना के तहत पानी का अपव्यय रोकने की दिशा में भी काम किया जाएगा। कम पानी में अधिक मुनाफा कैसे लिया जा सकता है, इस पर जिला कमेटी अपनी रणनीति बनाएगी। कम से कम पानी का कैसे उपयोग किया जाए, इसके बारे में किसानों को प्रशिक्षित भी किया जाएगा। ताकि पानी के अपव्यय को कम किया जा सके।
- **प्रति बूंद अधिक फसल–** इसके जरिए सही सिंचाई और पानी को बचाने की तकनीक को अपनाया जाएगा। इस बारे में किसानों को ट्रेनिंग भी दी जाएगी। पानी की हर बूंद कीमती है। ऐसे में किसान कैसे हर बूंद को अपनी फसल में प्रयोग कर सकते हैं इसे समझाया जाएगा।
- **खेत में जल की पहुंच को बढ़ाना–** इसके जरिए हर खेत में पानी पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है। उदाहरण के लिए नहरों से खेत तक पानी नहीं पहुंच पाता है। कुछ खेत पानी में डूब जाते हैं तो कुछ सूखे रह जाते हैं। इस समस्या का निदान किया जाएगा। सुनिश्चित सिंचाई (हर खेत को पानी) के तहत कृषि भूमि को बढ़ाया जाएगा। इसी तरह उचित प्रौद्योगिकियों और पद्धतियों के माध्यम से जल के बेहतर उपयोग के लिए जल संसाधन का समेकन, वितरण और इसका दक्ष उपयोग किया जाएगा।
- **जलबचत प्रौद्योगिकी–** परिशुद्ध सिंचाई और अन्य जल बचत प्रौद्योगिकियों (अधिक फसल प्रति बूंद) के अपनाने में वृद्धि की जाएगी। जलभूत भराव में वृद्धि और सतत जल–संरक्षण पद्धतियों की शुरुआत की जाएगी। प्रभावी जल परिवहन और फार्म के भीतर क्षेत्र अनुप्रयोग उपकरणों यथा भूमिगत पाईप प्रणाली, पीवोट, रेनगन और अन्य अनुप्रयोग उपकरणों आदि को प्रोत्साहित किया जाएगा।
- **मृदा और जल संरक्षण–** खेती में मृदा एवं जल संरक्षण जरूरी है। पानी के अधिक बहाव की वजह से मिट्टी की ऊपरी परत बह जाती है। इससे उपजाऊ मिट्टी बहकर नदियों तक चली जाती है। इसके जरिए एक तरह मृदा को बचाया जाएगा, दूसरी तरफ, जल संरक्षण की दिशा में भी

काम किया जाएगा। इसी तरह भूजल के पुनर्भराव, प्रवाह बढ़ाना, आजीविका विकल्प प्रदान करना और अन्य एनआरएम गतिविधियों की ओर पन्नधारा दृष्टिकोण का उपयोग करते हुए वर्षा सिंचित क्षेत्रों के समेकित विकास को सुनिश्चित करना भी योजना का लक्ष्य है।

- **जल संचयन–** जल प्रबंधन और किसानों के लिए फसल संयोजन तथा ज़मीनी–स्तर के क्षेत्रकर्मियों से संबंधित विस्तार गतिविधियों को प्रोत्साहित करना। इसके जरिए नए जलस्रोतों का निर्माण, जीर्ण जलस्रोतों का पुर्नस्थापन और पुनरुद्धार, ग्रामीण–स्तर पर परंपरागत जल तालाबों की भराव क्षमता बढ़ाई जाएगी।
- **अपशिष्ट जल का पुनरुपयोग–** पेरी शहरी कृषि के लिए उपचारित नगरपालिका अपशिष्ट जल के पुनरुपयोग की व्यवहार्यता खोजी जाएगी।
- **आय बढ़ाना–** सिंचाई में महत्वपूर्ण निजी निवेश को आकर्षित करना। यह अवधि में कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाएगा और फार्म आय में वृद्धि करेगा। वैज्ञानिक आर्द्रता संरक्षण की वृद्धि करना और भूजल पुर्नभरण सुधार के लिए आवाह नियंत्रण उपाय करना ताकि शैलों ट्यूब/डगवैल के माध्यम से पुनर्भरित जल तक पहुंच के लिए किसानों हेतु अवसरों का निर्माण किया जा सके।

पीएमकेएसवाई में प्रमुख घटक

- **त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम (एआईबीपी)**

राष्ट्रीय परियोजनाओं सहित जारी मुख्य और मध्यम सिंचाई परियोजनाओं को तेजी से पूर्ण करने पर फोकस करना।

- **पीएमकेएसवाई (हर खेत को पानी)**

लघु सिंचाई, सतही और भूमिगत जल दोनों के माध्यम से नए जल स्रोतों का जल संग्रहणों की मरम्मत, सुधार और नवीकरण, परांपरागत स्रोतों की वहन क्षमता को बढ़ाना। जल संचयन संरचनाओं का निर्माण करना; कमांड एरिया विकास करना; खेत से स्रोत तक वितरण नेटवर्क का सुदृढ़ीकरण और मजबूत करना। क्षेत्रों में जहां यह प्रचुर मात्रा में हो, भूजल विकास करना ताकि उच्चतम वर्षा मौसम के दौरान आवाह/बाढ़ जल का भंडारण करने के लिए तालाब का निर्माण हो सके। उपलब्ध संसाधनों जिनकी क्षमता का पूर्ण दोहन नहीं हुआ है, से लाभ उठाने के लिए जल तालाबों के लिए जल प्रबंधन और वितरण प्रणाली में सुधार। कम से कम 10 प्रतिशत कमांड एरिया सूक्ष्म परिशुद्ध सिंचाई के तहत कवर किया जाना। विभिन्न स्थानों के स्रोतों से जहां कम पानी के अधिक क्षेत्र आसपास हो, में जल विचलन, सिंचाई कमांड के निरपेक्ष में आईडब्ल्यूएमपी और मनरेगा के अलावा आवश्यकता को पूरा करने के लिए निचाई पर स्थित जल निकायों नदी से लिफ्ट सिंचाई की व्यवस्था करना। परंपरागत जल–भंडारण प्रणालियों जैसे जल मंदिर आदि का व्यवहार्य स्थानों पर निर्माण और पुनरुद्धार करना शामिल है।

- **पीएमकेएसवाई (प्रति बूंद अधिक फसल)**

इसमें कार्यक्रम प्रबंधन, राज्यों व जिला सिंचाई योजना की तैयारी, वार्षिक कार्ययोजना का अनुमोदन, मूल्याकंन आदि शामिल है। प्रभावी जल परिवहन और फार्म के भीतर क्षेत्र अनुप्रयोग उपकरणों यथा भूमिगत पाइप प्रणाली, पीवोट, रेनगन (जल सिंचन) का प्रोत्साहित किया जाएगा। पानी ले जाने वाले पाईपों, भूमिगत पाइप प्रणाली सहित पानी खींचने वाले उपकरणों जैसे डीजल, इलैक्ट्रिक, सौर पम्प सेट का इंतजाम करना शामिल हैं। इसी तरह वर्षा और न्यूनतम सिंचाई आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए जल संरक्षण करना भी शामिल है।

क्षमता निर्माण, न्यून लागत प्रकाशनों सहित प्रशिक्षण और जागरूकता अभियान, सामुदायिक सिंचाई सहित तकनीकी, कृषि विज्ञान और प्रबंधन प्रणालियों के माध्यम से क्षमता उपयोग जल स्रोत को बढ़ावा देने के लिए पीको प्रोजेक्टर और कम लागत फिल्मों का उपयोग कर लोगों को ट्रेनिंग देना भी शामिल है।

- **पीएमकेएसवाई (पनधारा विकास)**

पनधारा आधारित आवाह जल का प्रभावी प्रबंधन एवं उन्नत मृदा और आर्द्रता संरक्षण गतिविधियों जैसे रिज क्षेत्र उपचार, निकासी लाईन उपचार, वर्षा जल संचयन, आर्द्रता संरक्षण एवं अन्य संबद्ध गतिविधियां शामिल हैं। परम्परागत जल तालाबों के नवीकरण सहित चिन्हित पिछड़े वर्षा सिंचित ब्लॉकों में पूरी क्षमता हेतु जल स्रोतों के निर्माण के लिए मनरेगा के साथ अभिसरण आदि।

जिला और राज्य सिंचाई योजनाएं

जिला सिंचाई योजनाएं पीएमकेएसवाई की योजना बनाने और कार्यान्वयन के दौरान अन्य जारी योजनाओं (राज्य और केंद्रीय दोनों) जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा), राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई), ग्रामीण अवसंरचना विकास निधि (आरआईडीएफ), सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास (एमपीएलएडी) योजना, विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास (एमएलएएलएडी) योजना, स्थानीय निकाय निधियों आदि के रूबरू राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के लिए पहले से तैयार जिला कृषि योजना (डीएपी) पर विचार करने के पश्चात डीआईपी सिंचाई अवसंरचना में कमी (गैप्स) को चिन्हित करती है। प्रत्येक जिले को जिला सिंचाई योजना की तैयारी के लिए एक बार की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। पीएमकेएसवाई की शुरूआत से तीन महीने की अवधि के भीतर डीआईपी और एसआईपी को अंतिम रूप दिया जाता है। एसआईपी की तैयारी और व्यापक सिंचाई विकास के लिए राज्य सरकारों को परामर्श प्रदान करने में राष्ट्रीय वर्षा क्षेत्र प्राधिकरण (एनआरएए) का सहयोग होगा। जिला सिंचाई योजना तैयार करते समय ससंद सदस्य, स्थानीय–विधायक के सुझाव लिए जाएंगे और जिला सिंचाई परियोजना में सम्मिलित किया जाएगा। इस जिला–स्तरीय परियोजना को अंतिम रूप देते समय स्थानीय संसद सदस्य के उपयोगी सुझावों को प्राथमिकता दी जाएगी।

अंतर विभागीय कार्यसमूह (आईडीडब्ल्यूजी)

अंतर विभागीय कार्यसमूह (आईडीडब्ल्यूजी) में कृषि, बागवानी, ग्रामीण विकास, जल संसाधन/सिंचाई, कमांड क्षेत्र विकास, पनधारा विकास, मृदा संरक्षण, पर्यावरण और वन, भूजल संसाधन, पेयजल, नगर योजना,औद्योगिक नीति, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से संबंधित विभाग और जल क्षेत्र से संबंधित सभी विभागो के लाईन विभागों के सचिव शामिल हैं। आईडीडब्ल्यूजी कृषि उत्पादन आयुक्त/विकास आयुक्त की अध्यक्षता में होगा। जिन विभागों में अलग से सचिव नहीं हैं, वहां निदेशक आईडीडब्ल्यूजी के सदस्यों के रूप में कार्य करेंगे। निदेशक (कृषि) मुख्य अभियंता (जल संसाधन/सिंचाई) आईडीडब्ल्यूजी के सह–संयोजक के रूप में कार्य करेगा। राज्य के भीतर स्कीम कार्यकलापों के दैनिक समन्वय और प्रबंधन के लिए आईडीडब्ल्यूजी उत्तरदायी होगा। आईडीडब्ल्यूजी प्रत्येक जल बूंद के बेहतर संभावित उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए समग्र जलचक्र का व्यापक एवं समग्र दृष्टिकोण के लिए जल बचाव/उपयोग/ रिसाईक्लीनिंग/ संरक्षण में लगे सभी मंत्रालयों/विभागों/एजेंसियों/अनुसंधान/ वित्तीय संस्थानों को एक मंच पर लाने के लिए समन्वय एजेंसी होगी। यह दिशानिर्देशों के साथ अनुरूपता में परियोजना प्रस्तावों/ डीपीआर की छंटाई को प्राथमिकता देगा और यह कि वे तकनीकी मानकों और वित्तीय मानदंडों के साथ अनुरूप होने के बावजूद यह एसआईपी/डीआईपी से निर्गत होंगे।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के लाभ के लिए कराएं रजिस्ट्रेशन

किसानों को प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना का लाभ देने के लिए रजिस्ट्रेशन करना होता है। इससे योजना में किसी तरह की गड़बड़ी की गुंजाइश अपने आप खत्म हो जाती है। इस योजना के जरिए एक किसान को सीधे तौर पर एक ही बार फायदा दिया जाता है। वह अन्य सामूहिक योजनाओं के जरिए अलग–अलग फायदा ले सकता है। उदाहरण के तौर पर यदि किसी किसान को स्प्रिंकलर योजना में लाभ लेना है तो उसे इस साल उद्यान विभाग प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना पर वन ड्रॉप मोर क्राप के जरिए फायदा मिलेगा। इस योजना से खेतों में स्प्रिंकलर व ड्रिप का इस्तेमाल किया जाएगा। बागवानी, कृषि एवं गन्ना फसल में अधिक दूरी एवं कम दूरी वाली फसलों के लिए ड्रिप सिंचाई पद्धति को लगाकर उन्नतिशील उत्पादन एवं जल संचयन किया जा सकेगा। इसी तरह मटर, गाजर, मूली सहित विभिन्न प्रकार की पत्तेदार सब्जियों के लिए सेमी परमानेंट के लिए स्प्रिंकलर, या रेनगन का प्रबंध किया जाएगा। इस सिंचाई पद्धति को अपनाकर 40.50 प्रतिशत पानी की बचत के साथ ही 35.40 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना–पंजीकरण कैसे कराएं

किसानों को रजिस्ट्रेशन के लिए योजना के पोर्टल पर जाना होगा। विभाग की वेबसाइट पर क्लिक करके अपना पंजीयन करें।

http://upagriculture.com/pm_sichai_yojna. पर जाकर पंजीकरण कर सकते हैं।

क्या–क्या होना चाहिए पंजीकरण में

पंजीकरण हेतु किसान के पहचान के लिए आधार कार्ड, भूमि की पहचान हेतु खतौनी एवं अनुदान की धनराशि के अंतरण हेतु बैंक पासबुक के प्रथम पृष्ठ की फोटोकापी लगाना अनिवार्य है। प्रदेश में ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणाली स्थापित करने वाली पंजीकृत निर्माता फर्मां में से किसी भी फर्म से कृषक अपनी इच्छानुसार स्प्रिंकलर खरीद सकते हैं। निर्माता फर्मां के स्वयं मूल्य प्रणाली के आधार पर भारत सरकार द्वारा निर्धारित इकाई लागत के सापेक्ष जनपद–स्तरीय समिति द्वारा भौतिक सत्यापन के उपरांत अनुदान की धनराशि डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर द्वारा सीधे लाभार्थी के खाते में अंतरित की जाएगी।

कैसे मिलता है योजना का लाभ

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना से मिलने वाले लाभ के लिए जिला कमेटी बाकायदा कैटेगरी तैयार करती है। इस योजना का लाभ सभी वर्ग के किसानों को दिया जाता है। योजना का लाभ प्राप्त करने हेतु इच्छुक कृषक के पास खुद की भूमि एवं जलस्रोत उपलब्ध होंना चाहिए। ऐसे लाभार्थियों को भी योजना का लाभ अनुमन्य होगा जो संविदा खेती यानी कांट्रैक्ट फार्मिंग करते हैं। इसमें उन किसानों को भी फायदा मिलेगा जो सात साल के लिए लीज एग्रीमेंट के आधार पर बागवानी या खेती करते हैं। लाभार्थियों को अनुदान के साधन या उनके ऋण के स्रोत से भेजे गए धन की राशि देने में सक्षम होगा।

मानव संसाधन विकास

योजनांतर्गत लाभार्थी कृषकों का दो दिवसीय प्रशिक्षण, प्रदेश से बाहर कृषक भ्रमण एवं मंडल–स्तर पर कार्यशाला गोष्ठी का आयोजन कर इस विधा के अंगीकरण हेतु लाभार्थी कृषकों के लिए तकनीकी जानकारी एवं कौशल अभिवृद्धि की सुविधा उपलब्ध है ।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। कृषि एवं किसानों के मुद्दे पर नियमित विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में लेखन कर रहे हैं।)

ई–मेल : chandrabhan0502@gmail.com

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना एवं कृषि ऋण

–सतीश सिंह

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के माध्यम से मोदी सरकार ने किसानों को राहत देने के लिए एक बड़ा फैसला किया है। योजना का उद्देश्य किसानों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति एवं कृषि उत्पादन पर प्रतिकूल असर नहीं पड़े, यह सुनिश्चित करना है। इसी क्रम में फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए किफायती दर पर फसली ऋण एवं दूसरे कृषि ऋणों की सुविधा किसानों को उपलब्ध कराई जा रही है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना देश में अपनी तरह की पहली योजना है, जिसका मकसद है फसल के खराब होने पर किसानों को मुआवजा उपलब्ध कराना। यह योजना राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना और संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का परिवर्धित रूप है। फसलों की बढ़ती लागत, होने वाले नुकसान और फसलों की कीमत में आ रही गिरावट से किसानों पर कर्ज का बोझ बढ़ रहा है, जिससे किसान मानसिक दबाव में हैं। कई राज्यों में इसी वजह से हाल ही में किसान आंदोलन हुए और कुछ किसान खुदकुशी करने के लिए मजबूर हुए। कई राज्य सरकारों को कृषि कर्ज को माफ भी करना पड़ा।

महात्मा गांधी कृषि की महत्ता से अवगत थे। इसीलिए उन्होंने कहा था कि "कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़" है। आज भी स्थिति कमोबेश वैसी ही है। कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है। इसका कुल सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 16 प्रतिशत का योगदान है, लेकिन इस पर लोगों की निर्भरता तकरीबन 52 प्रतिशत है। दरअसल, कृषि क्षेत्र में छदम रोजगार की स्थिति बनी हुई है। जिस काम को एक व्यक्ति कर सकता है उसे कई लोग मिलकर कर रहे हैं। मौजूदा समय में कृषि में तीव्र विकास न केवल आत्मनिर्भरता के लिए, बल्कि विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए जरूरी है। भारत के लघु और सीमांत किसान उत्पादन और उत्पादकता में किसी विदेशी किसान से कमतर नहीं हैं। वे विकसित देशों के किसानों की तरह ही बेहतर कृषि तकनीक अपनाकर अपेक्षित परिणाम देने में सक्षम हैं। समय पर उर्वरक, बीज, कीटनाशक एवं कम ब्याज दर पर कृषि ऋण, फसल बीमा आदि उपलब्ध होने पर भारतीय किसान भी राष्ट्र की खाद्य व पोषण सुरक्षा को सुनिश्चित करने में सक्षम हैं।

भारत में अभी भी खेती–किसानी बारिश पर निर्भर है। मानसून के अच्छे नहीं रहने पर फसल अक्सर बर्बाद हो जाती है। बाढ़ और सूखा भारतीय किसानों की नियति बन गई है। मानसून की अनिश्चितता के चलते किसानों के लिए एक नई फसल बीमा योजना की जरूरत काफी समय से महसूस की जा रही थी। इसी के मद्देनजर प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना प्रस्तावित की गई जिसे 13 जनवरी, 2016 को कैबिनेट ने अपनी मंजूरी दे दी। शुरू में बीमा दावे के निपटान की प्रक्रिया में कुछ खामियां थी, जिन्हें बाद में

लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर दूर किया गया। योजना को संबंधित राज्य सरकारों के साथ मिलकर लागू किया गया है। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय इस योजना के क्रियान्वयन पर निगरानी रखने का काम कर रहा है और इसके तहत 3 सालों के अंदर सरकार की योजना 8,800 करोड़ रुपये खर्च करने की है। इसके अलावा मंत्रालय 50 प्रतिशत किसानों को भी इस योजना की जद में लाना चाहता है।

मुख्य विशेषता

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत किसानों को खरीफ फसलों के लिए 2 प्रतिशत और रबी फसलों के लिए 1.5 प्रतिशत बीमा किस्त का भुगतान करना है। हां, वार्षिक फसलों जैसे, वाणिज्यिक एवं बागवानी फसलों के लिए 5 प्रतिशत की दर से बीमा किस्त देनी होगी। किसानों को आर्थिक मोर्चे पर असुविधा न हो, इसके लिए सरकार ने बीमा किस्त की दर को बहुत ही कम रखा है। हालांकि, बीमा कंपनियों को सरकार वास्तविक बीमा किस्त का भुगतान कर रही है, जिसका भार केंद्र और राज्य सरकार मिलकर उठा रहे हैं। गौरतलब है कि योजना के शुरू में बीमा किस्त दर पर ऊपरी सीमा का प्रावधान था, जिससे दावे की स्थिति में किसानों को कम राशि का मुआवजा मिलता था, लेकिन बाद में इस प्रावधान को हटा दिया गया। इस योजना को सशक्त बनाने के लिए प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल को तरजीह दी गई है। दावा भुगतान में देरी न हो, फसल कटाई का डाटा अद्यतन हो, आदि के लिए स्मार्ट फोन, रिमोट सेंसिंग ड्रोन और जीपीएस तकनीक का उपयोग चुनिंदा स्थानों पर किया जा रहा है। सरकार चाहती है कि सिर्फ मोबाइल के माध्यम से किसान अपनी फसल के नुकसान का पता कर सकें। इसके लिए किसानों के बीच जागरूकता अभियान चलाया जा रहा है। बीमा किस्त की दरों में एकरूपता लाने के लिए भारत के सभी जिलों को समूहों में दीर्घकालीन आधार पर विभाजित करने की योजना है। गौरतलब है कि इस योजना के अंतर्गत मानव निर्मित आपदाओं जैसे आग लगने, चोरी आदि होने को शामिल नहीं किया गया है। योजना के तहत संबंधित राज्य के अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, सामान्य वर्ग द्वारा भूमि–धारण के अनुपात में बजट आवंटन करने का प्रावधान है।

लक्ष्य

इस योजना का मकसद प्राकृतिक आपदाओं, कीटों व रोगों से फसलों को नुकसान होने पर किसानों को बीमा के रूप में वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना, किसानों की आय को स्थायित्व देना, कृषि में नवाचार एवं आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिए किसानों को प्रोत्साहित करना, कृषि क्षेत्र में ऋण के प्रवाह को सुनिश्चित करना आदि है।

पात्रता

इस बीमा योजना का लाभ अधिसूचित क्षेत्रों में फसल उगाने वाले पट्टेदार एवं जोतदार किसानों के साथ–साथ दूसरे सभी किसान ले सकते हैं। जिन किसानों ने बैंक से कर्ज नहीं लिया है वे भूमि रिकार्ड अधिकार, भूमि कब्जा प्रमाणपत्र आदि दस्तावेज प्रस्तुत करके योजना का लाभ ले सकते हैं। गैर–ऋणी किसानों के लिए यह योजना वैकल्पिक है। इसके तहत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिला किसान आदि को प्राथमिकता देने का प्रावधान है।

अधिसूचित क्षेत्र की संकल्पना

यह योजना प्रत्येक अधिसूचित फसल के लिए परिभाषित क्षेत्रों में लागू होगी। अधिसूचित क्षेत्र में फसल का नुकसान समान रूप से होता है अर्थात प्रति हेक्टेयर उत्पादन की लागत, प्रति हेक्टेयर तुलनीय कृषि आय और नुकसान के कारक एक रहने पर फसल को नुकसान भी समान रूप से होता है।

क्रियान्वयन एजेंसी

बीमा कंपनी के कामकाज की निगरानी केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय करेगा। मंत्रालय द्वारा अधिकृत भारतीय कृषि बीमा कंपनी एवं कुछ निजी बीमा कंपनियां सरकार द्वारा प्रायोजित प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के क्रियान्वयन में मदद करेंगी। निजी बीमा कंपनियों के चयन का अधिकार राज्य सरकारों को होगा, लेकिन पूरे राज्य के लिए एक ही बीमा कंपनी होगी। बीमा कंपनी का चयन 3 सालों के लिए किया जाएगा। हालांकि, राज्य सरकार, केंद्रशासित प्रदेश एवं बीमा कंपनी किसी समस्या के संदर्भ में दोबारा चर्चा करके उसका समाधान निकाल सकते हैं। इस संबंध में केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय किसानों के बीच सामाजिक व आर्थिक विकास को सुनिश्चित करने एवं किसानों को कम दर पर बीमा किस्त उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराएगा।

प्रबंधन

राज्य में बीमा योजना के सफल कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी राज्य–स्तरीय समन्वय समिति की है। वैसे, कृषि सहयोग और किसान कल्याण विभाग के संयुक्त सचिव (साख) की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय–स्तर की निगरानी समिति भी इस योजना का प्रबंधन करेगी। किसानों को समय पर अधिकतम लाभ मिले, इसके लिए प्रत्येक फसली मौसम के दौरान बीमित किसानों, ऋणी एवं गैर–ऋणी दोनों की सूची में अपेक्षित विवरण जैसे नाम, पिता का नाम, बैंक खाता नंबर, गांव, श्रेणी यथा, लघु या सीमांत, लाभार्थी का लिंग, रकबा, बीमित फसल, बीमा किस्त, सरकारी अनुदान आदि की सॉफ्ट प्रति तैयार रखने की जरूरत है। ऐसा करने से सभी किसानों के बीमा दावे को आसानी से निपटाया जा सकेगा। प्रबंधन बेहतर होने से संबंधित बीमा कंपनियों से दावा राशि मिलने के बाद वित्तीय संस्थान या बैंक 10 से 15 दिनों में दावा राशि को लाभार्थियों के खाते में सीधे हस्तांतारित कर सकेंगे। वैसे, इसके लिए बीमा कंपनियों द्वारा बैंकों को लाभार्थियों की खाता संख्या और दावा राशि की सॉफ्ट प्रति उपलब्ध कराने की जरूरत होगी। किसानों की सुविधा के लिए लाभार्थियों की सूची बैंकवार और क्षेत्रवार बीमा पोर्टल या

संबंधित बीमा कंपनियों की वेबसाइट पर अपलोड की जानी चाहिए।

वेबपोर्टल एवं मोबाइल एप

भारत सरकार ने इस योजना को ज्यादा उपयोगी बनाने के लिए एक बीमा पोर्टल भी शुरू किया है। इसके बरक्स एक एंड्रॉयड आधारित "फसल बीमा एप" बनाया गया है। इस एप को फसल बीमा, कृषि सहयोग और किसान कल्याण विभाग की वेबसाइट से डाउनलोड किया जा सकता है।

कृषि ऋण

मौजूदा समय में देश में सहकारी समितियां, क्षेत्रीय ग्रामीण एवं राष्ट्रीयकृत बैंक कृषि ऋण वितरण में अग्रणी हैं। इसके अलावा कृषक भारती को–ऑपरेटिव लिमिटेड, राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, कृषि और ग्रामीण विकास बैंक आदि भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों, जिसमें कृषि एक प्रमुख क्षेत्र है, के विकास के लिए निवेश की जरूरत है, जो कृषि ऋण के माध्यम से उपलब्ध कराया जा सकता है। इन उद्देश्यों को अमलीजामा पहनाने के लिए ही बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था। सरकार ने बैंकों को साफतौर पर कहा है कि वे कृषि क्षेत्र में ऋण वितरण का कार्य प्राथमिकता के आधार पर करें। सरकार की कोशिशों की वजह से ही चालू वित्त वर्ष में कृषि संस्थागत ऋण 10 लाख करोड़ रुपये के तय लक्ष्य को पार कर गया है।

कृषि ऋण के तहत फसल ऋण या किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी), कृषि गोल्ड ऋण, ट्रैक्टर ऋण, सहायक गतिविधियों के लिए डेयरी, पॉल्ट्री व फिशरीज ऋण, भूमि खरीदने के लिए ऋण आदि किसानों के बीच वितरित किए जा रहे हैं, लेकिन इनमें सबसे लोकप्रिय केसीसी है। वर्तमान में सभी बैंक एवं वित्तीय संस्थानों में भारतीय स्टेट बैंक कृषि वित्तपोषण में सबसे आगे है। राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा प्रदत्त कर्ज में ब्याज दर कम होती है, बिचौलिए नहीं होते हैं, छुपी हुई लागत भी नहीं होती है, ऋण देने में देरी नहीं की जाती है आदि।

किसान क्रेडिट कार्ड का उद्देश्य

- किसानों की फसली ऋण जरूरतों, मसलन, कृषि संबंधी खर्चों की पूर्ति, आकस्मिक खर्चों, सहायक कार्यकलापों से संबंधित खर्चों आदि के लिए।
- फसलोत्तर घरेलू उपभोग की आवश्यकताओं के लिए।
- कृषि आस्तियों, फसलों और वैयक्तिक दुर्घटना आदि के बीमा के लिए।
- ऋण सीमा का निर्धारण करते समय कृषि उपकरणों, जैसे, स्प्रेयर, हल आदि पर होने वाले खर्च को भी शामिल किया जाता है।

पात्रता

- केसीसी ऋण के पात्र सभी किसान, जिसमें भूमि के एकल या संयुक्त स्वामित्व, किराए के काश्तीकार, पट्टेदार या साझा किसान और स्वयंसहायता समूह के किसान शामिल हैं।

विशेषताएं

- पहले वर्ष के लिए अल्पावधि फसली ऋण सीमा प्रदान की जाती है, जो प्रस्तावित फसल पद्धति एवं वित्तीय मान के अनुसार उगाई गई फसलों पर आधारित होती है।
- केसीसी के उधारकर्ता को एक एटीएम सह–डेबिट कार्ड दिया जाता है, ताकि वे एटीएम एवं पीओएस में उपलब्ध सुविधाओं का लाभ उठा सकें।
- केसीसी खाते में जमा शेष रहने पर बचत खाते की दर पर ब्याज देने का प्रावधान है।
- तीन लाख रुपये तक की राशि पर प्रसंस्करण शुल्क आरोपित नहीं किया जाता है।
- एक लाख रुपये तक के ऋण के लिए संपार्श्विक प्रतिभूति नहीं ली जाती है।
- केसीसी खातों का हर साल नवीकरण करना जरूरी है, ताकि 5 वर्षों के लिए सतत आधार पर इसकी ऋण सीमा को जारी रखा जा सके।
- पात्र फसलों को फसल बीमा योजना मसलन, राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के तहत कवर किया जाता है।
- तीन लाख तक की ऋण राशि के लिए 2 प्रतिशत वार्षिक दर से ब्याज सहायता उपलब्ध कराई जाती है।
- समय पर ऋण एवं ब्याज चुकाने पर ब्याज दर में किसानों को 3 प्रतिशत की अतिरिक्त छूट दी जाती है।
- केसीसी की सुविधा लेने वाले किसानों की अधिसूचित फसलों को फसल बीमा का लाभ दिया जाता है।
- आने वाले वर्षों जैसे, दूसरे, तीसरे एवं चौथे साल में केसीसी की सीमा 10 प्रतिशत की दर से बढ़ाई जाती है। पांचवे साल में किसानों को अल्पावधि ऋण की सीमा पहले साल से लगभग 150 प्रतिशत अधिक की स्वीकृति दी जाती है।

ऋण के लिए आवेदन

- आवेदक किसी नजदीकी बैंक शाखा से संपर्क कर केसीसी प्राप्त कर सकते हैं।

ऋण राशि का निर्धारण

- एक वर्ष के लिए ऋण की राशि का निर्धारण फसल की लागत, फसल उगाने के बाद के खर्च और खेती के रखरखाव की लागत के आधार पर की जाती है।
- अगले 5 सालों के लिए खर्च की राशि में संभावित वृद्धि के आधार पर कर्ज की राशि स्वीकृत की जाती है।

ब्याज दर

- एक वर्ष के लिए या चुकौती की देय तिथि तक, जो भी पहले हो, 7 प्रतिशत वार्षिक दर से साधारण ब्याज आरोपित किया जाता है।
- देय तिथियों के अंदर चुकौती नहीं करने पर कार्ड दर से

छोटे किसानों के लिए संस्थागत ऋण

सरकार ने अब किसानों के लिए ऋण लेना ज्यादा आसान बना दिया है। उसने किसानों को रिकार्ड 10 लाख करोड़ रुपये का ऋण मुहैया कराने का लक्ष्य तय किया है। उसने किसानों के लिए संस्थागत ऋण का प्रवाह बढ़ाने के अनेक उपाय किए हैं। छोटे और सीमांत किसानों समेत ज्यादा–से–ज्यादा किसानों को संस्थागत ऋण के दायरे में लाने के लिए भी कदम उठाए गए हैं। इनमें से कुछ उपाय इस प्रकार हैं–

1. **ब्याज सहायता योजना (आईएसएस):** इस योजना के तहत किसानों को साल भर तक के लिए सात प्रतिशत की रियायती सालाना ब्याज दर पर अधिकतम तीन लाख रुपये का अल्पकालिक फसल ऋण मुहैया कराया जाता है। ऋण जल्दी वापस करने वाले किसानों को ब्याज में वार्षिक तीन प्रतिशत की अतिरिक्त रियायत भी दी जाती है। इस तरह उन्हें सिर्फ चार प्रतिशत वार्षिक ब्याज दर का भुगतान करना पड़ता है। आईएसएस के तहत इतनी ही ब्याज दर पर अधिकतम छह माह के लिए फसल पश्चात ऋण भी मुहैया कराया जाता है।
2. **प्राथमिक क्षेत्र के लिए ऋण दिशानिर्देशः** भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने प्राथमिक क्षेत्र के लिए ऋण दिशानिर्देश जारी किए हैं। इन दिशानिर्देशों में सभी स्वदेशी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के लिए अनिवार्य किया गया है कि वे अपने समायोजित शुद्ध बैंक ऋण का 18 प्रतिशत हिस्सा कृषि क्षेत्र में कर्ज देने के लिए रखें। इस 18 प्रतिशत में आठ फीसदी हिस्सा छोटे और सीमांत किसानों के लिए रखा गया है ताकि उन तक ऋण का प्रवाह बढ़ाने में मदद मिले।
3. **किसान क्रेडिट कार्डः** सरकार की किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मकसद किसानों को खेती और अन्य जरूरतों के लिए बैंकिंग प्रणाली से पर्याप्त और समय पर ऋण उपलब्ध कराना है। किसान कार्ड पांच साल के लिए होता है जिसके बाद इसका हर साल आसानी से नवीकरण कराया जा सकता है। सभी बैंकों को इस योजना को लागू करने की सलाह दी गई है।
4. **संयुक्त देनदारी समूह (जेएलजी):** छोटे और सीमांत किसानों, काश्तकारों और बंटाईदारों को संस्थागत ऋण के दायरे में लाने के लिए बैंक इस तरह के समूहों को बढ़ावा देते हैं। वित्त वर्ष 2014–15 के केंद्रीय बजट में भूमिहीन किसानों के पांच लाख जेएलजी के लिए वित्तीय व्यवस्था की घोषणा की गई थी। इससे वित्त व्यवस्था की जेएलजी योजना के जरिए नवाचार और भूमिहीन किसानों तक पहुंच बनाने की राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की कोशिशों को और बल मिला है।
5. आरबीआई ने 18 जून, 2010 के अपने परिपत्र के जरिए बैंकों को सलाह दी है कि वे एक लाख रुपये तक के कृषि ऋण के लिए मार्जिन और जमानत की जरूरत को खत्म करें।
6. **प्राकृतिक आपदाओं के समय राहत के उपायः** आरबीआई ने प्राकृतिक आपदा से प्रभावित क्षेत्रों में चलाए जाने वाले संबंधित ऋणदाता संस्थानों के राहत उपायों के बारे में निर्देश जारी किए हैं। इन उपायों में मौजूदा फसल ऋण और मियादी कर्ज का पुनर्संयोजन और पुनर्निधारण शामिल है। इसके अलावा नए ऋण देना, जमानत और मार्जिन में ढिलाई तथा कर्ज वसूली पर रोक जैसे उपाय भी किए जाते हैं। संबंधित जिले के अधिकारियों की ओर से आपदा घोषित किए जाने के साथ ही ये उपाय बिना किसी हस्तक्षेप के स्वतः लागू हो जाते हैं जिससे कीमती समय की बचत होती है। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन फ्रेमवर्क के अनुरूप बैंकों द्वारा राहत उपाय शुरू किए जाने के लिए न्यूनतम मानदंड को भी घटाकर 33 प्रतिशत फसल की क्षति किया गया है।

ब्याज वसूल किया जाता है।

- देय तिथि के बाद छमाही अंतराल पर चक्रवृद्धि ब्याज लिया जाता है।

चुकौती

- जिन फसलों के लिए ऋण संस्वीकृत किया गया है, की अपेक्षित फसल कटाई एवं विपणन अवधि के अनुसार चुकौती अवधि निर्धारित की जाती है।

आवश्यक दस्तावेज

- विहित प्रपत्र में भरा हुआ आवेदन–पत्र।
- पहचान प्रमाण यथा, मतदाता पहचान–पत्र, पेन कार्ड, पासपोर्ट, आधार कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस आदि।
- आवास प्रमाणपत्र जैसे, मतदाता पहचान–पत्र, पासपोर्ट, आधार कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस आदि।

अन्य कृषि व संबद्ध ऋण

किसानो को केसीसी के अलावा अन्य गतिविधियों जैसे, डेयरी, वृक्षारोपण, बागवानी, लघु सिंचाई, लिफ्ट सिंचाई, भूमि विकास, भेड़, बकरी, सूअर, पोल्ट्री एवं मत्स्यपालन, रेशम उत्पादन, आदि के लिए भी कर्ज दिए जाते हैं।

भंडारण ऋण पर कम ब्याज दर

किसान मजबूरी में कम कीमत पर अपनी फसल को नहीं बेचें, इसके लिए गोदाम में रखे अनाजों के बदले जारी रसीदों के एवज में ऋण देने का प्रावधान है। ऐसे ऋणों में ब्याज दर में छूट का लाभ फसल के छह महीने तक की अवधि के लिए किसान क्रेडिट कार्डधारक, छोटे और सीमांत किसानों के लिए उपलब्ध है। इसमें ब्याज दर केसीसी के बराबर आरोपित किया जाता है।

बदलते परिवेश में सरकारी प्रयास

इसमें दो राय नहीं है कि प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना मोदी सरकार की एक महत्वाकांक्षी योजना है। शुरू में कुछ लोग कह रहे थे कि इस योजना से बीमा कंपनियों को फायदा हो रहा है। कुछ दूसरी खामियों को लेकर भी सरकार की आलोचना कर रहे थे, जिन्हें देखते हुए प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इसे बेहतर बनाने के लिए नीति आयोग को सुझाव देने के लिए कहा। तदुपरांत, योजना को सशक्त बनाने के लिए आयोग ने एक ब्लूप्रिंट भी तैयार किया। योजना में कुछ महत्वपूर्ण बदलाव भी किए गए, लेकिन सुधार की गुंजाइश अभी भी बरकरार है, जिससे सरकार अवगत है और इस दिशा में बेहतरी के लिए वह लगातार प्रयास भी कर रही है। सरकार चाहती है कि बीमा की किस्त को और भी कम किया जाए। साथ ही, इसके कवरेज के दायरे को बढ़ाया जाए। सरकार तो यह भी चाहती है कि इस योजना के तहत प्राकृतिक आपदा से मकान एवं संपत्ति को नुकसान होने पर भी किसानों को बीमा का लाभ मिले। मौजूदा समय में किसानों को ज्यादातर फसलों के लिए 1.5 प्रतिशत से 2 प्रतिशत तक बीमा किस्त देना पड़ रहा है, जबकि बीमा कंपनियों की लागत लगभग 11 प्रतिशत है, जिसे केंद्र और राज्य सरकार मिलकर बराबर अनुपात में वहन कर रहे हैं।

केंद्र सरकार ने मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के किसानों के आंदोलनरत होने के बाद सस्ती कृषि कर्ज योजना के लिए आवंटित 15,000 करोड़ रुपये को बढ़ाकर 20,339 करोड़ रुपये कर दिया, जिसे कैबिनेट ने चालू वित्त वर्ष 2017–18 के लिए ब्याज अनुदान के रूप में मंजूरी दी है। कैबिनेट की बैठक में किसानों को सस्ता कर्ज मुहैया कराने के प्रस्ताव को भी मंजूरी दी गई। अब किसानों को 9 प्रतिशत ब्याज दर पर मिलने वाला कर्ज सिर्फ 4 प्रतिशत ब्याज दर पर मिलेगा। इसके लिए कर्ज की अधिकतम सीमा तीन लाख रुपये रखी गई है। कर्ज की 9 प्रतिशत ब्याज दर में से 5 प्रतिशत ब्याज का भुगतान सरकार करेगी।

उल्लेखनीय है कि किसानों को लाभ देने के लिए शुरू में खुद की निधि इस्तेमाल करने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, सहकारी, निजी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के वित्तपोषण के लिए नाबार्ड को ब्याज अनुदान देने की व्यवस्था की गई है। सरकार, बैंक, अन्य वित्तीय संस्थान, नाबार्ड और रिजर्व बैंक मिलकर इस कार्य को पूरा करेंगे। ब्याज अनुदान एक साल के लिए दिया जाएगा। किसानों को ऐसे ऋण एक वर्ष में चुकाने होंगे। समय पर कर्ज लौटाने वाले किसानों को ब्याज दर में 3 प्रतिशत की अतिरिक्त छूट देने का प्रावधान भी सरकार ने किया है। सरकार को उम्मीद है कि इससे किसान सही वक्त पर कर्ज लौटाने के लिए प्रोत्साहित होंगे एवं कर्जमाफी की मांग में कमी आएगी।

सरकार द्वारा ब्याज अनुदान देने का मकसद किसानों को आर्थिक मोर्चे पर सहायता उपलब्ध कराना है। लघु एवं सीमांत किसानों को राहत मुहैया कराने के लिए फसलों की कटाई के बाद अनाजों के भंडारण पर लिए गए कर्ज पर 9 प्रतिशत की दर से लगने वाले ब्याज में 2 प्रतिशत की कटौती की गई है अर्थात ऐसे कर्जदार किसानों को 6 महीने तक के कर्ज पर महज 7 प्रतिशत की दर से ही ब्याज देना होगा।

निष्कर्ष

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के माध्यम से मोदी सरकार ने किसानों को राहत देने के लिए एक बड़ा फैसला किया है। योजना का उद्देश्य किसानों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति एवं कृषि उत्पादन पर प्रतिकूल असर नहीं पड़े, यह सुनिश्चित करना है। इसी क्रम में फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए किफायती दर पर फसली ऋण एवं दूसरे कृषि ऋणों की सुविधा किसानों को उपलब्ध कराई जा रही है। हालांकि, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का लाभ लेने के लिए कर्ज लेना जरूरी नहीं है, लेकिन कर्ज लेने पर फसलों का बीमा कराना आवश्यक है। अस्तु, कर्ज के माध्यम से किसान अपने जोखिम का आसानी के साथ प्रबंधन कर सकते हैं।

कृषि कर्ज लेने की प्रक्रिया आसान है। सरकार ने बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थानों को स्पष्ट दिशा–निर्देश दिए हैं कि वे किसानों को कर्ज देने में कोताही नहीं करें। साथ ही, ऋण प्रक्रिया को और भी आसान बनाएं। सरकार के प्रयासों का ही नतीजा है कि प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत बीमा की किस्त बहुत ही कम रखी गई है और सस्ती दर पर कृषि ऋण भी किसानों को उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

बीते महीनों किसानों की जरूरतों को देखते हुए कुछ राज्य सरकारों ने कृषि कर्ज को माफ भी किया था। कृषि कर्ज गैर–निष्पादित आस्ति नहीं बनें, इसके लिए सरकार ने उन किसानों को रियायत देने का फैसला किया है, जो समय पर कर्ज की किस्त एवं ब्याज चुका रहे हैं। इस तरह, एक तरफ सरकार किसानों को कम प्रीमियम पर फसल बीमा की सुविधा उपलब्ध करा रही है तो दूसरी तरफ वास्तविक प्रीमियम का भुगतान राज्य सरकारों के साथ मिलकर बीमा कंपनियों को कर रही है। कृषि कर्ज के मामले में भी किसानों के आर्थिक बोझ को कम करने के लिए सरकार उन्हें ब्याज अनुदान दे रही है।

कहा जा सकता है कि किसान, बैंक और बीमा कंपनी को किसी तरह का नुकसान न हो, यह सुनिश्चित करने की सरकार निरंतर कोशिश कर रही है। सरकार की यह कल्याणकारी पहल बेहद ही सराहनीय है। सच कहा जाए तो यह योजना "एक राष्ट्र एक योजना" की संकल्पना पर आधारित है, जिसमें पुरानी योजनाओं की सभी अच्छाईयों को आत्मसात करते हुए उनमें अंतर्निहित खामियों का निराकरण किया गया है।

(लेखक भारतीय स्टेट बैंक के कॉरपोरेट केंद्र, मुंबई के आर्थिक अनुसंधान विभाग में मुख्य प्रबंधक के रूप में कार्यरत हैं और भारतीय स्टेट बैंक, मुंबई द्वारा आर्थिक एवं बैंकिंग विषयों पर प्रकाशित पत्रिका "आर्थिक दर्पण" के संपादक हैं।)

ई–मेल : satish5249@gmail.com

मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण

–गजेन्द्र सिंह 'मधुसूदन'

मृदा स्वास्थ्य कार्ड से किसानों को मृदा में पोषक तत्वों के विषय में तथा इन तत्वों की कमी को दूर कर मृदा स्वास्थ्य में सुधार लाने और इसकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए पोषक तत्वों की उचित मात्रा की अनुशंसाओं को प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। इसके तहत नियमित तौर पर देश के सभी खेतों के मृदा स्वास्थ्य–स्तर का मूल्यांकन करने की योजना है ताकि मृदा में पोषक तत्वों की कमियों को चिन्हित कर आवश्यक सुधार किए जा सकें।

पृथ्वी पर पादप जैव विविधता का अस्तित्व मृदा स्वास्थ्य पर निर्भर है क्योंकि स्वस्थ मृदा पर ही पौधों का प्रजनन और संवर्धन होता है। कृषि व्यवसाय का पल्लवन और प्रवर्धन पूरी तरह मृदा पर निर्भर है। मृदा, भूमि के ऊपरी भाग का वह प्राकृतिक आवरण है जो विच्छेदित, अपक्षयित खनिजों व कार्बनिक पदार्थों के विगलन से निर्मित पदार्थों और परिवर्तनशील मिश्रण से परिच्छेदिका के रूप में संश्लेषित होता है। मृदा जनन एक जटिल व सतत प्रक्रिया है। पैतृक शैलें, जलवायु, वनस्पति, भूमिगत जल और सूक्ष्म जीव सहित कई कारक मृदा की प्रकृति को निर्धारित करते हैं। स्थानीय उच्चावच, जलीय दशाएं, मिटटी के संघटक और पीएच मान आदि मृदा की विशेषताओं को निर्धारित करते हैं। लेकिन इन सबमें जलवायु मृदा निर्माण के विभिन्न प्रक्रमों जैसे लेटरीकरण, पाड़जोलीकरण, कैल्सीकरण, लवणीकरण, क्षारीयकरण आदि निर्धारण में सक्रिय भूमिका निभाती है।

मृदा संगठन में कार्बनिक पदार्थ 5 से 10 प्रतिशत, खनिज पदार्थ 40 प्रतिशत, मृदा जल 25 प्रतिशत, मृदा वायु 25 प्रतिशत सहित मृदा जीव व मृदा अभिक्रियाएं भागीदार होते हैं। ये सभी प्रकार की मृदाओं में कम या अधिक मात्रा में प्रायः कलिकीय पदार्थों के रूप में पाए जाते हैं, जो मृदा की उर्वरता को बढ़ाते हैं। मृदा में अनेक आवश्यक खनिज और पोषक तत्व अधिक या कम मात्रा में पाए जाते हैं। अमरीकी वैज्ञानिक आरनोन ने पौधे की वृद्धि हेतु 16 आवश्यक पादप तत्व बताए हैं जिनमें 3 गैसीय, 3 प्राथमिक, 3 द्वितीयक और 7 सूक्ष्म पोषक तत्व हैं। इन तत्वों की उपलब्धता और भिन्नता के आधार पर आईसीएआर ने वर्ष 1986 में भारतीय भूमि में आठ प्रमुख और 27 गौण प्रकार की मिट्टियों की पहचान की है। इन आठ प्रधान मृदाओं में कापीय, जलोढ़, काली, लैटराइट, शुष्क, लवणीय, पीटमय एवं जैव वनीय मृदा शामिल हैं। इनमें से कापीय मृदा 43.4 प्रतिशत, लाल मृदा 18.6 प्रतिशत, काली मृदा 15.2 प्रतिशत, लैटराइट मृदा 3.7 प्रतिशत और अन्य मृदाएं 17.9 प्रतिशत भारतीय क्षेत्र पर विस्तृत हैं। आमतौर पर मृदा में नाइट्रोजन, पोटेशियम, फास्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम, कार्बन, आक्सीजन और हाइड्रोजन अधिक मात्रा में तथा लौह, गंधक, सिलिका, क्लोरीन, मैंगनीज, जस्ता, निकेल, कोबाल्ट, मोलिब्डनम, तांबा, बोरान व सैलिनियम अल्प–मात्रा में प्राप्त पोषक हैं जो अंततः मृदा का निर्माण करते हैं। इस तरह किसी क्षेत्र की मृदा में इन पोषकों की मौजूदगी से उस क्षेत्र में खेती का स्वरूप, फसल चक्र और उत्पादकता निर्धारित होती है। इसलिए किसान को खेती करने से पहले खेत की मृदा में धारित विविधता के साथ फसल विशेष के लिए उपयुक्त मृदा की जानकारी और उसमें यथेष्ठ उत्पादकता के लिए आवश्यक पोषकों की समझ होना जरूरी है और इस समझ के अनुरूप खेती करने से ही मृदा के उपजाऊपन का अधिकतम संभव प्रयोग किया जा सकता है। देश के किसानों में इस समझ को विकसित करने में मदद के लिए भारत सरकार ने मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना शुरू की है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड (एसएचसी) योजनाः– कृषकों को उपयुक्त आगतों का उपयोग करते हुए उत्पादकता में सुधार के वास्ते एक महत्वाकांक्षी पहल के रूप में 19 फरवरी, 2015 को प्रधानमंत्री ने राजस्थान के श्री गंगानगर जिले के सूरतगढ़ में मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना का शुभारंभ किया ताकि एक किसान को इस बात की जानकारी हो कि वह जिस भूमि पर खेती करना चाहता है, उसकी सेहत कैसी है। देशभर के किसानों को इस योजना का फायदा पहुंचाने के उद्देश्य से केंद्र सरकार द्वारा अगले तीन वर्षों में

14.5 करोड़ किसानों को राष्ट्रीय मृदा स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराने का प्रावधान किया है। इसके द्वारा मृदा की स्थिति का हर 2 वर्षों के चक्र में नियमित रूप से मूल्यांकन किया जाना है। अभी किसानों को वितरण के लिए 12 करोड़ एसएचसी बनाने हेतु परीक्षण के लिए 253 लाख मिट्टी के नमूने एकत्र किए जा रहे हैं। इस कार्ड में मृदा की उर्वराशक्ति के साथ किसानों के लिए विभिन्न प्रकार के उर्वरकों के उपयोग की जानकारी भी होती है ताकि किसान उसी के अनुरूप खेती करके फसलों का उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ा सके। वैसे तो राज्यों के स्तर पर ऐसी योजनाएं पहले भी संचालित होती रही हैं। तमिलनाडु वर्ष 2006 से ही इन्हें जारी कर रहा है। इसके अलावा आंध्रप्रदेश, गुजरात, हरियाणा जैसे राज्य इन कार्डों का वितरण पिछले कई वर्षों से सफलतापूर्वक कर रहे हैं। 12 मई, 2015 को पंजाब कृषि विभाग किसानों को व्यक्तिगत मृदा सेहत कार्ड जारी करने के कार्य का शुभारंभ कर सभी किसानों को एसएचसी जारी करने वाला प्रथम राज्य बन गया है। इसके लिए प्रत्येक जिले को एक मोबाइल मृदा परीक्षण प्रयोगशाला प्रदान की गई है जो प्रत्येक खेत से मिट्टी के नमूने लेकर डिजिटल एसएचसी जारी करती है। लेकिन भारत सरकार द्वारा इस योजना को संचालित करने का उद्देश्य देशभर के किसानों को एसएचसी जारी करना है। यह देशव्यापी–स्तर पर भारत सरकार द्वारा राज्यों के सहयोग से उनके कृषि विभाग के स्वामित्व वाले एसटीएल और उनके स्वयं के स्टॉफ सहित आउटसोर्स एजेंसी के कर्मचारी, आईसीएआर के संस्थानों सहित केवीके और एसएयू में, विज्ञान कॉलेजों/विश्वविद्यालयों की प्रयोगशालाओं, प्रोफेसर/कृषि वैज्ञानिक की देखरेख में छात्रों के द्वारा चलाई जा रही है।

एसएचसी की अनूठी विशेषताओं में मिट्टी के नमूनों के संग्रह और प्रयोगशालाओं में परीक्षण के लिए एक समान दृष्टिकोण, देश के सभी खेतों का सार्वभौमिक कवरेज और हर दो साल बाद मृदा स्वास्थ्य कार्ड जारी करना शामिल है। इसमें पहली बार एक एकीकृत मिट्टी नमूनाकरण मानदंड अपनाकर सिंचित क्षेत्र में 2.5 हेक्टेयर पर और गैर–सिंचित क्षेत्र में 10 हेक्टेयर के ग्रिड में नमूने एकत्र किए जाते हैं। इसमें जीपीएस–आधारित मिट्टी नमूनाकरण अनिवार्य कर दिया गया है ताकि एक व्यवस्थित डाटाबेस तैयार किया जा सके और वर्ष में मिट्टी के स्वास्थ्य में परिवर्तन की निगरानी की जा सके। इसके तहत प्राथमिक, माध्यमिक, सूक्ष्म व अन्य पोषकों सहित 12 मृदा स्वास्थ्य मापदंडों का व्यापक विश्लेषण किया जाता हैं जिसमें माध्यमिक और सूक्ष्म पोषक तत्वों का विश्लेषण अनिवार्य है। एसएचसी में मिट्टी परीक्षण आधारित फसलवार वैज्ञानिक रूप से पोषक उर्वरक के सिफारिश की विधि अपनाई जा रही है। मिट्टी के नमूनों के पंजीकरण के लिए, नमूनों के परीक्षण के परिणामों को रिकॉर्ड करने और उर्वरक सिफारिशों के साथ एसएचसी के लिए पोर्टल www.soilhealth.dac.gov.in विकसित किया गया है। इसमें मृदा नमूना पंजीकरण, मृदा परीक्षण प्रयोगशाला द्वारा टेस्ट परिणाम की प्रविष्टि, जीएफआर के आधार पर उर्वरक सिफारिशें और सूक्ष्म पोषक सुझावों के साथ एसएचसी का सृजन और निगरानी के लिए एमआईएस मॉड्यूल प्रगति आदि सुविधाएं प्रदान की गई हैं। इसके अलावा इसमें शोध और नियोजन के लिए भविष्य में उपयोग हेतु मृदा स्वास्थ्य पर एक राष्ट्रीय डाटाबेस निर्माण करने की परिकल्पना की गई है।

'स्वस्थ धरा खेत हरा' के घोष वाक्य की एसएचसीयोजना में खर्च की 75 फीसदी राशि केंद्र सरकार वहन कर रही है और इसके अलावा मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं स्थापित करने के लिए भी राज्यों को सहायता मुहैया कराई जा रही है। इस योजना के तहत भारत सरकार द्वारा वर्ष 2014–15 में 23.56 करोड़, वर्ष 2015–16 में 96.43 करोड़, वर्ष 2016–17 में 133.66 करोड़, वर्ष 2017–18 में 114.33 करोड़ रुपये सहित अब तक कुल 367.98 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। इस योजना के पहले चरण (फरवरी 2015 से अप्रैल 2017) में 2 जनवरी, 2018 तक 253 लाख मृदा नमूने एकत्रीकरण के लक्ष्य के मुकाबले 246.02 लाख नमूनों का परीक्षण किया गया, जो निर्धारित लक्ष्य का करीब 97 प्रतिशत है और 1198 लाख एसएचसी के लक्ष्य के मुकाबले, 1022.96 लाख एसएचसी किसानों को वितरित किए गए हैं, जो निर्धारित लक्ष्य का करीब 85 प्रतिशत है। इसी प्रकार योजना के दूसरे चरण (1 मई, 2017 से शुरू) में 2 जनवरी, 2018 तक वर्ष 2017–18 के लिए 127.16 लाख नमूना संग्रह के लक्ष्य के मुकाबले 98.75 लाख नमूने एकत्र किए गए और 54.45 लाख नमूनों का परीक्षण किया गया है और 624.08 लाख एसएचसी के लक्ष्य के मुकाबले 99.50 लाख कार्ड किसानों को वितरित किए गए हैं।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना के उद्देश्य

- मृदा स्वास्थ्य कार्ड से किसानों को मृदा में पोषक तत्वों के विषय में तथा इन तत्वों की कमी को दूर कर मृदा स्वास्थ्य में सुधार लाने और इसकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए पोषक तत्वों की उचित मात्रा की अनुशंसाओं को प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।
- इसके तहत नियमित तौर पर देश के सभी खेतों के मृदा स्वास्थ्य–स्तर का मूल्यांकन करने की योजना है ताकि मृदा में पोषक तत्वों की कमियों को चिन्हित कर आवश्यक सुधार किए जा सके।
- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के संपर्क में क्षमता निर्माण कृषि विज्ञान के छात्रों को शामिल करके मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं के क्रियाकलाप को सशक्त बनाना।
- राज्यों में मृदा नमूने के लिए मानकीकृत प्रक्रियाओं के साथ मृदा उर्वरता संबंधी बाधाओं का पता लगाना और विश्लेषण करना तथा विभिन्न जिलों में तालुका/प्रखण्ड–स्तरीय उर्वरक संबंधी सुझाव तैयार करना।

- पोषक प्रबंधन परंपराओं को बढ़ावा देने के लिए जिला और राज्य–स्तरीय कर्मचारियों के साथ–साथ प्रगतिशील किसानों की क्षमता का निर्माण करना।
- किसानों को तकनीकी नवप्रर्वतन और अभिनव प्रयोगों द्वारा खेती करने हेतु अभिप्रेरित करना और खेत विशेष की मृदा में प्रासंगिक फसल चक्र अपनाने में मदद करना।
- मृदा की उर्वराशक्ति की जांच करके फसल व किस्म विशेष के लिए पोषक तत्वों की संतुलित मात्रा की सिफारिश करना और यह मार्गदर्शन करना कि उर्वरक व खाद का प्रयोग कब व कैसे करें।
- मृदा में लवणता, क्षारीयता तथा अम्लीयता की समस्या की पहचान व जांच के आधार पर भूमि सुधारों की मात्रा व प्रकार की सिफारिश कर भूमि को फिर से कृषि योग्य बनाने में योगदान करना।
- भूमि की उपयुक्तता का पता लगाना और उर्वराशक्ति को मानचित्र पर प्रदर्शित करना तथा उर्वरकों की आवश्यकता का पता लगाना। इस प्रकार की सूचना प्रदान कर उर्वरक वितरण एवं उपयोग में सहायता करना।

मृदा स्वास्थ्य की जांचः– सबसे पहले किसान के खेत की मिट्टी का नमूना लिया जाता है। उसके बाद उस मिट्टी के नमूने को परीक्षण प्रयोगशाला में भेजा जाता है। फिर विशेषज्ञ मिट्टी की जांच करके मिट्टी के बारे में सभी जानकारियां प्राप्त करते हैं। उसके बाद रिपोर्ट तैयार करते हैं कि कौन–सी मिट्टी में कौन–कौन से पोषक कम या ज्यादा है। उसके बाद इस रिपोर्ट को एक–एक करके किसान के नाम के साथ अपलोड किया जाता है जिससे किसान अपनी मिट्टी की रिपोर्ट जल्द से जल्द देख सकें और उसके मोबाइल पर इसकी जानकारी दी जाती है। बाद में किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्रिंट करके दिया जाता है। मिट्टी के नमूनों की जांच में तेजी लाने के लिए सरकार ने मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन योजना के तहत 460 नई मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं को मंजूर किया है। मोबाइल मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं के अलावा कृषि मंत्रालय ने वित्तीय वर्ष 2016–17 में 2296 मिट्टी परीक्षण की छोटी प्रयोगशालाओं को काम करने की मंजूरी प्रदान की है। इससे सुदूर इलाकों में मिट्टी के परीक्षण में तेजी आएगी। इससे तकनीकी रूप से कुशल और शिक्षित ग्रामीण युवाओं के लिए भी रोजगार के अवसर पैदा हुए हैं। ये एसएचसी से मिट्टी की उर्वरकता में सुधार लाने में कई तरीके से मदद करते हैं। इसमें जांच के पहले चरण में मिट्टी में मौजूद पोषक तत्वों नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम, सूक्ष्म पोषक तत्वों और पीएच का पता लगाया जाता है। इन बुनियादी जानकारियों का उपयोग कर किसान दूसरे चरण में विशिष्ट खुराक का उपयोग कर मिट्टी की उर्वरकता में सुधार कर पैदावार बढ़ा सकता है। देश में स्थापित प्रयोगशालाओं में मृदा की जांच के बाद प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर किसानों को उर्वरकों/खादों एवं अन्य पोषकों को प्रयोग करने की सलाह दी जाती है। एसएचसी में मृदा के विभिन्न मानकों जैसे कार्बनिक पदार्थों, कार्बन, पीएच मान, उपलब्ध नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश का विस्तृत ब्यौरा तैयार किया जाता है यानी मृदा में जिस तरह की समस्या हो, उसी तरह का निदान किया जाता है। इससे यह पता लग जाता है कि किसी विशेष खेत की मृदा में कौन–कौन से पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में हैं और किन–किन पोषक तत्वों की कमी है। पोषक तत्वों के साथ–साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक दशा का भी ज्ञान हो जाता है। इसके अलावा खेत की अम्लीयता व क्षारीयता का भी पता चल जाता है। इन कार्डों में किसानों के खेतों की मिट्टी में मौजूद पोषक तत्वों की स्थिति के आधार पर सलाह होती है। इसमें मिट्टी की बर्बादी रोकने और मिट्टी की उर्वरता में सुधार के लिए किस तरह के मृदा प्रबंधन करने की जरूरत है, इसके बारे में भी सुझाव दिए गए होते हैं। ये कार्ड तीन फसल–चक्रों के लिए जारी किए जाते हैं, जिसमें प्रत्येक फसल–चक्र के बाद की मृदा की स्थिति दर्ज होगी। इस प्रकार एसएचसी केवल एक फसल–चक्र का समाधान नहीं है, बल्कि यह एक सतत प्रक्रिया है जिससे किसानों को मृदा स्वास्थ्य पर मूलभूत जानकारी उपलब्ध होती है।

खेती में अनवरत अपेक्षित उत्पादकता बनाए रखने हेतु मृदा का स्वस्थ होना आवश्यक है। इसके लिए कृषकों को नियमित अंतराल में अपने खेतों का मृदा परीक्षण अवश्य कराते रहना चाहिए। यदि किसान व्यक्तिगत–स्तर पर अपने खेत की मृदा के स्वास्थ्य की जांच कराना चाहते हैं, तो मृदा नमूने हमेशा रबी या खरीफ फसलों की कटाई उपरांत लेने चाहिए। अगर पूरे खेत में वही फसल ली गई हो और समान मात्रा में उर्वरक डाले गई हों, फसल की पैदावार एक–सी रही हो, ज़मीन समतल, समरूप और देखने में एक जैसी लगती हो, तो संपूर्ण खेत में एक ही संयुक्त नमूना लें अन्यथा खेत को समान गुण वाले संभव भागों में बांटकर उनसे अलग–अलग नमूने लेने चाहिए। एक हेक्टेयर

मृदा स्वास्थ्य कार्ड की स्थिति (23 जनवरी, 2018 को) प्रिंट और वितरित किए गए एसएचसी

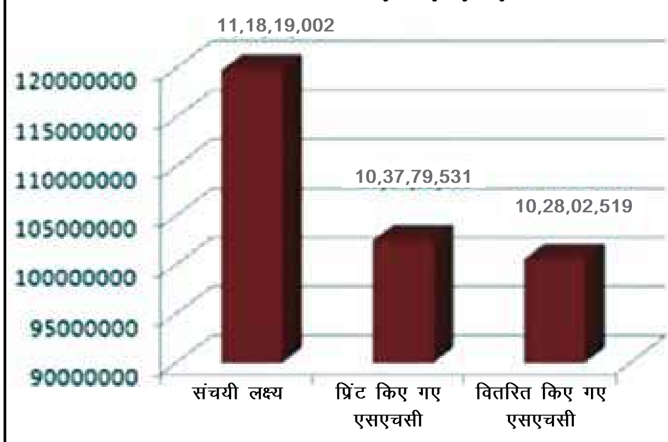

स्रोत : http : // www.soilhealth.doc.gov.in/content/blue/soil/index.html

खेत से प्राथमिक नमूना लेने के लिए और आकस्मिक चयन द्वारा 15–16 स्थानों को निश्चित कर लेना चाहिए। अंग्रेजी के वी आकार का लगभग 20–30 सेंमी गहरा गढ्डा खोदकर खुर्पी की सहायता से ऊपर से नीचे तक 0–20 सेंमी, करीब 1.5 सेंमी समान मोटाई के दोनों बगलों की तिरछी परत निकाल लेनी चाहिए। मिट्टी का नमूना लेकर अपने नजदीकी कृषि विश्वविद्यालय, कृषि अनुसंधान केंद्रों, कृषि विज्ञान केंद्रों, कृभको व इफको इत्यादि के मृदा परीक्षण केंद्रों में भेजा जा सकता है। इन केंद्रों पर मृदा की जांच सामान्यतया निशुल्क की जाती है। इस समय देशभर में कुल 680 कृषि विज्ञान केंद्र कार्यरत हैं।

एसएचसी की आवश्यकताः– आज भी हमारे सकल घरेलू उत्पाद का छठवां भाग खेती से संबद्ध गतिविधियों से आय अर्जन करता है और देश की आधी आबादी अपनी आजीविका के लिए इस पर निर्भर है। लेकिन कृषि की बढ़ती लागतें, महंगी होती आगतें और मृदा की बिगड़ती सेहत की वजह से कृषि संसाधनों का अधिकतम उपयोग नहीं हो पा रहा है। उर्वरकों का असंतुलित उपयोग, जैविक तत्वों का कम प्रयोग और पिछले कुछ दशकों से घटते पोषक तत्वों की गैर–प्रतिस्थापना के परिणामस्वरूप देश के कुछ भागों में मृदा उर्वरता और उसमें पोषक तत्वों की मात्रा तेजी से घटी है। इसके बावजूद कृषकों को मृदा स्वास्थ्य के बारे मे नियमित अंतरालों पर आकलन करने की आवश्यकता होती है ताकि वे मृदा में पहले से मौजूद पोषकों का लाभ उठाते हुए अपेक्षित पोषकों का प्रयोग सुनिश्चित कर सकें। इसके अलावा, यदि देश की मौजूदा स्थिति पर गौर करें तो देश में कुल भूमि क्षेत्रफल करीब 32.9 करोड़ हेक्टेयर है जिसमे करीब 14.4 करोड़ हेक्टेयर में खेती होती है और देश की भूमि का बड़ा भाग बंजर है। इस बंजर भूमि को सुधारने की बेहद जरुरत है। इसी तरह 4.72 करोड़ हेक्टेयर भूमि को परती के रूप में चिन्हित किया गया है जो देश के कुल भू–क्षेत्र का 14.2 फीसदी है और एसएचसी ऐसी भूमियों को पहचानने और उनमें सुधार अनुशंसित करने की अनुकरणीय पहल है जिसके माध्यम से ऐसी भूमियों को सुधार कर खेती के काबिल बनाया जा सकता है।

आज खेती बहुत तेजी से घाटे के उद्यम में तब्दील हो रही है। कृषि की प्रधानता और जीविकोपार्जन का आधार होने के बावजूद आधुनिक तकनीक और विज्ञान के व्यापक प्रयोग से दूर कृषि में अभी भी बुनियादी सुविधाओं का अभाव कायम है जिसके चलते देशभर में चाहे तेलंगाना हो या महाराष्ट्र का विदर्भ या फिर उत्तर प्रदेश का बुंदेलखंड, हर कहीं किसानों की एक–सी कहानी है। बढ़ती कृषि लागतें, ऋणग्रस्तता, मानसूनी अनिश्चितता और घटती आय के चलते पिछले 17 वर्ष में तीन लाख किसानों ने आत्महत्या की है और हर एक घंटे में दो किसान आत्महत्या कर रहे हैं। आज देश में कृषि और कृषकों की हालत यह है कि कोई भी कृषक स्वेच्छा से कृषि कार्य नहीं करना चाहता है। वह किसी तरह खेती छोड़कर आय और रोजगार की वैकल्पिक व्यवस्था के लिए शहरों में पलायन के लिए उत्सुक है। जनगणना 2011 के मुताबिक प्रतिदिन करीब 2400 किसान कृषि कार्य छोड़ रहे हैं और छोटी–मोटी नौकरी के लिए शहरों की तरफ पलायन कर रहे हैं। ऐसे में एसएचसी जैसी योजना, जो भूमि के गहन उपयोग को बढाती है, का प्रयोग अपरिहार्य हो गया है क्योंकि यह मृदा की पोषकता और उत्पादकता बढ़ाने में मदद कर कृषि को पुनः लाभदायी उद्यम में तब्दील कर सकता है। इसके अलावा, इससे संबद्ध मृदा में प्रासंगिक फसल उपजाने के साथ–साथ उपयुक्त फसल–चक्र अपनाने में भी मदद मिलेगी।

एसएचसी, मृदा के स्वास्थ्य से संबंधित सूचकों और उनसे जुड़ी शर्तों को प्रदर्शित करता है। ये सूचक स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों के संबंध में किसानों के व्यावहारिक अनुभवों और ज्ञान पर आधारित होते हैं। इसमें फसल के अनुसार उर्वरकों के प्रयोग तथा मात्रा का संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत किया जाता है, ताकि भविष्य में किसान को मृदा की गुणवत्ता संबंधी परेशानियों का सामना नहीं करना पड़े और फसल उत्पादन में भी कमी नहीं हो। इस योजना की मदद से किसानों को अपने खेत की मिट्टी के स्वास्थ्य के बारे में सही जानकारी मिल पाएगी। इससे वह मनचाहे अनाज/फसल का उत्पादन कर सकते हैं। इस योजना के तहत किसानों को अच्छी फसल उगाने में मदद मिलेगी जिससे उन्हें और देश दोनों का फायदा होगा। इस तरह यह किसानों की दशा और खेती को सुधारने का एक कारगर प्रयास है क्योंकि जब तक मृदा में धारित गुणों की पहचान नहीं होती है, तब तक न तो अपेक्षित उत्पादकता बढ़ती है और न ही उर्वरक जैसी आगतों पर किसानों का खर्च सार्थक होता है जिसके कारण ऊंची आगतों के बावजूद किसानों की आय में अपेक्षित सुधार नहीं हो रहा है। अतः यदि किसानों को अपनी मृदा के रासायनिक–भौतिक गुणों की जानकारी मिल जाती है तो वह उसी के अनुरूप पोषकों का प्रयोग कर कम लागत पर भूमि की उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं।

देश के महंगाई, भुखमरी और अल्प–पोषण के स्थायी समाधान खाद्यान्नों की अधिक आपूर्ति में ही निहित हैं क्योंकि मृदा की सेहत सीधे फसलों की उत्पादकता से जुड़ी है जिससे खाद्यान्नों की अधिक आपूर्ति अंततः महंगाई का संकट सुलझाने में सहायक होगी। वैश्विक भूख सूचकांक/रिपोर्ट बताती है कि दुनिया में भुखमरी के शिकार 79.5 करोड़ लोगों में से 19.4 करोड़ भारतीय हैं यानी दुनिया में भुखमरी से पीड़ित लोगों में हर चौथा व्यक्ति भारतीय है। रिपोर्ट यह भी बताती है कि देश में भूख से पीड़ितों की संख्या घटने के बजाय बढ़ रही है। वर्ष 2000–02 के दौरान 18.55 करोड़ भारतीय भूखमरी से पीड़ित थे जो वर्ष 2014–16 के दौरान 19.46 करोड़ हो गए। यह एक कटु सत्य है कि देश के करीब 60 फीसदी किसान या तो आधे पेट भोजन या फिर भूखे पेट सोने को विवश है। इससे अधिक आश्चर्यजनक और क्या हो

सकता है कि देश का अन्नदाता जो लोगों के लिए खाद्यान्न पैदा करता है, वह खुद भूखा सोता है। ऐसी स्थिति में देश के सामने एक बड़ी चुनौती कृषि उत्पादकता को बढ़ाने की है जो एसएचसी जैसी अभिनव मृदा सुधार पहलों के साथ सिंचाई की सघन और नियोजित व्यवस्था से ही संभव है। इस योजना से लघु एवं सीमांत खेतों की उत्पादकता बढ़ाने में भी मदद मिलेगी। कृषि गणना 2010–11 के मुताबिक देश के कुल किसानों में 67 प्रतिशत सीमांत हैं जिनके पास एक हेक्टेयर से कम भूमि है। तीन में से दो सीमांत किसान हैं और हर खेत पर जरूरत से तीन गुना लोग जीवनयापन के लिए निर्भर हैं। ऐसे में यह योजना मृदा स्वभाव के अनुरूप खेती करने और फसल प्रतिरूप को आसान बनाकर खेती को लाभदायक उद्यम बनाने में सहायक है।

मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण और एसएचसी : मृदा संरक्षण का अर्थ उन सभी उपायों को अपनाना तथा कार्यान्वित करना है जो भूमि की उत्पादकता को बढ़ाने और उसे बनाए रखने, मृदा को अधोगति या अपरदन ह्रास से सुरक्षित रखने, अपरदित मृदा को पुनर्निर्मित और पुनरुद्धार करते हैं, फसलों के उपयोग के लिए मृदा नमी को सुरक्षित करके ज़मीन की उत्पादकता को बढ़ाते हैं। इस प्रकार मुनाफायुक्त ज़मीन–प्रबंध कार्यक्रम को मृदा संरक्षण कह सकते हैं और देश के भूमि साधन एवं भूसंपत्ति का बिना उचित व्यवहार या प्रबंध के कारण नाश होता रहा है। ऐसे में वे सभी उपाय जो मृदा की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के साथ हमारी समृद्धि का आधार बनते हैं, उनकी सुरक्षा तथा उसकी उच्च–उत्पादन क्षमता को बनाए रखना न सिर्फ हमारा कर्तव्य है अपितु एक अहम जरूरत बन गया है। एसएचसी इस दिशा में एक कारगर प्रयास है क्योंकि यह भू–संरक्षण के लिए उचित फसल चक्र के उपयोग को अनुशंसित करने में मदद करता है। फसल चक्र या सस्यावर्तन का अर्थ उसी खेत पर एक निश्चित अवधि में फसलों को नियमित तरीके से एक के बाद एक उगाना है। कम पौधों वाली फसलों को लगातार उगाने से अपरदन अधिक होता है। ऐसे में फसल चक्र की सततीयता मृदा संरक्षण को बढ़ावा देती है।

एसएचसी से मृदा की मांग के अनुसार फसलों का उत्पादन करने में मदद मिलती है जैसे यदि किसी खेत के मृदा की प्रवणता सूखे के प्रति अधिक है तो ऐसे खेतों में मक्का, ज्वार, मूंग, उड़द जैसी फसलें उगानी चाहिए। यदि मृदा में अधिक समय तक जल धारित रहता है तो धान आदि फसलें उगाई जा सकती हैं। एसएचसी में अनुशंसित सुझावों से मृदा के विभिन्न भौतिक गुणों के विकास में भी मदद मिलती है। मृदा में उपस्थित कमियों के उजागर होने से मिट्टी की उत्पादिता बढ़ाने के लिए अपेक्षित जैव–पदार्थ, खाद, उर्वरक, चूना, जिप्सम आदि का उचित प्रयोग करना संभव होगा। इससे एक तो किसानों को अधिकाधिक उर्वरकों के प्रयोग से मुक्ति मिलेगी, जिससे उनकी कृषि लागतों में कमी आएगी। इसके अलावा, उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा प्रयोग करने से मृदा का स्वास्थ्य भी उत्पादक बना रहेगा।

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन की एसएचसी योजना कृषि में नवाचार तरीके और वैज्ञानिक प्रबंधन को भी प्रोत्साहित करती है क्योंकि अवैज्ञानिक तरीके से खेती करना और उर्वरकों व कीटनाशकों के अधिकतम उपयोग से मिट्टी की उर्वरता समाप्त हो रही है और कृषि मृदा अनुपयोगी बनती जा रही है। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से सिंचाई के लिए जल की उपलब्धता बहुत कम हो रही है। उच्च तापमान के कारण मिट्टी में से कार्बनिक पदार्थ कम होने और लगातार मिट्टी के कटाव से बंजर भूमि बढ़ रही है। भारत में पिछले कुछ वर्षों में उर्वरकों, कीटनाशकों और कीटनाशक दवाईयों के अविवेकपूर्ण और अधिक प्रयोग की वजह से प्रत्येक वर्ष करीब 5334 लाख टन मिट्टी खत्म हो रही है। औसतन 16.4 टन प्रति हेक्टेयर उपजाऊ मिट्टी हर साल समाप्त हो रही है। इसी प्रकार उचित प्रबंधन के अभाव में 10 से 12 सेमी. की वर्षा एक हेक्टेयर के खेत से हर साल करीब 2 हजार क्विंटल मिट्टी बहा ले जाती है जो मृदा की उर्वरा हानि का एक बड़ा कारण है। अविवेकपूर्ण तरीके से उर्वरकों के इस्तेमाल से मिट्टी की उर्वरकता में कमी आती है जिसके फलस्वरूप मिट्टी के सूक्ष्म तथा सूक्ष्मतर पोषक तत्वों में कमी हो जाती है और कृषि पैदावार में भी कमी आ जाती है। इन समस्याओं के समाधान के लिए ठोस डाटाबेस तैयार करने की आवश्यकता है, क्योंकि देश भर से एकत्रित मिट्टी के नमूने और मिट्टी की जांच से देश के अलग–अलग पारिस्थितिकीय क्षेत्र में मिट्टी की स्थिति के बारे में वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध होती है। इसके आधार पर मिट्टी की उर्वरकता को दोबारा हासिल करने के उपायों का व्यावहारिक कार्यान्वयन संभव हुआ है। इससे न केवल लागत में कमी आएगी, बल्कि किसानों की फसल का उत्पादन भी अधिक होगा और अंततः गरीबी समाप्त करने में मदद मिलेगी। स्वस्थ मृदा और स्वस्थ भोजन के बीच घनिष्ठ संबंध है। कृत्रिम उर्वरकों और कीटनाशकों के अंधाधुंध उपयोग के कारण हमारे देश की मिट्टी बहुत जहरीली हो गई है। जहरीली मिट्टी से उगने वाली फसल से बनाए जाने वाले भोजन से स्वास्थ्य समस्याएं बढ़ती हैं। रसायनिक उर्वरक डालकर अधिक पैदावार तो ले सकते हैं, लेकिन उस फसल में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है, जो स्वस्थ शरीर के लिए आवश्यक है। इस तरह एसएचसी योजना देश की मृदा के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य को बढ़ाने में भी सहायक है।

एसएचसी से मृदा में धारित वर्गीकृत विशेषता से संबंधित मृदा के उपजाऊपन और उसमें उपज योग्य फसलों की समझ कृषकों को आसानी से हो जाती है जैसे– मृदा में पोटाश, फास्फोरिक अम्ल, चूना व जैविक पदार्थों से समृद्ध है और इसमें नाइट्रोजन व ह्यूमस तत्वों की कमी है तो ऐसी मृदा पर जूट, गन्ना, गेहूं, कपास, मक्का, तिलहन, फल और सब्जियो को उपजाया जा सकता

है। यदि मृदा जैविक पदार्थों की कमी के बावजूद देर तक नमी धारण करने की क्षमता और अधिक उर्वरा रखती है और लौह, चूना, कैल्शियम, पोटाश, एल्यूमिनियम व मैग्नीशियम कार्बोनेट से समृद्ध है तो यह कपास, अरहर, तम्बाकू, गन्ना, मोटा, अनाज, अलसी, जैसी फसलों के लिए उपयुक्त है। लौह व एल्यूमिनियम से समृद्ध मृदा में नाइट्रोजन, पोटाश, पोटेशियम, चूना व जैविक पदार्थों की कमी है, तो इसमें उर्वरकों के प्रयोग से चावल, रागी, गन्ना, काजू जैसी फसलें उगाई जा सकती हैं। यदि मृदा अपरिपक्व और हल्के से मध्यम अम्लीय है तो यह वृक्षदार फसलों व आलू की खेती के लिए उपयोगी है। यदि मृदा अत्यधिक अम्लीय व जैविक पदार्थों से समृद्ध है तो यह धान की खेती के लिए उपयुक्त होती है। इन वर्गीकृत लक्षणों के प्रति किसानों की समझ से एक तो मृदा संरक्षण को बढ़ाया जा सकता है। दूसरा, खेती की लागतों में कमी आती है और इसके अलावा मृदा और फसलों की उत्पादकता में भी वृद्धि होती है। लेकिन प्रायः किसानों की इसके प्रति अनभिज्ञता होती है। ऐसे में किसानों द्वारा अपने खेत में किसी फसल की खेती की योजना बनाने से पहले यदि उसके खेत के मृदा की गुणवत्ता ज्ञात हो जाती है तो समय रहते मृदा की गुणवत्ता बढ़ाने वाले उचित पोषकों का प्रयोग कर तथा अपेक्षित फसल–चक्र अपनाकर अच्छी उत्पादकता का लाभ उठा सकते हैं।

कृषि व दूसरी गतिविधियों में संसाधनों के अंधाधुंध और अनियोजित उपयोग से आज भारतीय मृदाएं कई समस्याओं से ग्रसित हैं जिनमें मृदा अपरदन, निक्षालन, विनाइटीकरण, उर्वरता में कमी, जलमग्नता, लवणता, क्षारीयता, मरुस्थलीकरण, परतीपन, बंजरीकरण आदि प्रमुख हैं। इसके लिए कई कारणों जैसे मृदा का अनुचित, अनियोजित व अत्यधिक दोहन, खेत में फसली अवशेषों का अल्प उपयोग, सिंचाई की दोषपूर्ण प्रणाली अपनाना, उच्च भौम–स्तर और उचित जल निकास की कमी, लवणीय जल से लगातार सिंचाई करना, क्षारीय उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग करना, खेती में कृषि रसायनों का बढ़ता प्रयोग, जैविक और हरी खादों का अल्प प्रयोग, कृषि भूमि का बिगड़ता समतल एवं मृदा कटाव,कृषि भूमि में खरपतवारों के बढ़ता प्रकोप को जिम्मेदार कहा जा सकता है। इन कारणों के निदान से अपेक्षित भूमि सुधार प्राप्त किए जा सकते है जैसे–मृदा स्वास्थ्य जानने के लिए अपने खेत की मिट्टी की जांच प्रयोगशाला में कराएं और जांच के आधार पर ही खादों एवं उर्वरकों की मात्राएं सुनिश्चित करें, इससे मृदा स्वास्थ्य और उर्वराशक्ति में संतुलन बनाए रखने में मदद मिलेगी। मृदा की ऊपरी उपजाऊ सतह को जल व वायु द्वारा होने वाले क्षरण से बचाने के लिए खेतों की मेड़बंदी करके वर्षा ऋतु में वर्षा जल को संरक्षित किया जाए। इससे क्षेत्र विशेष में भूमिगत जलस्तर ऊपर उठने के साथ भूमि कटाव से होने वाले नुकसान सें भी मृदा को बचाया जा सकता है। अधिक जैविक खादों के प्रयोग से भी भूमि की जलधारण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। कृषि की कार्यपद्धति में बदलाव करके तथ मृदा को आवरण प्रदान करने वाली फसलों जैसे मूंग, उड़द, लोबिया आदि का समावेश फसल–चक्र में करने से मृदा को संरक्षित कर सकते हैं। लवणीय भूमि सुधार के लिए भूमि समतलीकरण, मेड़बंदी या सिंचाई जलभराव करके घुलनशील लवणों का निक्षालन करें और मृदा जांच के आधार पर क्षारीय भूमि में जिप्सम, सल्फर, केल्साइट, पाइराइट का प्रयोग करें। हरी खाद वाली फसलें भी क्षारीय भूमि सुधारने का काम करती हैं। इसके अलावा पीएच मान के अनुसार चूने की मात्रा का प्रयोग करके भी मृदा को सुधारा जा सकता है। यदि फसल अवशेष व अन्य जैविक खादों का नियमित प्रयोग होता रहे, तो मृदा में पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों के अतिरिक्त पोटाश की कमी भी नहीं रहती। फास्फोरस की कमी जीवाणु खाद द्वारा बीज का जीवाणु उपचार करके पूरी की जा सकती है। खेतों में कम से कम रसायनों का प्रयोग कर कार्बनिक कृषि को प्रोत्साहित कर जीवांश खादों का प्रयोग करना चाहिए। इससे मृदा में मुख्य पोषक तत्वों के साथ–साथ द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की आपूर्ति और भूमि की उर्वराशक्ति तो बढ़ती है, साथ ही मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार होता है।

निष्कर्ष रुप से यह कहा जा सकता है कि मृदा न केवल हमारी खाद्य सुरक्षा और आजीविका सुरक्षित करती है बल्कि मानव के जीवन और धरती पर धारित जैव विविधता पर मृदा की अहमियत इतनी अधिक है कि अंतर्राष्ट्रीय मृदा संघ ने वर्ष 2002 में प्राकृतिक प्रणाली के प्रमुख घटक के रूप में मृदा के योगदान के प्रति आभार के उद्देश्य से 5 दिसंबर को विश्व मृदा दिवस मनाने का प्रस्ताव किया था जिसे स्वीकार कर 20 दिसंबर, 2013 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 68वीं बैठक में संकल्प पारित कर 5 दिसंबर को विश्व मृदा दिवस और वर्ष 2015 को 'अंतर्राष्ट्रीय मृदा वर्ष' के रूप में मनाने की घोषणा की थी। इस तरह मृदा के महत्त्व को कायम रखने के लिए 05 दिसंबर, 2014 से हर साल ''विश्व मृदा दिवस'' संपूर्ण विश्व में मनाया जा रहा है। अतः यदि भारत में मृदा को पर्याप्त संरक्षण मिलता है तो भारत में संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद दूसरी सर्वाधिक कृषि योग्य भूमि है जो भारत के कुल क्षेत्रफल का 46.54 प्रतिशत है, इसके साथ ही यहां 14.2 प्रतिशत परती भूमि भी है जो कृषि हेतु प्रयोग में लाई जा सकती है। यदि अपेक्षित सुधारों के साथ इसे उपयोग में लाया जाए तो भारत खाद्यान्न अतिरेक की स्थिति में पहुंच सकता है। इस दिशा में एसएचसी की पहल स्वागत योग्य है क्योंकि मृदा स्वास्थ्य में सुधार द्वितीय हरितक्रांति के रचनात्मक सुधार के नवीनीकरण कार्यक्रम के छह घटकों में से एक है और इसके माध्यम से कृषि क्षेत्र में गुणवत्ता, उत्पादकता, सतत विकास और रोजगार का उन्नयन किया जा सकता है।

(लेखक कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग में वरिष्ठ तकनीकी सहायक हैं।)
ई–मेल : gajendra10.1.88@gmail.com

समन्वित कृषि प्रणाली से होंगे किसान समृद्ध

—एन. रविशंकर
—ए.एस.पंवार

समन्वित कृषि प्रणाली के बारे में समग्र और अभिनव दृष्टिकोण से किसानों, खासतौर पर छोटे काश्तकारों को अपने घर और बाजार के लिए कई तरह की वस्तुओं के उत्पादन का पर्याप्त अवसर तो प्राप्त होता ही है, कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाने, परिवार के लिए संतुलित पौष्टिक आहार जुटाने, पूरे साल आमदनी व रोजगार का इंतजाम करने तथा मौसम और बाजार संबंधी जोखिम कम करने में भी मदद मिलती है। इससे खेती में काम आने वाली वस्तुओं के लिए किसानों की बाजार पर निर्भरता भी कम होती है।

भारत में खाद्य और पौष्टिक आहार सुरक्षा सुनिश्चित करने की कुंजी छोटे किसानों (2 हेक्टेयर से कम) के पास है और ग्रामीण क्षेत्रों में खुशहाली लाने के लिए खेती की टिकाऊ प्रणालियों के साथ उन्हें सही दिशा में विकसित होने का मौका देना भी अत्यंत आवश्यक है। कम आमदनी इन फार्मों की विशेषता है (अखिल भारतीय–स्तर पर जुलाई 2012 से जून 2014 तक कृषक परिवार की औसत मासिक आमदनी 6426 रुपये होने का अनुमान लगाया गया था।) इससे खेती के विकास पर पुनर्निवेश कम हो रहा है, मौसमी रोजगार घटा है, बीज, उर्वरक, कीटनाशक जैसी बाजार से खरीदी जाने वाली वस्तुओं, भारी मशीनरी जैसे मैकेनिकल हार्वेस्टर्स आदि पर निर्भरता बढ़ी है और किसानों को कम भंडारण क्षमता और बाजार मूल्यों की वजह से अपनी उपज को औने–पौने दामों पर बेचने को मजबूर होना पड़ता है। इस तरह के फार्म मौसम संबंधी विषमताओं जैसे बाढ़, सूखा और अन्य प्राकृतिक आपदाओं की दृष्टि से भी काफी कमजोर होते हैं और बड़े आकार के फार्मों के मुकाबले इन छोटे फार्मों में काम करना ज्यादा जोखिम भरा है। किसानों की इन श्रेणियों की स्थिति में सुधार के लिए यह जरूरी है कि उनकी आमदनी बढ़ाई जाए और इस तरह के भूमिहीन, सीमांत और छोटे किसान परिवारों के लिए रोजगार के अवसरों में भी बढ़ोतरी हो। पशुपालन, बागवानी (सब्जी/फल/फूल/औषधीय और सुगंधित पादप), मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पाद, मछली पालन जैसे द्वितीयक और तृतीयक उद्यमों के माध्यम से यह कार्य किया जा सकता है।

समन्वित कृषि प्रणालीगत दृष्टिकोण से तात्पर्य

''यह दृष्टिकोण न्यूनतम प्रतिस्पर्धा और अधिकतम पूरकता के सिद्धांत पर आधारित है और इसमें कृषि–अर्थशास्त्रीय प्रबंधन के परिष्कृत नियमों का उपयोग करते हुए किसानों की आमदनी, पारिवारिक पोषण के स्तर और पारिस्थितिकीय प्रणाली संबंधी सेवाओं का टिकाऊ और पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल विकास करने का लक्ष्य रखा जाता है।''जैव विविधता का संरक्षण, फसल/खेती की प्रणाली में विविधता और अधिकतम मात्रा में पुनर्चक्रण कृषि के प्रणालीगत दृष्टिकोण का आधार है।

समन्वित कृषि प्रणाली के अनिवार्य घटक : मिट्टी की जीवंतता को बनाए रखना और प्राकृतिक संसाधनों के कारगर प्रबंधन से खेत को टिकाऊ आधार प्रदान करना। इसके अंतर्गत जो बातें शामिल हैं, वे इस प्रकार हैं:

- **मिट्टी को उपजाऊ बनानाः** रसायनों का आवश्यकतानुसार

तालाब आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली— तालाब के किनारे फसलें + मुर्गीपालन + बत्तख पालन + मत्स्य पालन

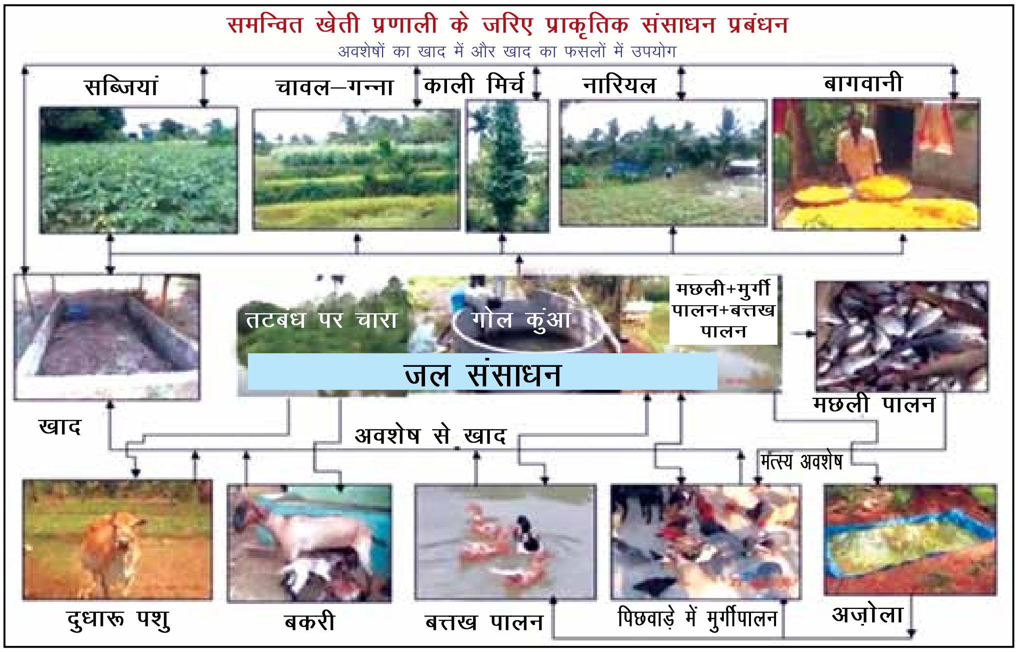

आईएफएस परियोजना, एनआरएम डिवीजन, सीएआरआई पोर्ट ब्लेयर

उपयोग, फसली अपशिष्ट का पलवार के रूप में उपयोग करना, जैविक और जैव उर्वरकों का उपयोग करना, फसलों को अदला–बदली करके बोना और उनमें विविधता, ज़मीन की जरूरत से ज्यादा जुताई न करना और मिट्टी को हरित आवरण यानी जैव पलवार से ढककर रखना।

तापमान का प्रबंधनः ज़मीन को आच्छादित यानी ढककर रखना, पेड़–पौधे और बाग लगाना और तटबंधों पर झाड़ियां उगाना।

- **मिट्टी और वर्षाजल का संरक्षण :** रिसाव टैंक बनाना, ढलान वाली भूमि में कंटूर बांध बनाना और सीढ़ीदार खेत बनाकर खेती करना, खेतों में तालाबों का निर्माण, बांध की मेड़ों पर कम ऊंचाई वाले झाड़ीदार पौधे लगाना।
- **सौर ऊर्जा का उपयोग** विभिन्न प्रकार की फसल प्रणालियों और अन्य पेड़–पौधे उगाकर पूरे साल ज़मीन को हरा–भरा बनाए रखना।
- **कृषि आधान में आत्मनिर्भरता :** अपने लिए बीजों का अधिक से अधिक उत्पादन करना, अपने खेतों के लिए खुद कम्पोस्ट खाद बनाना, वर्मी कम्पोस्ट, वर्मीवाश, तरल खाद और वनस्पतियों का रस बनाना।
- **विभिन्न जैव रूपों का संरक्षण :** विभिन्न प्रकार के जैव–रूपों के लिए पर्यावास का विकास, स्वीकृत रसायनों का कम से कम उपयोग और पर्याप्त विविधता का निर्माण।
- **मवेशियों के साथ तालमेल :** मवेशी कृषि प्रबंधन के महत्वपूर्ण घटक हैं और उनके न सिर्फ कई तरह के उत्पाद मिलते हैं बल्कि वे ज़मीन को उपजाऊ बनाने के लिए पर्याप्त मात्रा में गोबर और मूत्र भी उपलब्ध कराते हैं।
- **फिर से इस्तेमाल की जा सकने वाली ऊर्जा का उपयोगः** सौर ऊर्जा, बायो–गैस और पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल यंत्रों और उपकरणों का उपयोग।
- **पुनर्चक्रण :** खेती से प्राप्त होने वाले अपशिष्ट पदार्थों का पुनर्चक्रण कर अन्य कार्यों में इस्तेमाल करना।
- **परिवार की बुनियादी जरूरतों को पूरा करना :** परिवार की भोजन, चारे, आहार, रेशे, ईंधन और उर्वरक जैसी बुनियादी जरूरतों को खेत–खलिहानों से ही टिकाऊ आधार पर अधिकतम सीमा तक पूरा करने के लिए विभिन्न घटकों में समन्वय और सृजन।
- **सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूरे साल आमदनी :** बिक्री को ध्यान में रखकर पर्याप्त उत्पादन करना और कृषि से संबंधित मधुमक्खी पालन, मशरूम की खेती, खेत–खलिहान में ही प्रसंस्करण व मूल्य संवर्धन, दर्जीगिरी, कालीन बनाना आदि गतिविधियां संचालित करके परिवार के लिए पूरे साल आमदनी का इंतजाम करना ताकि परिवार की सामाजिक जरूरतें जैसे, शिक्षा, स्वास्थ्य और विभिन्न सामाजिक गतिविधियां संपन्न हो सकें।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) ने समन्वित कृषि प्रणाली को स्वाभाविक और उद्देश्यपूर्ण तरीके से समन्वित प्रणाली बताया है। स्वाभाविक रूप से समन्वित प्रणालियां वे हैं जिनका उपयोग किसान ऐसी जगह करते हैं जहां प्रणालियों के घटकों/उद्यमों के बीच अक्सर कोई संबंध नहीं होता। इस तरह की सोद्देश्य समन्वित प्रणालियों से कई उद्देश्य पूरे किए जाते हैं। उत्पादन बढ़ाने, मुनाफा कमाने, पुनर्चक्रण से लागत में कमी लाने, पारिवारिक आहार की आवश्यकता पूरी करने, निरंतरता बनाए रखने, पारिस्थितिकीय सुरक्षा, रोजगार के अवसर पैदा करने, आर्थिक दक्षता बढ़ाने और सामाजिक समानता लाने के लिए इनका उपयोग किया जाता है।

कृषि प्रणाली के बारे में समग्र और अभिनव दृष्टिकोण

कृषि प्रणालियों में दो दृष्टिकोण –समग्र और अभिनव अपनाए जाते हैं। समग्र दृष्टिकोण में सहभागितापूर्ण ग्रामीण मूल्यांकन और अन्य तकनीकों का उपयोग करते हुए बाधाओं की पहचान की जाती है और उन्हें दूर करने के प्रयास किए जाते हैं। इसमें उत्पादकता व आमदनी में सुधार, लागत घटाने और पर्यावरण संबंधी लाभ प्राप्त

करने के लिए कृषि प्रणाली के मौजूदा घटकों के प्रति ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया जाता है। अभिनव दृष्टिकोण के तहत मौजूदा घटकों में विविधता लाने, प्रणाली के साथ–साथ वर्तमान प्रणाली में समग्र सुधार किया जाता है। इसके लिए प्रणाली में नए घटकों/उद्यमों/माड्यूल को लिया जाता है।

इसमें विविधता लाने का उद्देश्य आमदनी में टिकाऊ बढ़ोतरी के वैकल्पिक तरीके उपलब्ध कराना है ताकि लाभप्रदता बढ़ने के साथ–साथ प्रणाली से अधिक उत्पादन प्राप्त हो। खेती करने वाले परिवारों में वांछित बदलाव लाने के लिए फसल प्रणाली में विविधता लाने (किसानों के संसाधनों, उनकी सोच, तत्परता, बाजार और प्रणाली के अन्य घटकों के कुशलतम उपयोग) के साथ–साथ पशुपालन में विविधता (स्थानीय जरुरतों के अनुसार कम लागत वाला पशुपालन जैसे मुर्गी, बत्तख, सूअर और बकरी पालने), उत्पादों में विविधीकरण (उत्पाद और प्रक्रिया दोनों में भौतिक बदलाव) और क्षमता निर्माण को लागू करने संबंधी ऐसे बदलाव (कृषक परिवारों को कृषि प्रणालियों, फसल कटाई के बाद मूल्य संवर्धन आदि के बारे में प्रशिक्षण) लाए जा सकते हैं, जिनकी अपेक्षा की गई है।

कृषि प्रणाली में विविधता लाने की आवश्यकता

छोटी काश्तों में समय और स्थान के अनुसार विस्तार करना संभव है। इसके लिए उपयुक्त कृषि प्रणाली घटकों को अपनाकर स्थान और समय की आवश्यकता को सीमित किया जा सकता है जिससे ग्रामीण आबादी के लिए खाद्य और पौष्टिक आहार के विविध विकल्प सुनिश्चित करने के साथ–साथ बाजार में कीमतों में उतार–चढ़ाव, मौसम की विषमता, बाजार से प्राप्त होने वाले घटकों में निर्भरता कम करने, समय–समय पर आमदनी जुटाने और किसानों को रोजगार उपलब्ध कराने में भी मदद मिल सकती है। विभिन्न जोंस में सीमांत किसान परिवारों के विश्लेषण से पता चलता है कि इस तरह के दो घटकों वाले परिवारों की जोत के औसत आकार और परिवार के आकार में समानता पाई गई है (दो घटकों वाले परिवार में 0.82 हेक्टेयर ज़मीन और 5 सदस्य और दो से अधिक घटकों वाले परिवार के लिए 0.84 हेक्टेयर ज़मीन तथा 5 सदस्य)। यानी दो से अधिक घटकों वाले परिवारों के लिए आमदनी का औसत–स्तर काफी ज्यादा (1.61 लाख रुपये) है जिसके घटक हैं (फसल + डेयरी + बकरी; फसल + डेयरी + बकरी + मुर्गी; फसल + डेयरी + बकरी + मुर्गी + मछली आदि) जबकि दो घटकों वाले परिवारों के लिए यह केवल 0.57 लाख रुपये है जिसमें केवल फसल, केवल डेयरी, फसल + डेयरी, फसल + बकरी आदि है। एक और दो घटकों वाले 59 प्रतिशत सीमांत परिवारों की प्रति व्यक्ति आमदनी बढ़ाने के लिए उनकी कृषि प्रणालियों यानी केवल फसल, केवल डेयरी, फसल + डेयरी, फसल + सुअर, फसल + पोल्ट्री, फसल + मछली पालन, फसल + बागवानी, फसल + बकरी, डेयरी + बकरी में विविधता लाने की बड़ी आवश्यकता है।

समन्वित कृषि प्रणाली दृष्टिकोण के कई फायदे

उत्पादकता में सुधार : कृषि प्रणाली में फसल और इससे संबंधित उद्यमों में सघनता से उपज और आर्थिक/इकाई समय का इजाफा होता है। भारत में किए गए कई अध्ययनों से पता चला है कि समन्वित कृषि दृष्टिकोण अपनाने से छोटे और सीमांत किसानों की आजीविका में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। अंडमान–निकोबार द्वीप समूह में कराए गए अध्ययनों से पता चला कि खेती के साथ मछलीपालन + मुर्गीपालन और पशुपालन करने से केवल फसल उगाने के मुकाबले कहीं अधिक उत्पादकता देखी गई। केवल मवेशियों से ही 25 टन खाद मिली, हर गाय से प्रत्येक ब्यांत में 5250 लीटर दूध मिला, हर मुर्गी ने 150 अंडे दिए और मछली के तालाब के लिए खाद भी उपलब्ध कराई जिससे प्रणाली की उत्पादकता में और इजाफा हुआ। हालांकि 0.036 हेक्टेयर के तालाब से साल में केवल 60 किग्रा. मछली मिली लेकिन इससे परिवार की प्रोटीन की आवश्यकता को पूरा करने में बड़ी मदद मिली।

आमदनी में इजाफा : समन्वित कृषि प्रणाली खेतों के स्तर पर अपशिष्ट पदार्थों का परिष्कार करके उसे दूसरे घटक को बिना किसी लागत या बहुत कम लागत पर उपलब्ध कराने का समग्र अवसर प्रदान करती है। इस तरह एक उद्यम से दूसरे उद्यम के स्तर पर उत्पादन लागत में कमी लाने में मदद मिलती है। इससे निवेश किए गए प्रत्येक रुपये से काफी अधिक मुनाफा मिलता है। अपशिष्ट पदार्थों के पुनर्चक्रण से आधानों के लिए बाजार पर निर्भरता कम होती है। केरल की परिस्थितियों में 0.2 हेक्टेयर ज़मीन के लिए तैयार किए गए मॉडल में फसल प्रणाली (80 प्रतिशत ज़मीन) + डेयरी (1 गाय + 1 भैंस) + बत्तख (150) + मछली पालन (20 प्रतिशत क्षेत्र) + वर्मी कम्पोस्ट (एक प्रतिशत क्षेत्र) से 0.60 लाख रुपये की शुद्ध प्राप्ति हुई।

कृषि के साथ रोजगार के अवसर : खेती के साथ अन्य गतिविधियों को अपनाने से मजदूरी की मांग उत्पन्न होती है जिससे पूरे साल परिवार के सदस्यों को काम मिलता है और उन्हें खाली नहीं बैठे रहना पड़ता। खेती के साथ–साथ मछली पालन, मुर्गीपालन और पशुपालन जैसी गतिविधियों को अपनाकर सालाना 221 श्रमदिवसों का रोजगार प्रति हेक्टेयर उपलब्ध हो जाता है जबकि केवल खेती करने से 58 श्रम दिवसों का ही रोजगार साल के दौरान एक हेक्टेयर ज़मीन से मिल पाता है। वर्तमान कृषि प्रणाली में विविधता लाकर अगर मुर्गीपालन और मछली पालन को भी अपना लिया जाए तो दोनों में सालाना 15–15 श्रम दिवसों के बराबर रोजगार जुटाया जा सकता है। पुष्प उत्पादन, मधुमक्खी पालन और प्रसंस्करण से भी परिवार को अतिरिक्त रोजगार प्राप्त होता है।

भोजन और पौष्टिक आहार की घरेलू आवश्यकता पूरा करना तथा बाजार पर निर्भरता घटाना : मौजूदा औसत मासिक खपत का खर्च प्रति परिवार 5108 रुपये (0.01 हेक्टेयर से

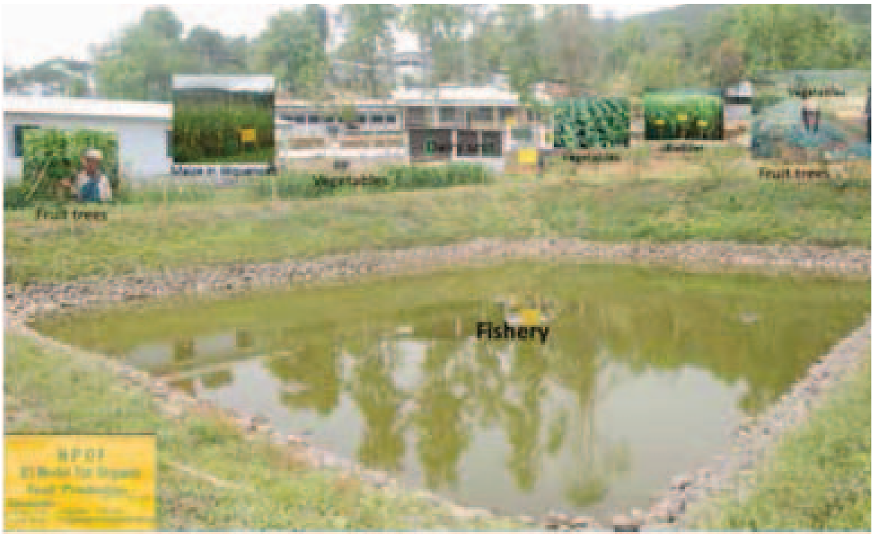

जैविक खेती प्रणाली मॉडल (स्रोत : आईसीएआर–आरसी–नेह उमियाम, मेघालय)

कम) से 6457 रुपये (1.01 –0.01 हेक्टेयर से कम) है।

प्रत्येक कृषक परिवार को छह बातों में आत्मनिर्भर होना चाहिए जिनमें शामिल हैं–खाद्यान्न, चारा, आहार, ईंधन, रेशा और उर्वरक। विविधतापूर्ण कृषि प्रणाली में फसल + मवेशी + मछली पालन + बागवानी + मेड़ पर वृक्षारोपण शामिल रहते हैं। इनमें भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के मानदंडों के अनुसार पौष्टिक आहार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए खेतों से ही पर्याप्त मात्रा में अनाज, दलहनों, तिलहनों, सब्जियों, फलों, दूध और मछली का उत्पादन होता है। इसके अलावा, इस तरह के मॉडल मवेशियों के लिए पूरे साल पर्याप्त मात्रा में हरे चारे की उपलब्धता भी सुनिश्चित करते हैं ताकि उनका स्वास्थ्य भी अच्छा रहे। विभिन्न वस्तुओं के खेतों में ही उत्पादन से बाजार पर निर्भरता तो कम होती ही है, पौष्टिक आहार की जरूरत पूरा करने में भी मदद मिलती है जिससे परिवार को अतिरिक्त बचत होती है।

पुनर्चक्रण के जरिए ज़मीन की उर्वरता में सुधारः अपशिष्ट पदार्थों का पुनर्चक्रण कृषि प्रणालियों का अभिन्न अंग है। यह खेती से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों के टिकाऊ निपटान का सबसे उपयोगी तरीका है। इसे अपनाकर कृषि आधानों की दक्षता बढ़ाने का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। इससे पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम के साथ–साथ बहुत से माइक्रोन्यूट्रिएंट्स भी खेतों में ही पुनर्चक्रण के माध्यम से उत्पन्न किए जा सकते हैं।

संसाधनों का विविध उपयोगः कृषि प्रणाली की उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ाने के लिए भूमि और जल जैसे संसाधनों का विविधतापूर्ण उपयोग बेहद जरूरी है। विभिन्न उपयोगों की दृष्टि से पानी सबसे अच्छा उदाहरण है जिसे घरों में (नहाने–धोने) से लेकर खेतों में सिंचाई, डेयरी, पोल्ट्री, बत्तख पालन और मछली पालन जैसी विभिन्न गतिविधियों में कई तरह से इस्तेमाल किया जाता है। छोटे और मझोले आकार के जलाशयों के पानी को आसपास के इलाकों में कई तरह से काम में लाया जा सकता है जिससे छोटे काश्तकारों की आमदनी बढ़ाने, उनके पौष्टिक आहार के स्तर में सुधार और रोजगार के अवसर बढ़ाने में मदद मिल सकती है। छोटे और सीमांत कृषकों के खेती के अपशिष्ट पदार्थों के फिर से इस्तेमाल की व्यवस्था करने से उर्वरकों का उपयोग कम करने में भी मदद मिलेगी जिसका सकारात्मक असर पड़ेगा। उदाहरण के लिए अंडे देने वाली एक खाकी कैम्बेल बत्तख से 60 किलोग्राम से अधिक खाद मिलती है। उसकी बीट में कार्बन, नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे ज़मीन के लिए आवश्यक पोषक तत्व होते हैं जो जलीय परिवेश में मछलियों के प्राकृतिक आहार को बढ़ावा देते हैं। इसके अलावा, इन बत्तखों को खिलाया जाने वाला 10 से 20 प्रतिशत दाना (रोजाना 23 से 30 ग्राम) सामान्य परिस्थितियों में बेकार चला जाता है। कृषि प्रणाली अपनाने पर बत्तखों के बाड़े की सफाई से निकला अपशिष्ट मछलियों के काम आ जाता है जिसमें दाना मौजूद रहता है।

जोखिमों में कमीः समन्वित कृषि प्रणाली दृष्टिकोण अपनाने से खेती के जोखिमों को कम करने, खासतौर पर बाजार में मंदी और प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न खतरों से बचाव में भी मदद मिलती है। एक ही बार में कई घटकों के होने से एक या दो फसलों के खराब हो जाने का परिवार की आर्थिक स्थिति पर कोई खास असर नहीं पड़ता। इसके अलावा, इससे मौसम संबंधी जोखिमों से भी बचाव होता है। उदाहरण के लिए अक्तूबर 2013 में फायलिन नाम के भीषण चक्रवाती तूफान ने उड़ीसा में तबाही मचाई। इससे भारी वर्षा हुई और तूफानी हवाएं चली। तटवर्ती जिले केंद्रापाड़ा पर भी इसका असर पड़ा। आमतौर पर इस जिले में अक्तूबर महीने में 183.7 मिमी. वर्षा होती है, मगर केवल 13 अक्तूबर 2013 को 95.67 मिमी. पानी बरसा। इसके बाद 25 अक्तूबर 2013 को फिर से 163.67 मिमी. और 27 अक्तूबर, 2013 को 51.44 मिमी. वर्षा हुई। निचले इलाकों में धान की खड़ी फसल तबाह हो गई। समन्वित कृषि प्रणाली दृष्टिकोण अपनाने वाले परिवारों यानी जो खेती के साथ दूसरी गतिविधियों जैसे पशुपालन, पटसन उत्पादन और मछली पालन भी करते थे, उन्हें 8 से 28 प्रतिशत तक का नुकसान हुआ जबकि जो परिवार पूरी तरह खेती पर निर्भर थे, उनका सब कुछ तबाह हो गया।

उत्पादन प्रणाली पर आधारित आईएफएस दृष्टिकोण

जैविक खेती से संबंधित समन्वित कृषि प्रणाली और नेटवर्क परियोजना के अंतर्गत अनुसंधान कार्यक्रमों में ऑन–स्टेशन और ऑन–फार्म आधारित समन्वित कृषि प्रणाली दृष्टिकोण अपनाया

जाता है। विभिन्न राज्यों के ऑन–स्टेशन (अनुसंधान फार्म) और ऑन–फार्म (किसान की भागीदारी वाले) मॉडलों से पता चलता है कि आईएफएस दृष्टिकोण अपनाकर सीमांत और छोटे किसान परिवारों के लिए टिकाऊ आजीविका की व्यवस्था करके अधिकार संपन्न बनाया जा सकता है।

पौष्टिक आहार और पूरे साल आमदनी के लिए पारिवारिक खेती मॉडल : दक्षिणी बिहार में गंगा मैदान के मध्य कछारी क्षेत्र में पांच सदस्यों वाले परिवार के लिए एक हेक्टेयर ज़मीन पर आधारित मॉडल तैयार किया गया। यह विविधतापूर्ण फसल प्रणाली पर आधारित खेती (0.78 हे) + बागवानी (0.14 हे) + डेयरी (2 गाय) + बकरी (11) + मछली (0.1 हे) + बत्तख (25) + मेड़ों पर पेड़ (225 बबूल और 50 मोरिंगा पेड़ों) पर आधारित था। इससे परिवार को प्रति हेक्टेयर 13,160 रुपये (सितंबर) से लेकर 51,950 रुपये (अप्रैल) मासिक की आमदनी हुई (चित्र–1) इसमें विविधतापूर्ण फसल प्रणाली (चावल, गेहूं, मूंग यानी अनाज + दलहन); चावल, मक्का, आलू, लोबिया (चारा); चावल, सरसों, मक्का (अनाज) + लोबिया (चारा), सोरगम + राइसबीन – बरसीम / जौ–मक्का+लोबिया (चारा), और मौसमी सब्जियां (बैंगन, टमाटर, गोभी, बंदगोभी, मटर, भिंडी, लैटिस) को 0.78 हेक्टेयर में उगाकर परिवार की अनाज, दलहन, तिलहन, फल (अमरूद और पपीता), सब्जियों और मवेशियों की हरे तथा सूखे चारे की सालाना आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है।

चित्र–1 : सबौर (बिहार) में कृषि प्रणाली के मॉडल से परिवार के लिए पूरे साल शुद्ध आय (रु/हे) जिसमें फसलों का हिस्सा (0.78 हे) + बागवानी (0.14 हे) + डेयरी (2 गाय) + बकरी (11) + मछली (0.1 हे) + बत्तख (25) + मेड़ों पर पेड़ (बबूल और मोरिंगा)।

यह मॉडल दूध, अंडे और मछली की वार्षिक आवश्यकता यानी 550 लीटर दूध, 900 अंडे और 120 किग्रा. मछली की आवश्यकता पूरा करने के लिए भी पर्याप्त है। परिवार और घरेलू मवेशियों की जरूरतों को पूरा करने के साथ–साथ इस मॉडल से बाजार में बेचने के लिए 4810 किग्रा. अनाज, 986 किग्रा. सब्जियां और 35 किग्रा. फल; 4243 लीटर दूध, 950 अंडे और 124 किग्रा मछली का उत्पादन किया जा सकता है और पूरे साल पारिवारिक आमदनी का इंतजाम किया जा सकता है। इस मॉडल में परिवार के लिए 4 टन प्रति वर्ष जलावन भी पैदा की जा सकती है। इसके अलावा इससे 4 टन समृद्ध वर्मी कम्पोस्ट और 2.3 टन खाद बनाकर ज़मीन की उर्वराशक्ति को सुधारा जा सकता है। इस तरह साल में कुल 3.14 लाख रुपये की प्राप्ति हुई जो इस क्षेत्र में प्रचलित फसल+डेयरी वाले वर्तमान मॉडल की प्राप्ति से 3.2 गुना अधिक है।

जनजातीय इलाकों में उत्पादकता और आजीविका में सुधार के लिए जैविक खेती प्रणाली : कुछ खास इलाकों, खासतौर पर कम मात्रा में पौष्टिक आहार लेने वाले जनजातीय इलाकों में जैविक खेती को बढ़ावा देने से ज़मीन और फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ–साथ लोगों की आजीविका के अवसरों को बढ़ाने में बड़ी मदद मिल सकती है। उमियाम में फसलों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जैविक खेती की नेटवर्क परियोजना (एनपीओएफ) के तहत 0.43 हेक्टेयर के जैविक खेती प्रणाली मॉडल का विकास किया गया है। इसमें चावल और मक्का जैसे अनाज, सोयाबीन, मसूर और मटर जैसी दलहन और तिलहनों और फ्रांस बीन, टमाटर, गाजर, भिंडी, बैगन, पत्तागोभी, आलू, ब्रोकली, फूलगोभी, मिर्च, धनिया, के साथ–साथ असमिया नींबू और पपीते जैसी सब्जियों, फलों और चारे को शामिल किया गया है। इसके अलावा डेयरी (1 गाय + 1 बछड़ा) और डेढ़ मीटर गहराई वाले 0.04 हेक्टेयर के खेती के तालाब को भी इसमें शामिल किया गया है जिसका उपयोग सिंचाई और मछली पालन के लिए किया जाता है।

भूमि विन्यास–आधारित कृषि प्रणालियां : अंडमान–निकोबार द्वीप समूह में ऊंचाई और गर्त वाले इलाकों पर आधारित प्रणाली को ब्रॉड बैड एवं फरो (नाली और क्यारी) के नाम से भी पुकारा जाता है। ये तटवर्ती इलाकों में समुद्र का जलस्तर बढ़ने से पानी में डूब जाने की आशंका वाले खेतों में चावल की खेती पर आधारित प्रणाली है। यह धान की फसल के साथ ही खेतों में सब्जियां उगाने, मछली पालने और चारा उगाने की तकनीक है। इसमें खेतों में क्यारियां और नालियां बना ली जाती हैं। बरसात के मौसम में पानी के भराव वाली गहराई वाली नालियों में धान उगाया जाता है जबकि पानी की सतह से उठी हुई क्यारियों में मौसमी सब्जियां और चारा उगाया जाता है। लंबे समय तक टिके रहने, आसानी से अपनाए जा सकने और ज़मीन के कुशल

चित्र–2: शुद्ध प्राप्ति और बी:सी अनुपात की दृष्टि से अंडमान–निकोबार द्वीपसमूह में विभिन्न प्रणालियों का तुलनात्मक कार्य निष्पादन

उपयोग जैसी अपनी विशेषताओं के कारण इस तकनीक की कई खूबियां हैं खासतौर पर तटवर्ती इलाकों में। इस तरह की प्रणाली में कई चीजों के उत्पादन की संभावना रहती है। इस तरह के मॉडल पश्चिम बंगाल में भी आजमाए गए हैं और सफल पाए गए हैं।

किसानों की भागीदारी पर आधारित सुधार और शोधनः सीमांत परिवारों की आमदनी बढ़ाने के लिए कृषि प्रणालियों के बारे में अभिनव दृष्टिकोण से संकेत मिलता है कि अगर मौजूदा प्रणाली में भेड़–बकरी तथा मुर्गियों आदि को शामिल कर दिया जाए तो इससे आमदनी और रोजगार में बढ़ोतरी हो जाती है। अतिरिक्त आय और रोजगार सृजन से सीमांत किसानों की आजीविका के स्तर को बढ़ाने में मदद मिलती है।

प्रणालियों का तुलनात्मक कार्य निष्पादन

अंडमान–निकोबार द्वीपसमूह में एकल फसल का फसल प्रणालियों के साथ तुलनात्मक कार्य निष्पादन चित्र–2 में दिया गया है जिससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि समन्वित कृषि प्रणाली और ज़मीन में बदलाव पर आधारित उपाय (ब्रॉड बेड और फरो प्रणाली) शुद्ध प्राप्ति और बी:सी अनुपात की दृष्टि से कहीं बेहतर हैं।

आगे की राह

मौजूदा कृषि प्रणालियों में फसलों व उनके तौर–तरीकों में विविधता, पशुधन घटकों में सुधार, बागवानी, किचन गार्डनिंग, प्राथमिक और द्वितीयक प्रसंस्करण और मेड़ों पर वृक्षारोपण करना ऐसे जरूरी उपाय शामिल हैं जिनसे भारत के छोटी काश्त वाले किसानों की खेती से होने वाली आय को सुधारा जा सकता है। इससे किसान परिवारों की संतुलित आहार, उनके भोजन में पौष्टिक तत्वों तथा पानी के पुनर्चक्रण को पूरा करने के साथ–साथ परिवार के लिए कृषि कार्यों में रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। वर्तमान कृषि प्रणालियों में विविधता से इसके फायदों का स्पष्ट पता चलता है। ऐसा देखा गया है कि प्रणालीगत सुधारों से उत्पादकता और लाभप्रदता में दो गुना वृद्धि होती है। इतना ही नहीं, इससे संसाधनों की 40 से 50 प्रतिशत तक बचत की जा सकती है और किसानों के लिए साल भर आमदनी सुनिश्चित की जा सकती है। विज्ञान पर आधारित उच्चीकृत समन्वित कृषि प्रणाली अपनाने के लिए निम्नलिखित कदम आवश्यक हैं:

1. बाजारोन्मुख विविधीकरण, आजीविका बढ़ाने और इसके लिए वैकल्पिक फसल उगाने, बेहतर किस्म के मवेशी पालने और प्राथमिक कच्चे माल के मूल्य संवर्धन पर विशेष रूप से जोर दिया जाना चाहिए।
2. फसल, बागवानी, पशुधन और मत्स्य पालन कार्यक्रमों के समन्वय पर आधारित राष्ट्रीय समन्वित कृषि प्रणाली शुरू की जानी चाहिए ताकि समन्वित कृषि प्रणाली दृष्टिकोण को बढ़ावा मिले।
3. समन्वित कृषि प्रणाली की अवधारणा का खेती की प्रणालियों के परिप्रेक्ष्य में अग्रिम–स्तर पर प्रदर्शन करने से किसान परिवारों की स्थिति में समग्र रूप से सुधार होगा।
4. मृदा स्वास्थ्य कार्ड से कृषि और कृषि प्रणाली स्वास्थ्य कार्ड के स्तर पर जाने की आवश्यकता है ताकि मिट्टी, पौधे, पशुधन और पारिवारिक–स्तर पर मनुष्यों पर ध्यान केंद्रित किया जा सके।
5. संबद्ध पक्षों (किसानों और विस्तार कार्यकर्ताओं) की क्षमता, खासतौर पर उनके कौशल के विकास की आवश्यकता है जिसमें भौतिक और टेक्नोलॉजी का भी योगदान रहना चाहिए।
6. फसल और चारे वाली फसलों की अदला–बदली करके बुआईः इसके अंतर्गत फसलों, चारे और उच्च मूल्य वाली फसलें, जैसे सब्जियां, फलदार वृक्ष, औषधीय व सुगंधित पौधों वाली फसलें और फलों के बाग शामिल हैं।
7. किसानों की पसंद के अनुसार स्थान विशेष के लिए खास मवेशी पालना, खासतौर पर बकरी, भेड़, सूअर जैसे छोटे पशु पाले जाने चाहिए और इसमें टेक्नोलॉजी की मदद भी ली जानी चाहिए।
8. उत्पादों में विविधता लाकर (प्रक्रिया और उत्पादों में भौतिक परिवर्तन की दृष्टि से) किसानों की आमदनी/मासिक आय में सुधार किया जाना चाहिए।
9. मौजूदा प्रणाली के तहत ऐसी गतिविधियों को भी अपनाया जाना चाहिए जिसमें कम ज़मीन की आवश्यकता हो, जैसे मशरूम की खेती, मधुमक्खी पालन आदि।

(श्री रविशंकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम, मेरठ में प्रधान वैज्ञानिक और कार्यक्रम सुविधा प्रदाता हैं; श्री पंवार संस्थान के निदेशक हैं।)

ई–मेल : n.ravisankar@icar.gov.in

ई–मेल : director.iifsr@icar.gov.in

कृषि आय बढ़ाने वाली कम लागत की तकनीकें

–अशोक सिंह

कृषि क्षेत्र में भी ऐसी संभावनाओं की कमी नहीं है जिनसे सम्मानजनक आय की प्राप्ति की जा सकती है। केंद्र और राज्य सरकारों की ओर से भी ऐसी योजनाओं और कार्यक्रमों का आयोजन समय–समय पर किया जाता है जिनका उद्देश्य कृषक समुदाय को आधुनिक कृषि तकनीकें अपनाने के लिए प्रेरित करना है।

इस वास्तविकता से इंकार नहीं किया जा सकता है कि आज भी हमारे देश में बहुसंख्यक किसान सीमांत या लघु कृषकों की श्रेणी में आते हैं। मोटे तौर पर ऐसे कृषकों से आशय है एक हेक्टेयर से कम भूमि जोत वाले कृषक। इनमें से अधिकांश किसानों की पैदावार अपने परिवार के लिए गुजर–बसर करने लायक खाद्यान्न के उत्पादन तक ही सिमटी हुई है। सरप्लस उपज तो बहुत दूर की बात है– बाढ़, सूखा या अन्य विपदाओं के कारण किसानों के लिए कभी–कभी तो खेती की लागत भी निकालनी मुश्किल पड़ जाती है। अच्छी उपज मिल भी जाए तो उचित मूल्य मिलना मुश्किल होता है। फलों–सब्जियों जैसी शीघ्र खराब होने वाली फसलों को भी उन्हें मजबूरी में स्थानीय खरीददारों के हाथों में औने–पौने दामों में बेचना पड़ जाता है। ऐसे ही तमाम कारणों के कारण वर्तमान में किसान परिवार के बच्चे खेती को आयअर्जन का आधार बनाने से कतराते हैं और रोजगार की तलाश में शहरों की तरफ पलायन करने को कहीं बेहतर विकल्प समझते हैं। ये ग्रामीण युवा जोश में ऐसे कदम तो उठा लेते हैं पर यह सोच नहीं पाते कि शहरी जिंदगी की परेशानियों और अथक मेहनत करने के बावजूद दो जून की रोटियां जुटा पाने के संघर्ष में उनकी जिंदगी उलझकर रह जाएगी।

केंद्रीय कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत देश में कृषि अनुसंधान और कृषि शिक्षा का संचालन और प्रबंधन करने वाली शीर्ष संस्था के रूप में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (भाकृअनुप) के अधीन कार्यरत 103 से अधिक कृषि अनुसंधान संस्थानों, प्रायोजना निदेशालयों और लगभग 700 कृषि विज्ञान केंद्रों द्वारा इसी क्षेत्र में निरंतर काम किया जा रहा है। इनके द्वारा विशेषकर सीमांत, छोटे और मझोले किसानों के लिए कृषि को लाभदायी बनाने, कम लागत की खेतीबाड़ी की तकनीकों, समेकित कृषि प्रणाली, खेती के साथ पशुपालन, शूकर पालन, मात्स्यिकी, मधुमक्खी पालन, रेशम उत्पादन, खाद्य प्रसंस्करण, जैविक खेती, वैज्ञानिक खेती के विभिन्न आयामों आदि पर आधारित तमाम कृषि प्रणालियों और प्रौद्योगिकियों एवं तकनीकों का विकास किया गया है। इनका उपयोग कर सीमांत किसान भी अपनी छोटी जोतों से साल भर में न सिर्फ कई फसलों का उत्पादन कर सकते हैं बल्कि समेकित/मिश्रित कृषि को अपनाकर अतिरिक्त आय आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। आइए, चर्चा करते हैं ऐसी ही कम लागत वाली कृषि प्रौद्योगिकियों/तकनीकों की जिन्हें परिषद् के विभिन्न अनुसंधान संस्थानों द्वारा तैयार किया गया है। इन्हें छोटे और सीमांत किसान भी बिना ज्यादा निवेश के आसानी से अपना सकते हैं।

मोटे अनाजों से बढ़ाएं आय– इस वर्ग में ज्वार, सांवां, कुटकी, कोड़ों, चेना, कंगनी, रागी जैसे गौण अनाजों का उल्लेख किया जा सकता है। इनमें प्रोटीन, रेशे, विटामिनों आदि की भरपूर मात्रा पाई जाती है। भाकृअनुप–भारतीय कदन्न अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद के वैज्ञानिकों की मेहनत का नतीजा है कि विभिन्न प्रकार के मोटे अनाजों की खेती के लिए उन्नत प्रौद्योगिकियों का विकास संभव हो सका है जिनसे बेहतर गुणवत्ता (78 प्रतिशत तक) के साथ अधिक उपज (58 प्रतिशत तक) भी ली जा सकती है। इन नई तकनीकों में अंतः फसलों (ज्वार–अरहर ,ज्वार–सोयाबीन आदि) की खेती से भी अधिक आय प्राप्ति के विकल्प पर जोर दिया गया है। अधिक उपज देने में सक्षम विभिन्न मोटे अनाजों का विकास भी इस क्रम में किया गया है। उदाहरण के लिए ज्वार की

अधिक पैदावार देने में सक्षम किस्म ज्वार संकर–सी एस एच 17 का उल्लेख किया जा सकता है। इससे प्रचलित ज्वार की किस्मों की तुलना में 50 प्रतिशत से अधिक उपज संभव है।

जावा सिट्रोनेला से कमाई– विभिन्न औद्योगिक एवं घरेलू उपयोगों के कारण इसके तेल की मांग में हाल के वर्षों में काफी बढ़ोतरी हुई है। इसके पत्तों से लेमनग्रास की तरह का तेल निकलता है। यह तेल बाजार में 1000 से 1200 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से बिकता है। खेती के पहले वर्ष में 150–200 किलोग्राम तथा दूसरे से पांचवें वर्ष तक 200–300 किलोग्राम तक तेल इस बहुवर्षीय घासरूपी फसल की कटाई से प्राप्त हो जाता है। पहले साल ही इसकी बुआई पर खर्च होता है। उसके बाद आगामी वर्षों में इस पर नगण्य खर्च होता है। मोटे तौर पर इससे किसान को शुद्ध लाभ 50–70 प्रतिशत तक या 80 हजार रुपये प्रति हेक्टेयर तक मिल जाता है। इस बारे में भाकृअनुप–उत्तर–पूर्व विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी संस्थान, जोरहट से अधिकृत जानकारी मिल सकती है।

प्याज और लहसुन–आधारित नई प्रौद्योगिकियां– खरीफ मौसम में प्याज एवं लहसुन का उत्पादन कम होता है। इसके पीछे मुख्य रूप से पानी का जमाव, कीटों और रोगों का प्रकोप और खरपतवार जैसे कारक जिम्मेदार हैं। भाकृअनुप–प्याज एवं लहसुन अनुसंधान निदेशालय, पुणे द्वारा खरीफ में भी प्याज उत्पादन की ऐसी प्रौद्योगिकियों का विकास किया गया है जिनके इस्तेमाल से किसान इन फसलों की उत्पादकता बढ़ाकर उच्च कीमत प्राप्त कर सकते हैं। उदाहरण के लिए निदेशालय के मार्गदर्शन में विदर्भ के देउलगांव के एक किसान श्री नामदेवराव अदाऊ का उल्लेख किया जा सकता है जिन्होंने अपनी 4 एकड़ ज़मीन पर 'भीमा सुपर' प्याज की किस्म से 2.60 लाख रुपये तक की आय प्राप्त करने में सफलता हासिल की।

जलसंचय प्रौद्योगिकी से बढ़ी कृषि आय– खेतों में वर्षा जल अमूमन बिना किसी उपयोग के बह जाता है और इसके साथ ही खेत की उर्वर मिट्टी की ऊपरी परत भी चली जाती है। इस समस्या के समाधान के लिए भाकृअनुप– केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद द्वारा एक विशेष जल संचयन प्रौद्योगिकी को विकसित किया गया है। इसके तहत खेत के निचले हिस्से में तालाब बनाए जाते हैं और खेत के जलबहाव को नालियों के जरिए इस तालाब तक पहुंचाया जाता है। इसका दोहरा फायदा किसानों को मिलता है। पहला तो यही कि सूखे की स्थिति में भी फसलों की सिंचाई के लिए जल की उपलब्धता सुनिश्चित हो जाती है और दूसरा, इस तालाब में मछली पालन से भी अतिरिक्त आय हासिल की जा सकती है।

गन्ना खेती की लागत को कम करने वाले कृषि यंत्र– कृषि श्रमिकों की बढ़ती लागत तथा कृषि उपयोगी पशुओं को पालने का प्रचलन कम होने से गन्ना किसानों के लिए खेती काफी खर्चीली होती जा रही है। इस समस्या को दूर करने के उद्देश्य से भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा गन्ने की खेती के लिए जरूरी सभी प्रकार के कृषि उपयोगी उपकरणों/यंत्रों का विकास किया गया है। इनकी मदद से गन्ने के खेत की तैयारी, बुआई, निराई–गुड़ाई एवं अन्य कृषि क्रियाओं के खर्च में उल्लेखनीय रूप से बचत संभव है। इनसे बीज और खाद की मात्रा में 15–20 प्रतिशत की कमी, गन्ना पौधों की सघनता में 5–20 प्रतिशत की बढ़ोतरी, उत्पादकता में 10–15 प्रतिशत की वृद्धि तथा श्रम लागत में 20–80 प्रतिशत तक की बचत संभव है।

बासमती धान में आईपीएम प्रणाली से लाभ– बासमती धान की अधिकतर प्रजातियों में कीट रोगों से प्रतिरोधकता नहीं होने की वजह से तनाबेधक, पत्ती लपेटक, भूरा फुदका रोग, गंधी बग, शीथ ब्लाईट, ब्लास्ट तथा बकाने जैसे रोगों के कारण उपज में काफी कमी हो जाती है। भाकृअनुप–राष्ट्रीय समेकित नाशीजीव प्रबंधन अनुसंधान केंद्र, नई दिल्ली के वैज्ञानिकों द्वारा आईपीएम (समेकित कीट प्रबंधन) के स्थान पर विशिष्ट मॉडल विकसित किए गए हैं जिनका फायदा उत्तर प्रदेश, हरियाणा और उत्तराखंड के बासमती धान की खेती करने वाले किसान उठा सकते हैं। इनके प्रयोग से कीटनाशकों के छिड़काव में कमी, संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग तथा उर्वरक लागत में कमी तथा सिंचाई एवं मजदूरी के खर्च में काफी बचत होती है। इस प्रकार कुल फसल लागत में भी कमी आती है। इतना ही नहीं कम कीटनाशकों के प्रयोग से तैयार ऐसे धान की बाजार में कीमत भी ज्यादा मिलती है।

अंतरवर्ती फसल प्रणाली से भरपूर मुनाफा– इस प्रणाली में एक ही खेत में, एक ही मौसम में एवं एक ही समय में दो या दो से अधिक फसलों का एक साथ उत्पादन किया जा सकता है। इस प्रकार कम लागत में प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। इस पद्धति में धान्य फसलों के साथ दलहनी फसलों को भी उगा पाना संभव है। एक सीधी तो दूसरी फैलने वाली फसल लगाने से खरपतवारों का नियंत्रण भी इस अंतरवर्ती फसल प्रणाली में किया जा सकता है। यही नहीं फसलों को रोगों और कीटों से भी इस विधि से बचाया जा सकता है, जैसे चने की फसल में धनिया को अंतरवर्ती फसल के रूप में उगाने से चने में लगने वाले कीटों की रोकथाम कर अधिक उपज ली जा सकती है।

केंद्रीय फसलों से आमदनी– आलू और अन्य केंद्रीय फसलों (कसावा, शकरकंद, जिमीकंद टेनिया, याम अरारूट आदि) की खेती में संलग्न किसान इन फसलों की उपयुक्त किस्में, आधुनिक उत्पादन एवं संरक्षण तकनीकें अथवा प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियां अपनाकर अपनी आमदनी को उल्लेखनीय रूप से बढ़ा सकते हैं। विश्वास नहीं होगा पर यह सच है कि पश्चिम बंगाल में आलू से मिलने वाली शुद्ध आय, चावल और गेहूं की तुलना में लगभग तीन गुना ज्यादा और इसी प्रकार बिहार में भी आलू से कहीं अधिक मुनाफा परंपरागत फसलों की तुलना में मिलता है। इन केंद्रीय फसलों से कई तरह के मूल्यवर्धित खाद्य उत्पाद भी बनाए जाते हैं। इनमें प्रमुख तौर पर आलू के चिप्स और

कसावा से तैयार किए जाने वाले स्नैक्स फूड, पास्ता आदि का जिक्र किया जा सकता है। जैव इथेनोल उत्पादन में भी कसावा का कम महत्व नहीं है।

कुमट का महत्व– कुमट एक वृक्ष है जिससे गोंद मिलता है। यह गोंद अत्यंत उच्च गुणवत्ता वाला होता है एवं बाजार में 500 से 800 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से बिकता है। इसका उपयोग दवा उद्योग, खाद्य उत्पादों तथा अन्य उद्योगों में किया जाता है। अमूमन ये वृक्ष अर्ध–शुष्क जलवायु और कंकरीली–पथरीली भूमि पर होते हैं। कृषि वानिकी के अंतर्गत इसे बड़े पैमाने पर उगाकर अच्छी–खासी आय साल–दर–साल प्राप्त की जा सकती है। इसके बारे में अधिक जानकारी भाकृअनुप–कृषि वानिकी अनुसंधान संस्थान, झांसी से हासिल की जा सकती है।

जैविक खेती के लिए कृषि पद्धतियां– जैविक उत्पादों या ऑर्गेनिक प्रोडक्ट्स का बाजार मूल्य अधिक मिलने के कारण किसानों का जैविक खेती की ओर बड़ी संख्या में आकर्षित होना स्वाभाविक है। किसानों के बीच जैविक कृषि की बढ़ती लोकप्रियता को देखते हुए 45 फसलों/फसल पद्धतियों पर आधारित जैविक कृषि पद्धतियों का विकास किया गया है। इनका प्रचार–प्रसार राष्ट्रीय जैविक कृषि केंद्र, परंपरागत कृषि विकास योजना तथा राष्ट्रीय बागवानी मिशन के माध्यम से किया जा रहा है।

समेकित कृषि प्रणाली मॉडल– देश के विभिन्न कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उद्देश्य से लघु एवं सीमांत कृषकों के अनुरूप विविध फसलों, बागवानी उत्पादों, कृषि वानिकी, पशुधन तथा मात्स्यिकी पर आधारित 45 बहु–उद्यमी समेकित कृषि प्रणाली मॉडलों का विकास किया गया है। इनके उपयोग से कृषकों की आय को 1.5–3.5 लाख रुपये तक बढ़ाया जा सकता है। इन कृषि प्रणालियों से संबंधित विस्तृत जानकारी के लिए भाकृअनुप–भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम से संपर्क किया जा सकता है।

आलू उत्पादन के लिए निम्न लागत पद्धति– आलू की खेती में अन्य फसलों की तुलना में कहीं अधिक निवेश करना पड़ता है। इस प्रकार खेती की लागत का करीब 35–40 प्रतिशत बीजों, लगभग 40 प्रतिशत कृषि मजदूरी, 14 प्रतिशत उर्वरकों एवं खाद तथा 7 प्रतिशत सिंचाई पर खर्च हो जाता है। भाकृअनुप–केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा आलू उत्पादन में श्रम, बीज, जुताई, उर्वरक तथा सिंचाई निवेशों में होने वाले व्यय में बचत के लिए विशिष्ट प्रौद्योगिकी विकसित की गई है। किसान इसे अपनाकर कम लागत में आलू उत्पादन कर अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

इसबगोल की खेती से लाभ– इसबगोल एक महत्वपूर्ण फसल है जो रबी के मौसम के दौरान गुजरात, मध्यप्रदेश और राजस्थान में उगाई जाती है। इसके बीज के आवरण को भूसी के नाम से जाना जाता है और इसमें कई तरह के औषधीय गुण होते हैं। यह जानकर आश्चर्य होगा कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इसबगोल की भूसी निर्यात करने वाला भारत एकमात्र राष्ट्र है।

जल संग्रहण/प्रबंधन की प्रभावी रणनीतियां

भारत में विश्व के मात्र 4 प्रतिशत जल संसाधन की उपलब्धता है जबकि वैश्विक आबादी का 16 प्रतिशत हिस्सा यहीं बसता है। ऐसे में जल संरक्षण और इसके दक्ष उपयोग के महत्त्व को भली–भांति समझा जा सकता है। जल संरक्षण मोटे तौर पर तीन तरीकों से संभव है– वर्षाजल संरक्षण, नहरी जल प्रबंधन और भूजल संरक्षण।

वर्षा जल संरक्षण– इसमें खेती योग्य क्षेत्र में संचित वर्षा जल के अन्तःसरण (इन्फिल्ट्रेशन) में सुधार के द्वारा मृदा में जल संरक्षण को बढ़ाया जाता है। इस प्रक्रिया में 100 सेंमी चौड़ी क्यारियां, 50 सेंमी गहरे कुंड/कंटूर के साथ बनाई जाती हैं। अमूमन 5 प्रतिशत की मृदा ढलान एवं वर्षा जहां 350–750 मिमी. होती है, उस जगह को इसके लिए चुना जाता है। कूंड के दोनों तरफ फसलों को लगाया जाता है। इसी तरह से कटूर ट्रेंचिंग पद्धति के माध्यम से खाइयों को कृत्रिम रूप से फसल क्षेत्र में कंटूर पंक्तियों के साथ तैयार किया जाता है। यदि वर्षा जल पहाड़ी के नीचे की ओर बह रहा है तो इन खाइयों द्वारा जल को संग्रहित किया जा सकता है। बाद में यह जल मृदा की ऊपरी सतही परतों में फसल विकास एवं उपज वृद्धि के लिए अन्तःसरित हो जाता है। इसी तरह से सीढ़ीदार खेत एवं कंटूर मेड़बंदी पद्धति के अंतर्गत पहाड़ी ढलान को कई छोटे–छोटे ढलानों में बांटते हैं और जल–प्रवाह को रोक कर मृदा में जल अवशोषण को बढ़ावा दिया जाता है। माइक्रो कैचमेंट या सूक्ष्म जलग्रहण तकनीक के जरिए बारानी क्षेत्रों से वर्षाजल को संग्रहित किया जाता है, ताकि उस क्षेत्र की मृदा में सुधार हो सके। इसके तहत मुख्यतः पेड़ों या वृक्षों को उगाया जाता है। एक्स सीटू जल संरक्षण तकनीकों में वर्षाजल अपवाह को फसल क्षेत्र से बाहर संरक्षित किया जाता है। इसके लिए खेत तालाब, चैक डैम आदि का निर्माण किया जाता है।

नहरी जल संरक्षण– नहरी सिंचाई का कुल सिंचाई में लगभग 29 प्रतिशत योगदान है। कुछ नहरें वर्ष भर सिंचाई जल उपलब्ध करवाती हैं जिससे जब भी फसलों को सिंचाई जल की जरूरत हो, तुरंत उपलब्ध करवाया जा सकता है। इस तरह से सूखे की स्थिति से फसलों का बचाव किया जा सकता है। कहीं–कहीं पर नहरों के जल को संरक्षित रखने के लिए सहायक जल संचयन संरचनाओं का निर्माण भी किया जाता है।

भूजल प्रबंधन– भूजल हमारे देश में सिंचाई, घरेलू एवं औद्योगिक क्षेत्रों की जल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण संसाधन है। भूजल की 91 प्रतिशत खपत कृषि कार्यों में तथा शेष 9 प्रतिशत घरेलू और औद्योगिक उपयोग में होती है। भूजल की प्राकृतिक आपूर्ति बढ़ने के लिए भूभरण अत्यंत आवश्यक है। यह प्राकृतिक अथवा कृत्रिम तौर पर भी हो सकता है। प्राकृतिक पुनःजल आपूर्ति एक अत्यंत ही धीमी प्रक्रिया है, इसलिए कृत्रिम पुनःभरण को भी प्रभावी ढंग से इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके अंतर्गत जल विस्तार,गड्ढों एवं कुंओं से पुनःभरण एवं सतही जल निकायों से पम्पिंग आदि का सहारा लिया जा सकता है।

पोषक तत्वों से भरपूर खाद्यान्न किस्में

देश में कृषि वैज्ञानिकों द्वारा निरंतर पोषक तत्वों से भरपूर नई खाद्यान्न किस्मों का विकास किया जा रहा है। इनमें हाल ही में तैयार भारत की पहली जैव संपूरित गेहूं किस्म डब्ल्यूबी–2 का नाम उल्लेखनीय है। इसमें जस्ते की मात्रा 42 पीपीएम है जोकि अन्य प्रचलित किस्मों की तुलना में 15 प्रतिशत अधिक है। इसके अतिरिक्त इसमें लौह तत्व 40 पीपीएम हैं जो अन्य किस्मों की अपेक्षा 5 प्रतिशत अधिक हैं। उच्च प्रोटीन (12.4 प्रतिशत) और श्रेष्ठ चपाती गुणों वाली यह किस्म पोषण सुरक्षा की दृष्टि से काफी उपयोगी कही जा सकती है। धान की पहली जिंक से समृद्ध बायो फोर्टीफाइड किस्म डीआरआर धान–45 में 22.6 पीपीएम मात्रा में जिंक की उपस्थिति पाई गई है। अनाज की अन्य प्रमुख पोषक तत्वों से परिपूर्ण किस्मों में मक्का की पूसा विवेक क्यूपीएम 9 उन्नत की उपयोगिता भी कुछ कम नहीं है। इसमें विटामिन 'ए' और उच्च मात्रा में ट्रिप्टोफेन एवं लाइसिन की मात्रा पाई जाती है। इसी प्रकार बाजरा की एचएचबी–299 किस्म का नाम लिया जा सकता है जिसमें लौह तत्व और जस्ते की उच्च मात्रा पाई जाती है। अनाज और दलहन के बाद कंदीय फसलें तीसरा महत्वपूर्ण आहार स्रोत हैं। विश्व–स्तर पर प्रत्येक पांच में से एक व्यक्ति का मुख्य भोज्य आहार कंदीय फसलें हैं। ये फसलें भुखमरी की चुनौती का सामना करने तथा खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने की दृष्टि से पोषक तत्वों का खजाना हैं। उदारहरण के लिए शकरकंद की हाल ही में विकसित भू सोना किस्म विटामिन 'ए' के साथ उच्च ऊर्जा, विटामिन 'बी', 'सी', 'के' फास्फोरस एवं पोटेशियम से भी भरपूर है। विटामिन 'ए' की कमी से पीड़ित लोगों के लिए शकरकंद की यह किस्म किसी वरदान से कम नहीं है। इसी प्रकार शकरकंद की भू–कृष्णा किस्म भी काफी महत्वपूर्ण कही जा सकती है जिसमें एंथोसायनिन एवं फ्लेवनायड यौगिक ऑक्सीकरण रोधी गुण वाले होते हैं और ये तत्व शरीर में कैंसर की प्रतिरोधिता को बढ़ाने में मददगार हैं। कसावा या टैपियोका में आलू से लगभग दोगुनी मात्रा में कैलोरी पाई जाती है। कसावा की श्री स्वर्णा किस्म में बीटा कैरोटीन पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है।

इसकी खेती से बड़ी सरलता से 15 से 20 हजार रुपये की कमाई प्रति हेक्टेयर ली जा सकती है। इसकी खेती से जुड़े वैज्ञानिक पहलुओं के बारे में जानकारी के लिए भाकृअनुप–राष्ट्रीय औषधीय एवं सगंधीय पौध अनुसंधान संस्थान केंद्र, आनंद से संपर्क किया जा सकता है।

आम के पुराने अनुत्पादक बागों की जीर्णोद्धार प्रौद्योगिकी– वैज्ञानिक अध्ययनों से यह तथ्य सामने आया है कि पुराने और सघन आम के बागों की उत्पादकता में लगभग 30 से 35 प्रतिशत तक की कमी होती जा रही है। भाकृअनुप–केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा आम के पुराने बागों के जीर्णोद्धार की पद्धति का विकास किया गया है। ऐसे पेड़ों को पुनः उत्पादक बनाने की लागत लगभग 160 रुपये प्रति पेड़ आती है और ऐसे उपचारित पेड़ आगामी 20–25 वर्षों तक फलों का उत्पादन करते रहते हैं। इस प्रकार नए आम के बाग लगाने के निवेश से बचा जा सकता है।

शुष्क क्षेत्रों में सब्जियां उगाने के लिए घड़ा सिंचाई प्रौद्योगिकी– जल की कमी वाले क्षेत्रों में फसलों के अधिक उत्पादन के लिए जल–संरक्षण तथा दक्षतापूर्ण जल इस्तेमाल करने से संबंधित नीतियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भाकृअनुप–केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल ने सीमित जल का कुशलता से उपयोग कर बेहतर फसलोत्पादन के लिए घड़ा सिंचाई तकनीक की संस्तुति की है। इस पद्धति का नाम इसके प्रमुख घटक घड़े के नाम पर ही रखा गया है। इस प्रणाली से टमाटर की उपज में तीन गुना तथा अन्य सब्जियों में दो गुना लाभ–लागत अनुपात मिलता है। यह अत्यंत साधारण प्रौद्योगिकी है और इस तकनीक की आर्थिकी पूर्णतः घड़ों के जीवन पर निर्भर करती है। इसके तहत धरातल पर रखे घड़ों के विपरीत दबे हुए घड़ों से पानी सीधे मृदा में जाता है और घड़ों की दीवारों से वाष्पन के जरिए जल की हानि नहीं होती है।

गेहूं बीज उत्पादन तकनीक– स्व परागित फसल होने के कारण गेहूं की किस्मों की गुणवत्ता में साल–दर–साल गिरावट आने लगता है। ऐसे में बीजों को 5 से 6 वर्षों के अंतराल के बाद बदलना जरूरी हो जाता है। बाजार से हर बार नए बीज खरीदकर बोना खेती की लागत को काफी बढ़ा देता है। इसलिए किसानों के लिए यह जरूरी हो जाता है कि वे इस्तेमाल के लिए प्रजनक, सत्यापित या प्रमाणित बीज किसी सरकारी अथवा विश्वसनीय स्रोत से खरीदकर न सिर्फ इनका इस्तेमाल करें बल्कि स्वयं इनका बहुगुणन भी करें। इस प्रकार तैयार बीजों का प्रयोग वे अगले सीजन में कर सकते हैं और आकर्षक मूल्य पर इनको बेचकर अतिरिक्त लाभ भी कमा सकते हैं। इस बारे में उपयोगी जानकारी भाकृअनुप–गेहूं अनुसंधान निदेशालय, करनाल द्वारा प्रकाशित मार्गदर्शिका से मिल सकती है।

भारत सरकार ही नहीं विभिन्न राज्य सरकारों के कृषि अनुसंधान से जुड़े विभाग और कृषि अनुसंधान संस्थानों/कृषि विश्वविद्यालयों में भी कृषक समुदाय के लिए उपयोगी नई और वैज्ञानिक कृषि प्रणालियों का निरंतर विकास किया जा रहा है। इन अद्यतन सूचनाओं तथा कृषि संबंधित जानकारियों का प्रचार–प्रसार करने के लिए देश के प्रत्येक जिले (कुछ जिलों में एक से अधिक भी) में कृषि विज्ञान केंद्रों की स्थापना की गई है। किसान भाई इनके वैज्ञानिकों से सीधे संपर्क कर उन्नत कृषि प्रणालियों से संबंधित जानकारियां एवं प्रशिक्षण भी प्राप्त कर सकते हैं।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हिंदी मासिक कृषि पत्रिका 'खेती' के संपादक हैं।)

ई–मेल : ashok-singh-32@gmail.com

खाद्य प्रसंस्करण से मूल्य संवर्धन

—देवाशीष उपाध्याय

सरकार ने खाद्य प्रसंस्करण के महत्व को देखते हुए राष्ट्रीय—स्तर पर पहली बार स्वतंत्र रूप से खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय गठित किया है। यह मंत्रालय खाद्य प्रसंस्करण के विकास, विस्तार और प्रचार—प्रसार के अतिरिक्त किसानों को स्थानीय जरुरतों के मुताबिक प्रशिक्षण एवं अनुदान की व्यवस्था कर रहा है और खाद्य प्रसंस्कृत उत्पाद के विपणन हेतु व्यापक बाजार व्यवस्था प्रदान करने के लिए प्रयासरत है।

भारत कृषि प्रधान देश है। यहां की लगभग 65—70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि अथवा कृषि—आधारित उद्योगों पर आश्रित है। देश के विकास के लिए किसानों का विकास अपरिहार्य है। भारतीय कृषि व्यवस्था मानसून—आधारित जुआ कहलाती है क्योंकि प्रकृति कभी—कभी किसानों का साथ देती है तो कभी—कभी निराश भी कर देती है। जिस वर्ष प्रकृति मेहरबान होती है, उस वर्ष कृषि उत्पाद की पैदावार तो बड़े पैमाने पर हो जाती है परंतु बाजार में मांग की तुलना में आपूर्ति अधिक होने के कारण कृषि उत्पादकों को उत्पादन का समुचित मूल्य नहीं प्राप्त होता है। इसी प्रकार प्रकृति के कुपित होने वाले वर्ष में तो उत्पादन लागत भी नहीं निकल पाती है। देश में कृषि उत्पादों के संरक्षण हेतु संसाधनों, शीतगृहों एवं शीतश्रृंखला का अभाव होने के कारण कृषि उत्पाद उपभोक्ता तक पहुंचने के दौरान बड़े पैमाने पर नष्ट हो जाते हैं। ऐसे में उत्पादक दोनों तरफ से मारा जाता है। इसी कारण किसानों एवं कृषि—आधारित उद्योगों में संलग्न लोगों के कल्याण के लिए अनेक सरकारी योजनाओं एवं प्रयासों के बावजूद इनकी आर्थिक स्थिति सुधरने की बजाय और खराब होती जा रही है। इनकी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए आवश्यक है कि अत्याधुनिक वैज्ञानिक तकनीकी के प्रयोग द्वारा विपरीत एवं विषम परिस्थितियों में कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ ही साथ कृषि प्रसंस्करण विधा द्वारा कृषि उत्पाद को संरक्षित किया जाए।

प्राकृतिक स्थलीय संरचना और जलवायु विभिन्नता के कारण एक ही समय पर देश के विभिन्न भागों में भिन्न—भिन्न प्रकार की मानसून परिस्थितियां विद्यमान होती हैं जिसके कारण देश के विभिन्न भागों में भिन्न—भिन्न प्रकार के कृषि उत्पादों का उत्पादन होता है। इसलिए उत्पादकों को उत्पादों का समुचित मूल्य दिलाने और देश के अन्य भाग के उपभोक्ताओं को उचित कीमत पर पौष्टिक एवं संतुलित खाद्य पदार्थ मुहैया कराने के लिए उक्त खाद्यान्न, फल व सब्जी, वन, मत्स्य, मीट उत्पाद का त्वरित परिवहन द्वारा उत्पाद खराब होने से पूर्व देश के अन्य भागों की मंडियों में भेजा जाना आवश्यक है। अथवा कृषि प्रसंस्करण तकनीकी एवं विधाओं का उपयोग कर कृषि उत्पाद, वन, मत्स्य, मीट और मुर्गा इत्यादि को मूल रूप में कैनिंग, टेट्रा पैकिंग, शीत श्रृंखला में पैकिंग या भौतिक व रासायनिक अवसंरचना का रूपांतरण कर मूल्यवर्धन करने के साथ ही साथ सामान्य तापक्रम पर लंबे समय तक संरक्षित किया जाता है। कृषि प्रसंस्करण तकनीकी की सहायता से स्थानीय और ग्रामीण—स्तर पर बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उत्पन्न करने के साथ ही ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार किया जा सकता है।

खाद्य प्रसंस्करण

भारत में प्राचीनकाल से खाद्य प्रसंस्करण विधा का प्रयोग कर खाद्य पदार्थ, फल एवं सब्जियों को लंबे समय तक संरक्षित रखा जाता है। घरेलू—स्तर पर अचार, मुरब्बा, चिप्स, पापड़, जूस इत्यादि का निर्माण होता रहता था। औद्योगिकीकरण के पश्चात् औद्योगिक कंपनियां मोटा मुनाफा कमाने के चक्कर में पैकेट बंद, डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ एवं खाद्य प्रसंस्करण उत्पाद बाजार में उतारने लगीं। जिसके कारण घरेलू तथा लघु—स्तर पर निर्मित होने वाले खाद्य

प्रसंस्करण उत्पाद की मांग घटने लगी। यद्यपि सरकार खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को लघु एवं मध्यम उद्योग के रूप में विकसित करने के लिए प्रशिक्षण से लेकर, सस्ते दर पर ऋण प्राप्त कराने, आधारभूत अवसंरचना उपलब्ध कराने और अनुदान प्रदान करने के साथ विपणन हेतु बाजार व्यवस्था को मजबूत बनाने की दिशा में प्रयासरत हैं जिससे कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को स्थानीय–स्तर पर सुदृढ़ करते हुए रोजगार के अवसर मुहैया कराए जा सकें।

प्रसंस्करण तकनीकी एवं सिद्धांत

अल्पकालिक या शीघ्रता से खराब होने तथा सड़ने–गलने वाले कृषि उत्पाद, डेयरी उत्पाद, मांस एवं मीट उत्पाद और फल–सब्जियों इत्यादि, को नष्ट करने वाले कारकों को प्रतिबंधित व नियंत्रित कर, शेल्फ लाइफ बढ़ाकर दीर्घकाल तक संरक्षित रखा जा सकता है। प्रसंस्करण तकनीकी द्वारा कृषि उत्पाद के जीवाणु तथा कवक को नष्ट कर, उनके प्रजनन व विकास को नियंत्रित करने की प्रक्रिया प्रयुक्त की जाती है। कृषि उत्पाद में वसा के ऑक्सीकरण की गति को कम करने के साथ एंजाइम उपापचय की प्रक्रिया को नियंत्रित किया जाता है। जीवाणु एवं कवक के जीवन के लिए अनुकूल वातावरण एवं परिस्थितियां नमी, पानी और ऑक्सीजन पर नियंत्रण स्थापित कर कृषि उत्पाद को लंबे समय तक संरक्षित रखा जा सकता है। प्रसंस्करण तकनीकी द्वारा खाद्य उत्पाद का विविधीकरण और व्यवसायीकरण कर मूल्य संवर्धन किया जाता है। प्रसंस्करण में किण्वन, स्प्रेड्राइंग, फ्रिजड्राइंग, प्रशीतन, थर्मल प्रसंस्करण, निर्जलीकरण, धूप में सुखाना, नमक में परिरक्षण, शुगर में परिरक्षण, विभिन्न प्रकार से पकाना, रस सांद्रण, हिम शुष्कन, सिरका, साइट्रिक अम्ल, तेल, कृत्रिम मिठास तथा सोडियम बेंजोएंट जैसे परिरक्षकों द्वारा कवक व जीवाणुओं को नष्ट कर फल व सब्जियों को संरक्षित किया जाता है। कृषि उत्पाद की भौतिक व रासायनिक अवसंरचना में परिवर्तन कर अचार, मुरब्बा, जैम, जैली, वेजिटेबल सॉस, सब्जियों व फलों को मूल रूप में नमक/मीठे पानी में कैनिंग प्रणाली द्वारा अथवा इनका जूस/रस निकाल कर वैक्यूम/टेट्रा पैकिंग द्वारा लंबे समय तक संरक्षित रखा जाता है। प्रसंस्करण में प्राकृतिक परिपक्वन तथा विवर्णता को भी नियंत्रित किया जाता है। संरक्षण के लिए खाद्य पदार्थ को उपचार के पश्चात् सीलबंद अथवा निर्वात पैकिंग की आवश्यकता पड़ती है, जिससे संरक्षित खाद्य पदार्थों को जीवाणुओं द्वारा पुनः दूषित करने से बचाया जा सके।

कृषि प्रसंस्करण के चरण

खाद्यान्न प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन

खाद्यान्न जैसे– गेहूं, चावल, चना, मटर, दाल, मक्का और बाजरा इत्यादि दीर्घकालिक उत्पाद होते हैं। अर्थात गोदामों में इन्हें सामान्य वातावरणीय परिस्थितियों में लंबे समय तक संरक्षित किया जा सकता है, परंतु किसानों को कच्चे खाद्यान्न बेचकर कृषि लागत मूल्य भी निकाल पाना कठिन होता है। इसलिए खाद्यान्न की भौतिक व रासायनिक अवसंरचना में परिवर्तन कर उत्पाद का मूल्यवर्धन कर किसानों को फसल का अधिक मूल्य प्राप्त हो सकता है। खाद्यान्न का प्रसंस्करण कई चरणों में होता है। जैसे गेहूं से प्रारंभिक चरण में आटा, मैदा, सूजी, दलिया इत्यादि का निर्माण किया जा सकता है। प्राथमिक मूल्यवर्धित उत्पाद का पुनः प्रसंस्करण किया जा सकता है। जैसे– गेहूं का द्वितीय चरण में प्रसंस्करण बेकरी उत्पादन में, मिठाई निर्माण में, नमकीन उद्योग में, सेवई इत्यादि में किया जाता है। इसी प्रकार चावल, चना, दाल, मक्का और बाजरा इत्यादि का भी कई चरणों में खाद्य प्रसंस्करण कर मूल्यवर्धन किया जा सकता है। मूल्यवर्धित उत्पाद की पैकिंग कर देश के साथ–साथ विदेशों में भी निर्यात किया जा सकता है।

फल व सब्जियों का प्रसंस्करण

शारीरिक व मानसिक विकास के लिए संतुलित आहार की आपूर्ति में खाद्यान्नों के अतिरिक्त फल एवं सब्जियों का विशेष योगदान होता है। देश में जलवायु विविधता होने के कारण फल एवं सब्जियों के उत्पादन में एकरूपता नहीं है अर्थात् देश के विशिष्ट भाग के विशेष मौसम में किसी विशिष्ट फल व सब्जी का उत्पादन अधिक जबकि अन्य क्षेत्र में किसी अन्य फल व सब्जी का अधिक उत्पादन होता है। सामान्य तापक्रम पर सूक्ष्म जीवी, कवक व जीवाणुओं द्वारा फल व सब्जियों की रासायनिक अवसंरचना में तीव्र परिवर्तन करने के कारण इनका जीवनकाल कम हो जाता है और ये शीघ्रता से नष्ट हो जाते हैं। फल व सब्जियों को दीर्घकाल तक संरक्षित रखने के लिए स्वस्थ फल व सब्जियों की छटाई और सफाई करने के उपरांत विसंक्रमित कर शीतगृह में रखा जाता है। इनका सूदूर परिवहन भी शीतश्रृंखला द्वारा किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त फल व सब्जियों को नीयत तापक्रम पर गर्म कर लवणीय जल, नमक/मीठे पानी में प्रेशर कुकर के माध्यम से कैनिंग कर लंबे समय तक सामान्य तापक्रम पर संरक्षित किया जा

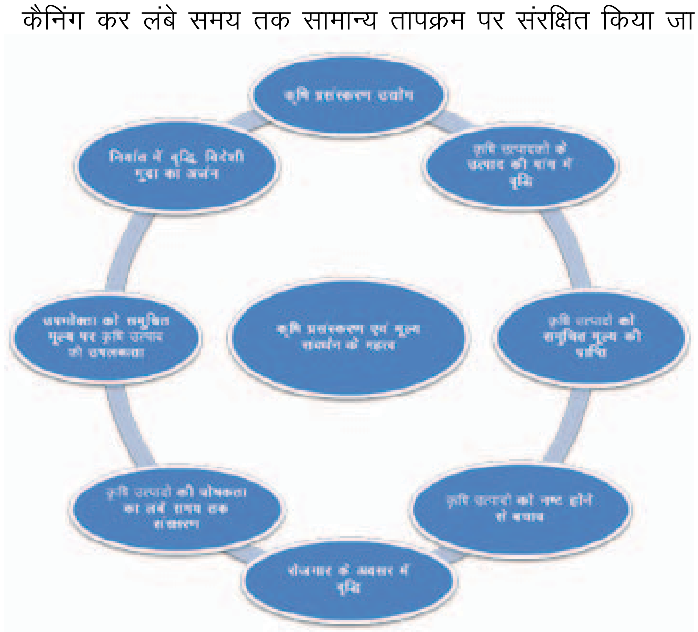

सकता है। इन्हें एसीटिक एसिड, पोटेशियम मेटाबाइ–सल्फाइट के साधारण घोल में रख कर भी परिरक्षित किया जाता है। फल व सब्जियों की भौतिक व रासायनिक संरचना में परिवर्तन कर जैसे–गाजर, लौकी, लहसुन, मिर्च, अदरक, करेले, चुकंदर आदि का पेस्ट बनाकर/जूस निकाल कर अथवा अचार बनाकर, निर्जीवीकरण कर वायुरुद्ध रूप से सील कर लंबे समय तक रखा जाता है। इससे जीवाणु अथवा कवक का प्रजनन नहीं हो पाता है। गाजर, लौकी, परवल इत्यादि सब्जियों का हलवा अथवा मिठाई बनाकर तथा आलू से चीप्स, पापड़, नमकीन इत्यादि बनाकर लंबे समय तक उपयोग किया जाता है।

टमाटर का जीवनकाल 5–7 दिनों तक का होता है, परंतु टमाटर का परिरक्षण रस निकालकर गाढ़े गूदे को चटनी या सॉस के रूप में किया जाता है। टमाटर के गूदे में ग्लेशियल ऐसेटिक एसिड और सोडियम बेंजोएट डालकर आग पर पकाकर परिरक्षित किया जाता है। यह रसायन फफूंदी और जीवाणुओं से गूदे को खराब होने से रोकता है तथा स्वाद व पौष्टिकता को बनाए रखता है। व्यावसायिक–स्तर पर टमाटर के गूदे को संरक्षित करने के लिए टमाटर को आग पर पकाया जाता है। ठंडा होने पर मिक्सी में पीस कर गूदा बनाकर पुनः उबाला जाता है। जब वजन का एक तिहाई रह जाता है तो 5 मिलीलीटर ग्लेशियल एसीटिक एसिड प्रति किलोग्राम गूदे के हिसाब से डालकर 5 मिनट तक पुनः पकाया जाता है फिर 0.4 ग्रा0 पोटेशियम मेटा बाइसल्फाइड व 0.2 ग्राम सोडियम बेंजोएट प्रतिकिलो ग्राम मिलाकर त्वरित प्रशीतन तकनीकी द्वारा तेजी से ठंडा किया जाता है। तत्पश्चात् एसेप्टिक वातावरण में विसंक्रमित पैकेजिंग सामग्री में पैक कर दिया जाता है।

जामुन, अंगूर व लीची आदि में औषधीय गुण होने तथा बड़े पैमाने पर विटामिन, कैल्शियम इत्यादि पौष्टिक गुण होने के कारण इनका रस निकाला जाता है। इस रस का उपयोग सामान्यतः दो प्रकार से किया जाता है। पहला, रस को सीधे–सीधे निकालकर परिरक्षक में मिलाकर सीलबंद कर बेचा जाता है। दूसरा, रस को जीवाणु से संक्रिया कराकर किण्वन द्वारा वसा के ऑक्सीकरण के फलस्वरूप मादक पेय उद्योग में उपयोग किया जाता है।

आम को लंबे समय तक संरक्षित करने के लिए पल्प तैयार किया जाता है जिसमें उच्च गुणवत्ता के परिपक्व आम को साफ कर गूदे को अलग कर फल प्रसंस्करण प्लांट में डाला जाता है जहां तापीय विधि से प्रसंस्कृत किया जाता है। फ्रोजन गूदे को आंशिक रूप से निर्जीवीकरण कर वायुरूद्ध रूप से सील किया जाता है। इस प्रक्रिया में फल का प्राकृतिक स्वाद, पौष्टिकता और सुगंध कायम रहती है। आम के गूदा/पल्प का उपयोग जैम, पेय पदार्थ, स्वादिष्ट आइसक्रीम, बेकरी फिलिंग तथा खाद्य पदार्थ उद्योग में किया जाता है। घरेलू–स्तर पर आम का अचार और आम पापड़ बनाकर अथवा आम को सूखाकर पुनः उपयोग में लाया जाता है। आंवले को खाद्य प्रसंस्करण विधा द्वारा घरेलू–स्तर पर मुरब्बा बनाकर, अचार बनाकर अथवा आंवले को सूखाकर उपयोग में लाया जाता है। जबकि व्यावसायिक–स्तर पर आंवले के विभिन्न उत्पाद जैसे–आंवले का जूस, कैंडी, च्यवनप्राश अथवा औषधि प्रयोग में उपयोग किया जाता है।

डेयरी प्रसंस्करण

दुग्ध उत्पादन में भारत का प्रथम स्थान है। दूध मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक समस्त प्रकार की पोषक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इसलिए दूध को संतुलित और समग्र आहार की संज्ञा दी गई है। दूध अतिशीघ्र खराब होने वाला पेय पदार्थ है, इसलिए दूध को संरक्षित करने के लिए पाश्चुरीकृत किया जाता है। दूध का पाश्चुरीकरण करने के लिए 63 डिग्री सेंटीग्रेड पर 30 मिनट तक गर्म किया जाता है। उसके पश्चात् उसे अचानक तेजी से ठंडा कर दिया जाता है जिससे समस्त जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। पाश्चुरीकृत दूध को नियंत्रित अवस्था में पैकिंग कर शीतश्रृंखला में उपभोक्ता तक भेजा जाता है। पाश्चुरीकरण से दूध की औसत आयु में वृद्धि हो जाती है। पाश्चुरीकृत दूध एवं दुग्ध उत्पाद को टेट्रा पैकिंग द्वारा महीनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। प्रसंस्करण तकनीकी द्वारा दूध की अवस्था, स्वरूप एवं प्रकृति में परिवर्तन कर दुग्ध उत्पाद जैसे पनीर, खोया, दही, छाछ, घी, मक्खन इत्यादि का निर्माण किया जाता है। दुग्ध उत्पाद का व्यावसायिक–स्तर पर निर्माण कर टेट्रा पैकिंग एवं वैक्यूम पैकिंग द्वारा दीर्घकाल तक सुरक्षित रखा जा सकता है। शीत ऋतु में दूध का उत्पादन अधिक होने तथा मांग कम होने के कारण दूध की कीमत में गिरावट हो जाती है। दूध का वाष्पीकरण कर शुष्क रूप में स्किम्ड मिल्क पाउडर का निर्माण किया जाता है। जिसका गर्मी के मौसम में जब दूध की कमी हो जाती है, तब प्रयोग किया जाता है। स्किम्ड मिल्क पाउडर में गरम पानी मिलाकर पुनः दूध बनाया जा सकता है।

मत्स्य प्रसंस्करण

जलीय जीव होने के कारण मछली पानी से बाहर निकलते ही मर जाती है तथा सामान्य तापक्रम पर सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा शीघ्रता से नष्ट कर दी जाती है। मछली की शेल्फलाइफ बढ़ाने और गुणवत्ता व पोषण मूल्य को बनाए रखने के लिए उसकी साफ–सफाई एवं छंटाई के उपरांत पूर्ण रूप से स्वस्थ मछली को डीप फ्रीज़िंग करने के साथ शीत श्रृंखला में परिवहन किया जाना चाहिए जिससे मछली को लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सके। इसके अतिरिक्त मछली को सुखाकर, नमक लगाकर, धूम्र प्रसंस्करण, फ्रीज ड्राइंग, माइक्रोवेव हीटिंग, आयनिंग विकिरण, तथा ऑक्सीजन के अभाव में वैक्यूम पैकिंग द्वारा संरक्षित किया जाता है। मछली की ताजगी बनाए रखने के लिए सर्वाधिक बेहतर तरीका बर्फ के साथ रखना है। मछली उत्पादों को पाश्चुराइज्ड या स्टरलाइज्ड कर सूक्ष्मजीवों एवं जीवाणु को पूरी तरह निष्क्रिय कर कैनिंग द्वारा सुरक्षित रखा जा सकता है। मछली का तेल बहुत ही फायदेमंद होता है। प्रसंस्करण विधा द्वारा मछली का तेल निकाल

कर लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

मांस एवं पोल्ट्री उत्पाद प्रसंस्करण

देश में मांस का उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता है। मांस एवं मांस उत्पाद के संक्रमण और खराब होने का खतरा बहुत अधिक होता है। इसलिए सदैव स्वस्थ पशु के ताजे मांस का सेवन करना उचित होता है। खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम तथा विनिमय 2011 की अनुसूची 4 के भाग 4 में सुरक्षित मीट एवं मीट उत्पाद संबंधी अपेक्षाएं सुनिश्चित की गई हैं। स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से जिनका पालन किया जाना आवश्यक होता है। स्वाभाविक मृत्यु, बीमार, गर्भावस्था या दुधारू पशु के मांस का सेवन उचित नहीं होता है। पशुवध से पूर्व तथा पश्चात् पशु चिकित्सक द्वारा निरीक्षणोपरांत स्वास्थ्य प्रमाणपत्र देने के पश्चात ही पशुवध किया जाना चाहिए। पशुवध में प्रयुक्त औजार स्टेनलेस स्टील के होने चाहिए और पशुवध से पूर्व इन्हें विसंक्रमित किया जाना आवश्यक है। पशु वध एवं मांस प्रसंस्करण में संलग्न कर्मचारियों का नियमित रुप से चिकित्सकीय परीक्षण एवं साफ–सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। पशुवध के अपशिष्ट एवं कचरे के निस्तारण की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। पशुवध के उपरांत मांस की गर्म पानी से अच्छी तरह धुलाई एवं साफ–सफाई के उपरांत डीप फ्रीजर में रखकर शीत श्रृंखला में परिवहन किया जाना चाहिए। जिससे प्रसंस्करण स्थल से उपभोक्ता तक पहुंचने में सूक्ष्म जीवाणुओं के संक्रमण से सुरक्षित रखा जा सके और गुणवत्तायुक्त पौष्टिक मांस का सेवन किया जा सके। मांस की कैनिंग और वैक्यूम पैकिंग कर निर्यात भी किया जा रहा है।

कैनिंग और पैकिंग

कृषि उत्पाद को प्रसंस्करण के उपरांत दीर्घकाल तक संरक्षित रखने के लिए सुरक्षित पैकिंग एवं कैनिंग की आवश्यकता पड़ती है जिससे प्रसंस्कृत उत्पाद की गुणवत्ता और पौष्टिकता बनी रहे। इसके लिए विसंक्रमित केन, पैकेट, जार में प्रसंस्कृत उत्पाद की प्रकृति के अनुरूप नियत ताप एवं दाब पर डिब्बाबंदी की जाती है। इसमें आवश्यकतानुरूप निर्वात् पैकिंग एवं टेट्रा पैकिंग की जाती है। कई बार पैकेट में ऑक्सीजन के संकेंद्रण को कम करके, कार्बन–डाई–ऑक्साइड का संकेंद्रण बढ़ाया जाता है। शुष्क बर्फ एवं नाइट्रोजन गैस की सांद्रता में हिपोक्सिया के माध्यम से भी प्रसंस्कृत उत्पाद को संरक्षित किया जाता है जिसमें जीवाणुओं के संक्रमण के लिए अनुकूल परिस्थितियों का अभाव होता है और खाद्य पदार्थ लंबे समय तक सुरक्षित रहता है। पैकिंग के उपरांत पैकेट पर खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम की अपेक्षाओं के अनुरुप एफएसएसएआई लाइसेंस नंबर, एगमार्क, ग्रीन संकेत, पैकिंग तिथि, बेस्टबिफोर, बैच नंबर, वजन, मूल्य, पोषकता संबंधी सूचना, उत्पाद के संघटक/अवयव, उत्पाद का संपूर्ण विवरण तथा निर्माता का नाम व पता इत्यादि लिखना अनिवार्य होता है।

कृषि प्रसंस्करण संवर्धन हेतु सरकारी योजना

कृषि प्रसंस्करण क्षेत्र में रोजगार की अपार संभावनाओं के मद्देनजर सरकार इसके तीव्र विकास के लिए अनेक प्रयास कर रही है। सरकार 'मेक इन इंडिया योजना' के अंतर्गत मेगा फूड पार्क की स्थापना, शीत–श्रृंखला का निर्माण, युवाओं को प्रशिक्षण देने के लिए कौशल विकास योजना, प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना के अंतर्गत सरकारी अनुदान, नाबार्ड और मुद्रा योजना के अंतर्गत आसान शर्तों एवं सस्ते ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध करा रही है।

मेगा फूड पार्क स्कीम के अंतर्गत किसानों, प्रसंस्करणकर्ताओं और खुदरा व्यापारियों को एक स्थान पर साथ लाकर कृषि उत्पादन को बाजार तंत्र से जोड़ने की व्यवस्था की गई है जिससे कृषि उत्पाद की बर्बादी को न्यूनतम, किसानों की आय में वृद्धि, कृषि उत्पाद का मूल्यवर्धन, ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर का सृजन किया जा सके। यहां एकत्रण/संग्रहण केंद्र, प्राथमिक प्रसंस्करण केंद्र, केंद्रीय प्रसंस्करण केंद्र, शीत श्रृंखला और लगभग 30–35 पूर्ण विकसित भूखंड होते हैं जिसमें उद्यमी खाद्य प्रसंस्करण यूनिट की स्थापना कर सकते हैं। मेगा फूड पार्क में कृषि उत्पाद की सफाई, ग्रेडिंग, छंटाई तथा पैकिंग सुविधा, शुष्क माल गोदाम, प्री–शीतलन चैंबर, पक्वन चैम्बर, रीफर वाहन, परीक्षण प्रयोगशाला, विशेषीकृत भंडारण, भाप रोगाणुनाशक यूनिट, प्रेशर वेंटिलेटर, परिवर्ती आद्रता भंडार, इत्यादि की सुविधा होती है। मेगा फूड पार्क स्कीम में परियोजना लागत का 50 प्रतिशत (भूमि लागत को छोड़कर) परंतु अधिकतम 50 करोड़ रुपये एकमुश्त पूंजी अनुदान की व्यवस्था की गई है। सरकार खाद्य प्रसंस्करण और खुदरा क्षेत्र में निवेश को गति प्रदान करने के लिए भारत में निर्मित अथवा उत्पादित खाद्य उत्पादों को ई–कॉमर्स के माध्यम से व्यापार में सौ प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति प्रदान करती है जिससे किसानों को बहुत लाभ प्राप्त होगा और खाद्य प्रसंस्करण अवसंरचना का सृजन होगा। मेगा फूड पार्क और उसमें स्थित कृषि प्रसंस्करण इकाइयों को रियायती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार ने नाबार्ड में दो हजार करोड़ रुपये का विशेष कोष स्थापित किया है। बागवानी एवं गैर–बागवानी उत्पाद की कटाई–उपरांत होने

वाली हानि को रोकने के लिए खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय ने 42 मेगा फूड पार्क और 236 एकीकृत शीत श्रृंखला की स्थापना के प्रस्ताव को मंजूर किया है।

ग्रामीण क्षेत्र में खाद्य प्रसंस्करण तकनीकी के प्रति जागरूकता एवं प्रशिक्षण का व्यापक अभाव है। सरकार ने युवाओं, किसानों एवं स्वयंसहायता समूहों को स्वरोजगार एवं प्रसंस्करण क्षेत्र में कैरियर विकास के लिए प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना का शुभारंभ किया है। खाद्य प्रसंस्करण की महत्ता को देखते हुए देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में खाद्य प्रसंस्करण संबंधी अनेक पाठ्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय खाद्य उद्योग क्षमता एवं कौशल पहल तथा खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र कौशल परिषद के सहयोग से फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण, खाद्य तेल, डेयरी उत्पाद, मांस एवं पोल्ट्री उत्पाद, मछली एवं समुद्री भोजन, ब्रेड एवं बेकरी उत्पाद, पेय पदार्थ आदि विभिन्न क्षेत्रों में मानक प्रशिक्षण देने का प्रयास कर रहा है। इसमें राज्य सरकार, स्वयंसेवी संस्था एवं निजी संस्थाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। मंत्रालय के प्रशासनिक नियंत्रण के दो संस्थान निफ्टेम और भारतीय फसल प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी संस्थान कौशल विकास और उद्यमशीलता के संबंध में कार्यक्रम चला रहे हैं। खाद्य प्रसंस्करण कौशल विकास में प्रसंस्करण स्थल का निर्माण, रखरखाव, साफ–सफाई तथा कृषि उत्पाद की छंटाई, सफाई, प्रसंस्कृत उत्पाद के निर्माण की विधि, कैनिंग और पैकिंग के बारे में सैद्धांतिक तथा प्रायोगिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है जिससे कुशल मानवशक्ति द्वारा सुरक्षित खाद्य प्रसंस्करण संपादित किया जा सके।

प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना

कृषि का आधुनिकीकरण कर, कृषि उपज की बर्बादी को कम करने के लिए भारत सरकार ने 14 वें वित्त आयोग के चक्र 2016–20 की अवधि के लिए 6000 करोड़ रुपये का आवंटन 'प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना' के लिए किया है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय द्वारा 'कृषि समुद्रीय प्रसंस्करण और कृषि प्रसंस्करण क्लस्टर के विकास हेतु योजनाः संपदा' (Scheme for Agromarine Processing and Development of Agro-Processing Clusters : SAMPADA) का पुनर्नामकरण 'किसान संपदा योजना' किया गया है। इस योजना का शुभारंभ प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 26 मई, 2017 को असम राज्य के धेमाजी जिले से किया। इस योजना का उद्देश्य खेत से लेकर खुदरा बिक्री केंद्र तक दक्ष आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन के साथ आधुनिक अवसंरचना का सृजन करना है। इसके अंतर्गत कृषि न्यूनता पूर्ण करना, खाद्य प्रसंस्करण में वृद्धि करना, खाद्य प्रसंस्करण का आधुनिकीकरण करना, प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों का निर्यात बढ़ाना, किसानों को बेहतर मूल्य दिलाना, किसानों की आय दुगुना करना, डेयरी व मत्स्य आदि कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्धन करना, ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर का सृजन करना, उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर सुरक्षित और सुविधाजनक प्रसंस्कृत खाद्य उपलब्धता सुनिश्चित करना इत्यादि महत्वपूर्ण पहल की जा रही हैं। इस योजना में लगभग 20 लाख किसान लाभान्वित होंगे और 5–6 लाख प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर सृजित होने की संभावना है। प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना के अंतर्गत मेगा फूड पार्क, शीत श्रृंखला, खाद्य प्रसंस्करण एवं परिरक्षण क्षमताओं का सृजन व विस्तार, कृषि प्रसंस्करण, क्लस्टर अवसंरचना, बैकवर्ड और फॉरवर्ड लिंकेज का सृजन, खाद्य संरक्षा एवं गुणवत्ता आश्वासन अवसंरचना विकास तथा मानव संसाधन विकास योजना का क्रियान्वयन किया जाएगा। किसान संपदा योजना में 31,400 करोड़ रुपये का निवेश होने का अनुमान है। वर्ष 2019–20 तक इस योजना से 104125 करोड़ रुपये मूल्य का 334 लाख मीट्रिक टन कृषि उत्पादन भी प्राप्त होगा। योजना का क्रियान्वयन खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय द्वारा किया जा रहा है। इस योजना के कार्यान्वयन के फलस्वरूप कुशल आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन से युक्त आधुनिक आधारभूत संरचना का विकास होगा जिससे खेत का उत्पाद सीधे रिटेल आउटलेट तक पहुंच सकेगा।

फल एवं सब्जियों के उत्पादन में भारत विश्व में दूसरा सबसे बडा उत्पादक देश है। इसके बावजूद फल एवं सब्जियों का प्रसंस्करण विकसित देशों की तुलना में बहुत ही कम होता है। जबकि प्रसंस्करण के क्षेत्र में रोजगार की जबर्दस्त संभावना है। प्रधानमंत्री ने 2022 तक देश के किसानों की आय को दोगुना करने का लक्ष्य रखा है। इसके लिए कृषि लागत मूल्य को कम करने के साथ ही कृषि प्रसंस्करण विधा द्वारा कृषि उत्पादों का मूल्यवर्धन किया जाना आवश्यक है। सरकार ने खाद्य प्रसंस्करण के महत्व को देखते हुए राष्ट्रीय–स्तर पर पहली बार स्वतंत्र रूप से खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय गठित किया है। यह मंत्रालय खाद्य प्रसंस्करण के विकास, विस्तार और प्रचार–प्रसार के अतिरिक्त किसानों को स्थानीय जरुरतों के मुताबिक प्रशिक्षण एवं अनुदान की व्यवस्था कर रहा है और खाद्य प्रसंस्कृत उत्पाद के विपणन हेतु व्यापक बाजार व्यवस्था प्रदान करने के लिए प्रयासरत है। किसान स्थानीय–स्तर पर उपलब्ध कृषि उत्पाद में पारिवारिक सहयोग से मूल्यवर्धन कर अच्छा मुनाफा कमा सकता है। इससे ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी की समस्या कम करने के अलावा देश और ग्रामीण क्षेत्र की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा जिससे देश की जीडीपी में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी में वृद्धि होगी। खाद्य प्रसंस्करण की सफलता के लिए गुणवत्तायुक्त प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं जैसे– गुणवत्ता नियंत्रण, पौष्टिकता नियंत्रण, मूल्य नियंत्रण पर ध्यान देना होगा। इसके अतिरिक्त प्रसंस्करण के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी विकास एवं उन्नयन और अनुसंधान इत्यादि पर बल देना होगा जिससे उत्पादन, गुणवत्ता, उपभोक्ता संरक्षा एवं जन–स्वास्थ्य में सुधार हो सके।

(लेखक खाद्य सुरक्षा एवं औषधि प्रशासन, हाथरस में अभिहित अधिकारी हैं।)

ई–मेल : dewashishupadhy@gmail.com

जैविक खेती की ओर बढ़ता रुझान

–डॉ. वीरेन्द्र कुमार

जैविक खेती तेजी से बढ़ता सेक्टर है। जैविक खेती उन क्षेत्रों के लिए सही विकल्प है, जहां कृषि रसायनों के प्रभाव से उपजाऊ ज़मीनें बंजर होती जा रही हैं। आजकल शहरों में तेजी से लोकप्रिय हो रहे आर्गेनिक अनाज, दालें, मसाले, सब्जियां, व फल जैविक खेती की संभावनाओं को और बढ़ावा दिला रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्गेनिक फार्मिंग को बढ़ावा देने के लिए नाबार्ड सहित कई सरकारी व गैर–सरकारी संस्थान कार्यरत हैं। सरकार पूर्वोत्तर राज्यों को जैविक खेती का केंद्र बनाने पर जोर दे रही है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि सिक्किम देश का पहला राज्य है, जहां पूर्णतया जैविक खेती की जा रही है।

सरकार ने वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का लक्ष्य रखा है। पिछले कई महीनों से कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय और कृषि वैज्ञानिक किसानों की आय बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। इस संबंध में जैविक खेती की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। जैविक खेती को बढ़ावा देने और कृषि रसायनों पर निर्भरता को कम करने के लिए परंपरागत कृषि विकास योजना की शुरुआत की गई है। परंपरागत कृषि विकास योजना के तहत सरकार मिट्टी की सुरक्षा और लोगों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए जैविक खेती को बढ़ावा दे रही है। इसे कलस्टर आधार पर प्रत्येक 50 एकड़ पर क्रियान्वित किया जा रहा है। इसका लक्ष्य तीन वर्षों की अवधि में 2015–16 से 2017–18 में 5 लाख एकड़ क्षेत्रफल को शामिल करते हुए 10,000 कलस्टर्स को बढ़ावा देना है। मृदा, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को सशक्त बनाए रखने के लिए जैविक खेती नितांत आवश्यक है। इससे न केवल उच्च गुणवत्तायुक्त, स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता बढ़ेगी, बल्कि खेती में उत्पादन लागत कम करने में भी मदद मिलेगी। साथ ही मृदा उर्वरता में सुधार के साथ–साथ किसानों की आमदनी में भी इजाफा होगा। उपरोक्त के अलावा इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए पारंपरिक संसाधनों का इस्तेमाल करके पर्यावरण अनुकूल कम लागत की प्रौद्योगिकियों को अपनाकर जैविक खेती को बढ़ावा देना है। अधिक आय प्राप्त करने के लिए जैविक उत्पादों को बाजार के साथ जोड़ा जाएगा। जैविक खेती से तैयार फसल उत्पाद सेहत के लिए काफी उपयोगी हैं। आज के परिदृश्य में जैविक खेती का महत्व इसलिए भी काफी बढ़ता जा रहा है क्योंकि किसान पारंपरिक खेती से ज्यादा से ज्यादा उत्पादन लेने के लिए रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशियों का अत्यधिक इस्तेमाल कर रहे हैं। अनेक अनुसंधानों में पाया गया है कि जैविक खेती से तैयार फसल उत्पादों में पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं जो हम सब की सेहत के लिए आवश्यक हैं। जैविक खेती तेजी से बढ़ता सेक्टर है। जैविक खेती उन क्षेत्रों के लिए सही विकल्प है, जहां कृषि रसायनों के प्रभाव से उपजाऊ ज़मीनें बंजर होती जा रही हैं। आजकल शहरों में तेजी से लोकप्रिय हो रहे आर्गेनिक अनाज, दालें, मसाले, सब्जियां, व फल जैविक खेती की संभावनाओं को और बढ़ावा दिला रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्गेनिक फार्मिंग को बढ़ावा देने के लिए नाबार्ड सहित कई सरकारी व गैर–सरकारी संस्थान कार्यरत हैं। सरकार पूर्वोत्तर राज्यों को जैविक खेती का केंद्र बनाने पर जोर दे रही है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि सिक्किम देश का पहला राज्य है, जहां पूर्णतया जैविक खेती की जा रही है। सिक्किम फूलों की धरती के नाम से भी जाना जाता है। लगभग 75 हजार हेक्टेयर

क्षेत्रफल वाले इस राज्य को राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम द्वारा निर्धारित दिशा–निर्देश के अनुसार प्रमाणित जैविक खेती में परिवर्तित कर दिया गया है। इस प्रकार यह पूर्णतः ताजा जैविक उत्पादन कर सकता है। जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए हाल ही में सिक्किम के गंगटोक शहर में राष्ट्रीय जैविक खेती अनुसंधान संस्थान की स्थापना की गई है।

जैविक खेती से तात्पर्य– जैविक खेती से तात्पर्य फसल उत्पादन की उस पद्धति से है जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों, व्याधिनाशियों, शाकनाशियों, पादप वृद्धि नियामकों और पशुओं के भोजन में किसी भी रसायन का प्रयोग नहीं किया जाता बल्कि उचित फसल चक्र, फसल अवशेष, पशुओं का गोबर व मलमूत्र, फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश, हरी खाद और अन्य जैविक तरीकों द्वारा भूमि की उपजाऊ शक्ति बनाए रखकर पौधों को पोषक तत्वों की प्राप्ति कराना एवं जैविक विधियों द्वारा कीट–पतंगों और खरपतवारों का नियंत्रण किया जाता है। जैविक खेती एक पर्यावरण अनुकूल कृषि प्रणाली है। इसमें खाद्यान्नों, फलों और सब्जियों की पैदावार के दौरान उनका आकार बढ़ाने या वक्त से पहले पकाने के लिए किसी प्रकार के रसायन या पादप नियामकों का प्रयोग भी नहीं किया जाता है। जैविक खेती का उद्देश्य रसायनमुक्त उत्पादों और लाभकारी जैविक सामग्री का प्रयोग करके मृदा स्वास्थ्य में सुधार और फसल उत्पादन को बढ़ावा देना है। इससे उच्च गुणवत्ता वाली फसलों के उत्पादन के लिए मृदा को स्वस्थ और पर्यावरण को प्रदूषणमुक्त बनाया जा सकता है।

मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों पर जैविक खेती व परंपरागत खेती का प्रभाव

(प्रतिशत में)

क्र. सं.	मृदा गुण	जैविक खेती	परंपरागत खेती
1.	पी.एच. या अम्लता	7.26	7.55
2.	विद्युत चालकता, (डेसी मी)	0.76	0.78
3.	कार्बनिक कार्बन	0.585	0.405
4.	नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हे.)	256	185
5.	फास्फोरस (कि.ग्रा./हे.)	50.5	28.5
6	पोटाश (कि.ग्रा./हे.)	459.5	426.5
7.	नाइट्रोजन (प्रतिशत में)	0.068	0.050
8.	कार्बनिक बायोमास (मि.ग्रा./कि. ग्रा. मिट्टी)	273	217
9.	एजोबैक्टर (1000/ग्राम मिट्टी)	11.7	0.8
10.	फास्फोबैक्टीरिया (100000./कि. ग्रा. मिट्टी)	8.8	3.2

जैविक खेती के प्रमुख अवयव

मिट्टी का चुनाव :– जैविक खेती की सफलता खेत की मिट्टी के प्रकार और उसके उपजाऊपन पर निर्भर करती है। यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि जिस खेत में आप जैविक खेती करना चाहते हैं, उसकी मिट्टी स्वस्थ व उपजाऊ होनी चाहिए। कुछ कीटनाशी वर्षों तक मिट्टी व पानी में मौजूद रहते हैं। ये फसल उत्पादों के माध्यम से नर्वस सिस्टम पर प्रतिकूल असर डाल सकते हैं जिनके कारण कैंसर जैसी गंभीर बीमारी भी हो सकती है। अतः जहां तक हो सके, कीटनाशियों से दूर रहना चाहिए। जैविक खेती शुरू करने से पहले ज़मीन को दो साल के लिए ऑर्गेनिक खाद्य पदार्थों के उपयुक्त नहीं माना जाता है। ताकि इस अवधि के दौरान फसलें मिट्टी में मौजूद सभी हानिकारक व विषैले तत्वों का अवशोषण कर सकें। इस तरह मिट्टी के अकार्बनिक रासायनिक तत्व पूरी तरह से समाप्त हो जाते हैं।

प्रजातियों का चुनाव :– जैविक खेती के लिए किसी फसल की कोई भी प्रजाति लगाई जा सकती है। परन्तु ऐसा अनुभव किया गया है कि देशी प्रजातियां जैविक खेती के लिए अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त होंगी। क्योंकि उनकी उर्वराशक्ति की मांग कम होती है। कुछ फसलें नाजुक व कीट और बीमारियों से जल्दी ग्रसित होती हैं। जहां तक हो सके, फसलों की रोगरोधी प्रजातियों का चुनाव करना चाहिए। प्रायः ऐसी फसलों के बीजों के पैकेट पर रोग–प्रतिरोधक लिखा होता है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि जैविक खेती में पराजीनी फसलों और उनकी प्रजातियों का प्रयोग नहीं किया जाता है।

जैविक खाद :– देश में प्रयोग की जाने वाली जैविक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट, मुर्गी खाद, पशुओं के नीचे का बिछावन, सूअर एवं भेड़–बकरियों की खाद तथा गोबर गैस खाद प्रमुख हैं। साधारणतया गोबर एवं कम्पोस्ट की एक टन खाद से औसतन 5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 2–5 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 5 कि.ग्रा. पोटाश मिल जाती है। परंतु दुर्भाग्यवश हम इनका 50 प्रतिशत ही प्रयोग कर पाते हैं। अधिकतर गोबर का प्रयोग किसान भाई उपलों के रूप में जलाने के लिए करते हैं। कुछ बायोडायनमिक खादें जैसे गोमूत्र, पशुओं के सींग की खाद, हड्डी की खाद का प्रयोग भी जैविक खेती में किया जा रहा है। फसल अवशेष, खरपतवारों, शाक सब्जियों की पत्तियों एवं पशुओं के गोबर को मिलाकर केंचुओं की सहायता से बनाए हुए खाद को वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। इस विधि द्वारा कार्बनिक अवशेषों को एक लंबे ढ़ेर में रखकर केंचुए आइसीनिया फीटीडा में छोड़ दिए जाते हैं। करीब 45 दिन में वर्मी कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाती है। जैविक खादें मृदा की गुणवत्ता में सुधार करने के साथ–साथ मुख्य, द्वितीय और सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता को भी बढ़ाते हैं। किसी फसल में जैविक खादों की दी गई मात्रा का केवल 30 प्रतिशत ही प्रथम वर्ष में उपयोग होता

है, शेष मात्रा अगली फसल द्वारा उपयोग की जाती है। जैविक खादों में ह्यूमिक पदार्थ होने के कारण मृदा में फास्फोरस की उपलब्धता भी बढ़ जाती है।

जैविक उर्वरक :– फसलों का अच्छा उत्पादन लेने में जैविक उर्वरकों का प्रयोग लाभदायक सिद्ध हो रहा है। इनमें राइजोबियम कल्चर, एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम, पी.एस.बी., अजोला, वैसीकुलर माइकोराइजा, नील–हरित शैवाल, बायो एक्टीवेटर आदि प्रमुख हैं। टिकाऊ खेती एवं मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए जैविक उर्वरकों का प्रयोग अति आवश्यक है। जैविक उर्वरक कम खर्च पर आसानी से उपलब्ध हैं तथा इनका प्रयोग भी बहुत सुगम है। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से विभिन्न फसलों की उपज में 10 से 25 प्रतिशत तक वृद्धि होती है। इनको जैविक खेती प्रबंधन का मुख्य अवयव माना जाता है। राइजोबियम व एजोटोबैक्टर वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन (78 प्रतिशत) को यौगिकीकरण द्वारा भूमि में जमा करके पौधों को उपलब्ध कराते हैं। पी.एस.बी. मृदा में अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित कर पौधों के लिए फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ाते हैं जिससे अगली फसलों को भी लाभ पहुंचता है। इसके अलावा जीवाणु उर्वरक पौधों की जड़ों के आसपास (राइजोस्फीयर) वृद्धि कारक हारमोंस उत्पन्न करते हैं जिससे पौधों की वृद्धि व विकास पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। जैविक उर्वरकों का चयन फसलों की किस्म के अनुसार ही करना चाहिए। जैविक उर्वरक प्रयोग करते समय पैकेट के ऊपर उत्पादन तिथि, उपयोग की अंतिम तिथि व संस्तुत फसल का नाम अवश्य देख लें। प्रयोग करते समय जैविक उर्वरकों को धूप व गर्म हवा से बचाकर रखना चाहिए।

हरी खादों का प्रयोग :– हरी खाद का प्रयोग करने से मृदा में कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश जैसे मुख्य तत्वों के अलावा सभी द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा व उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। हरी खाद के लिए मुख्यतः दलहनी फसलों का प्रयोग किया जाता है। इनमें सनई, ढैंचा, लोबिया, मूंग, ग्वार व सोयाबीन प्रमुख हैं। इन फसलों से हरी खाद बनाने में मात्र दो माह का समय लगता है। ये सभी फसलें अल्प–अवधि वाली व तेजी से बढ़ने वाली हैं। इन फसलों को फूल आने से पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल की मदद से या हैरो से मिट्टी में दबा दिया जाता है। हरी खाद की फसल को लगभग 10 दिन का समय सड़ने में लगता है। इसके बाद खेत को तैयार करके अगली फसल की बुवाई व रोपाई कर दी जाती है। हरी खादों के प्रयोग से खेत में 20–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन आसानी से सुरक्षित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त फास्फोरस, पोटाश व सूक्ष्म पोषक तत्वों का भंडार भी बढ़ाया जा सकता है। बहुउद्देशीय पेड़–पौधों जैसे बबूल, नीम व ग्लीरीसीडिया की पत्तियां एवं टहनियों का प्रयोग भी हरी खाद के रूप में किया जा सकता है। किसान भाइयों को तीन–चार साल में एक बार हरी खाद की फसलों को अवश्य उगाना चाहिए। इससे भूमि की उर्वराशक्ति तो बढ़ती ही है साथ ही मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार होता है।

दलहनी फसलों का प्रयोग :– वर्ष में एक बार दाल वाली फसल अवश्य उगानी चाहिए। भारत की आधे से अधिक आबादी के लिए दालें न केवल पौष्टिकता का आधार हैं, बल्कि प्रोटीन और आवश्यक अमीनो अम्लों की आपूर्ति का सबसे सस्ता स्रोत भी है। साथ ही भोजन में दालों की पर्याप्त मात्रा होने से प्रोटीन की कमी से होने वाले कुपोषण को भी रोका जा सकता है। दाल वाली फसलों की जड़ों में राइजोबियम जीवाणु की गांठें होती हैं, जो नाइट्रोजन स्थिरीकरण का काम करती हैं। गेहूं की कटाई के बाद मूंग की फसल लेनी चाहिए। मूंग की फलियों की दो तुड़ाई करने के बाद फसल की जुताई कर मिट्टी में मिला देना चाहिए। इसके प्रयोग से मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है जो अंततः सड़ने के बाद मृदा में मुख्य पोषक तत्वों के साथ–साथ द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की भी आपूर्ति करती है। इससे भूमि की उर्वराशक्ति तो बढ़ती ही है। साथ ही मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार होता है।

फसल अवशेष प्रबंधन :– साधारणतया किसान भाई फसल उत्पादन में फसल अवशेषों के योगदान को नजरअंदाज कर देते हैं। उत्तर–पश्चिम भारत में धान–गेहूं फसल चक्र के अंतर्गत फसल अवशेषों का प्रयोग आम बात है। कृषि में मशीनीकरण और बढ़ती उत्पादकता की वजह से फसल अवशेषों की अत्यधिक मात्रा उत्पादित होती जा रही है। फसल कटाई उपरांत दानें निकालने के बाद प्रायः किसान भाई फसल अवशेषों को जला देते हैं। पंजाब, हरियाणा और पश्चिम उत्तर प्रदेश के साथ–साथ देश के अन्य भागों में भी यह काफी प्रचलित है। फसल अवशेषों के जलाए जाने से निकलने वाले धुंए से पर्यावरण प्रदूषण तो बढ़ता ही है। साथ ही, धुंए की वजह से हृदय और फेफड़े से जुड़ी बीमारियां भी बढ़ती हैं। फसल अवशेषों का प्रयोग जैविक खेती में करके मृदा

में कार्बनिक कार्बन की मात्रा में सुधार किया जा सकता है। इसी प्रकार सब्जियों के फल तोड़ने के बाद इनके तने, पत्तियां और जड़ें खेत में रह जाती हैं जिनको जुताई करके मृदा में दबाने से खेत के उपजाऊपन में सुधार होता है। फसल अवशेषों में खलियां, पुआल, भूसा व फार्म अवशिष्ट प्रमुख हैं। यद्यपि फसल अवशेष का पोषक तत्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान है। परंतु अधिकांशतः फसल अवशेषों को खेत में जला दिया जाता है या खेत से बाहर फेंक दिया जाता है। फसल अवशेष पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने के साथ–साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक क्रियाओं पर भी अनुकूल प्रभाव डालते हैं।

खरपतवार नियंत्रण :– जहां तक हो सके, जैविक खेती में खरपतवारों का नियंत्रण निराई–गुड़ाई द्वारा ही करना चाहिए। इसके अलावा गर्मियों में गहरी जुताई, सूर्य की किरणों द्वारा सोलेराईजेशन, उचित फसल प्रबंधन व प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की पर्याप्त संख्या अपनाकर खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। साथ ही खरपतवारों को खाने वाले परजीवी व अन्य जीवाणुओं का प्रयोग किया जा सकता है। इसके अलावा, जैविक खेती में मुख्य फसल बोने से पहले खरपतवारों को उगने का अवसर देकर भी समाप्त किया जा सकता है। इस विधि में पहले खेत की सिंचाई कर देते हैं जिससे नमी पाकर अधिकांश खरपतवार उग आते हैं। फिर खेत में हल चलाकर इन खरपतवारों को नष्ट कर दिया जाता है। फसलों जैसे सब्जियों, फलों व कपास में ड्रिप सिंचाई तकनीक अपनाकर भी खरपतवारों के प्रकोप को कम किया जा सकता है। इस विधि में मुख्य फसल की जड़ों के आसपास पानी बूंद–बूंद करके आवश्यकता पड़ने पर ही दिया जाता है। कभी–कभी मुख्य फसल के साथ कम अवधि वाली फसलों को अन्तःफसल के रूप में उगाकर भी खरपतवारों की संख्या को कम किया जा सकता है।

कीट एवं रोग नियंत्रण :– जैविक खेती के अंतर्गत कीट व रोगों का नियंत्रण भी जैविक साधनों द्वारा ही किया जाना चाहिए। अलग–अलग सब्जियों, फलों व फूलों वाली फसलों में विभिन्न प्रकार के कीट–पतंगे पाए जाते हैं। ये कीट–पतंगे पत्तियों, कलियों, तना एवं फलों का रस चूसते हैं या उनको कुतर कर खा जाते हैं। इससे फसलों की गुणवत्ता खराब हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप किसानों को बाजार में पैदावार का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। इसके लिए नीम की निबोली के पाउडर का एक ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव किया जा सकता है। आजकल नीमगोल्ड, नीम का तेल, निमोलीन आदि नीम वृक्ष से तैयार जैविक कीटनाशी बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं। ट्राईकोग्रामा सब्जियों में कीड़ों की रोकथाम के लिए उत्तम पाया गया है। ट्राईकोग्रामा एक सूक्ष्म अंड परजीवी है जो तनाछेदक, फलीछेदक व पत्ती खाने वाले कीटों के अंडों पर आक्रमण करते हैं। ट्राईकोकार्ड पोस्टकार्ड की तरह ही एक कार्ड होता है जिस पर लगभग 20 हजार परजीवी ट्राईकोग्रामा पलते हैं। यह कार्ड कपास, गन्ना, धान जैसी फसलों में लगने वाले बेधक कीड़ों के नियंत्रण हेतु खेतों में लगाया जाता है। इसी प्रकार ट्राईकोडरमा एवं न्यूमैरिया भूमिजनित फफूंद वाली बीमारियों जैसे विल्ट, कोलर रोट व नर्सरी में पौधों का सड़ना की रोकथाम हेतु अच्छे सिद्ध हुए हैं। बीजोपचार के लिए 6 से 8 ग्राम चूर्ण प्रति कि.ग्रा. बीज व भूमि उपचार के लिए 2 से 3 कि.ग्रा. चूर्ण प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर व वर्मी कम्पोस्ट में मिलाकर डालने से विभिन्न भूमिजनित फफूंद रोगों की रोकथाम की जा सकती है।

जैविक खाद्य पदार्थों की प्रमुख विशेषताएं

जैविक खाद्य पदार्थों में आमतौर पर विषैले तत्व नहीं होते हैं क्योंकि इनमें कृषि रसायनों, कीटनाशियों, पादप हार्मोन और संरक्षित रसायनों जैसे नुकसान पहुंचाने वाले पदार्थों का प्रयोग नहीं किया जाता है जबकि सामान्य खाद्य पदार्थों में कृषि रसायनों का प्रयोग किया जाता है। ज्यादातर कीटनाशियों में ऑर्गेनो–फास्फोरस जैसे रसायनों का प्रयोग किया जाता है जिनसे कई तरह की बीमारियां होने का खतरा रहता है।

जैविक रूप से तैयार किए गए खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य के लिए काफी लाभप्रद हैं। सामान्य खाद्य पदार्थों की अपेक्षा इनमें अधिक पोषक तत्व पाए जाते हैं क्योंकि इन्हें जिस मिट्टी में उगाया जाता है, वह अधिक उपजाऊ होती है।

जैविक खाद्य पदार्थ शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। साथ ही इनको लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। जैविक खेती द्वारा उगाए जाने वाले फलों एवं सब्जियों में ज्यादा एंटी–ऑक्सिडेंटस होते हैं क्योंकि इनमें कीटनाशी अवशेष नहीं होते हैं।

आजकल लोगों में एंटी–बायोटिक को लेकर जागरूकता बढ़ रही है। इसका कारण यह है कि खाद्य पदार्थों को खराब होने से बचाने के लिए एंटी–बायोटिक दिए जाते हैं। जब हम ऐसे खाद्य–पदार्थों को खाते हैं, तो हमारा इम्यून सिस्टम कमजोर हो जाता है। जैविक रूप से उगाए खाद्य पदार्थों की वजह से हम इस नुकसान से बच सकते हैं। इसके अलावा, जैविक खाद्य पदार्थों में अधिक मात्रा में शुष्क पदार्थ पाए जाते हैं। साथ ही जैविक सब्जियों में नाइट्रेट की मात्रा 50 प्रतिशत कम होती है जो मानव स्वास्थ्य के लिए अच्छी है।

बाजार में प्रचलित कुछ ऑर्गेनिक ब्रांड : आजकल बाजार में कई ब्रांड के जैविक खाद्य पदार्थ उपलब्ध हैं जिनमें कुछ बड़े ऑर्गेनिक ब्रांडों के नामों में ऑर्गेनिक इंडिया, प्योर एंड श्योर, फैब इंडिया, नवधान्य, डाउन टू अर्थ, 24 मंत्रा, ग्रीन सेस, सात्विक, सन ऑर्गेनोफूडस, ऑर्गेनिका, सनराइज, ऑर्गेनिक तत्व इत्यादि शामिल हैं। उपरोक्त के अलावा भी बाजार में कई बड़े ब्रांड उपलब्ध हैं। इंटरनेट पर इनका नाम सर्च करके इनकी वेबसाइट से अपने नजदीकी स्टोर का पता लगा सकते हैं। organicfacts.net.in और

organicshop.in आदि साइट्स पर देश के जाने–माने ऑर्गेनिक फूड स्टाल्स की जानकारी मिल सकती है जिनका हम अपनी जरूरत के अनुसार चुनाव कर सकते हैं। देश के कई बड़े रिटेल स्टोर्स जैसे रिलायंस, हाइपर सिटी, बिग बाजार, स्पेंसर्स और ईजी डे पर भी जैविक खाद्य पदार्थ मिलते हैं।

जैविक खाद्य पदार्थों की पहचान : सामान्यतः बाजार में अनेक प्रकार के फल, सब्जियां, मसाले, दालें, खाद्य तेल और अनाज उपलब्ध हैं जो देखने में कुछ ज्यादा ही चमकदार व ताजा लगते हैं। परंतु इसका मतलब यह नहीं है कि ये सभी जैविक खाद्य पदार्थ हैं। ऑर्गेनिक खाद्य पदार्थ प्रमाणीकृत होते हैं इन पर प्रमाणीकृत लेबल लगे होते हैं। इनका स्वाद भी सामान्य खाद्य पदार्थों से थोड़ा अलग होता है। जैविक खेती से तैयार किए गए मसाले की गंध सामान्य मसालों की अपेक्षा तेज होती है। दूसरे, जैविक सब्जियां पकने में ज्यादा समय नहीं लेती हैं। जिन खाद्य पदार्थों पर नेचुरल या फार्म फ्रेश लिखा हो तो इनके बारे में यह जानना जरूरी है कि वे वास्तव में जैविक खाद्य पदार्थ हैं या नहीं। ये अपने आप में संरक्षित रसायन–मुक्त हो सकते हैं। परंतु हो सकता है कि इनमें कीटनाशियों का प्रयोग किया गया हो या वे आनुवांशिक रूपान्तरित फसल से प्राप्त किए गए हो।

जैविक उत्पादो का निर्यात : जैविक खेती से पैदा होने वाले फसल उत्पादों का निर्यात यूरोपियन संघ, अमेरिका, कनाडा, स्विट्जरलैंड, कोरिया, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका और अरब देशों की मंडियों में हो रहा है। इन जैविक उत्पादों की प्रमाणिकता का होना जरूरी है। जैविक खाद्य पदार्थो की प्रमाणिकता किसी भी अच्छी प्रमाणिक एजेंसी से करवाने पर निर्यात में कोई बाधा नहीं है। जैविक खेती द्वारा उगाए गए बासमती धान आदि के निर्यात की अपार संभावना है। इनका मूल्य भी घरेलू मंडी के मूल्य की अपेक्षा कई गुना ज्यादा मिलता है। अंतर्राष्ट्रीय जैविक कृषि गतिविधि संघ (आई.एफ.ओ.ए.एम.) प्रमाणिक एजेंसी के मार्क से अमेरिका और यूरोप की मंडियों में व्यापार में कोई बाधा नहीं है। हर एक देश के लिए कोई एक या दो प्रमाणिक एजेंसी कार्य करती हैं। कौन–सी प्रमाणिक एजेंसी किस देश के लिए प्रमाणिकता देकर मार्क लगाती है। इसकी अधिक जानकारी एपीडा, एन.सी.यू.आई. बिल्डिंग, खेलगांव, नई दिल्ली–110016, फोन न.26513504, 26514572 और 26534180 से प्राप्त की जा सकती है।

जैविक खेती व किसानों की आय : ऑर्गेनिक फूड का प्रचलन दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है। जैविक खाद्य पदार्थ अपने उत्कृष्ट पौष्टिक गुणों के कारण अंतर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत लोकप्रिय हैं। सेहत का सीधा संबंध खानपान से है। स्वस्थ रहने के लिए लोग अब तेजी से जैविक खाद्य पदार्थ अपना रहे हैं। इन्हें सेहत के हिसाब से काफी अच्छा माना जाता है। शहरी क्षेत्रों में जैविक उत्पादों की बिक्री की अधिक संभावना है। साथ ही जैविक उत्पादों के निर्यात को बढ़ाकर किसानों की आय को बढ़ाया जा सकता है। जैविक खेती में फसलों का उचित प्रकार से प्रबंधन किया जाए तो अच्छी आमदनी प्राप्त हो सकती है। आजकल जैविक खाद्य पदार्थों में मौसमी फल व सब्जियों की ज्यादा मांग रहती है। साथ ही चावल, गेंहू, शहद, ग्रीन टी की मांग भी दिनोंदिन बढ़ रही है। जैविक खाद्य पदार्थों की कीमत सामान्य खाद्य पदार्थों की अपेक्षा 40 से 50 प्रतिशत तक ज्यादा रहती है। सामान्यतः जैविक खाद्यपदार्थों की पैदावार सामान्य रूप से उगाए गए खाद्यपदार्थों की अपेक्षा कम है जबकि मांग अधिक है। इसके अलावा अधिकांश किसान जैविक खेती की बजाय पारंपरिक तरीके से ही खेती करते है। वर्षों तक कीटनाशीयुक्त खाद पदार्थों के खाने से सेहत खराब होने के सामने जैविक खाद पदार्थों की कीमत ज्यादा नहीं है।

जैविक खेती में प्रमाणीकरण : प्रमाणीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रमाणीकरण एजेंसी द्वारा एक लिखित आश्वासन दिया जाता है कि एक स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित उत्पादन अथवा प्रसंस्करण प्रणाली का विधिवत ढंग से मूल्यांकन किया गया है। विभिन्न राज्यों में अनेक संस्थाएं जैविक प्रमाणीकरण का कार्य कर रही हैं। यद्यपि देश के कई क्षेत्रों के किसान अपनी पैदावार की गुणवत्ता को प्रमाणित कराने के लिए ऐसी मान्यता प्राप्त संस्थाओं से अनभिज्ञ हैं जिनके माध्यम से पैदावार को उपभोक्ता तक पहुंचा सकें या उसका निर्यात कर सकें। इनकी सूची एवं जानकारी के लिए कृषि एवं प्रसंस्करित खाद उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) नई दिल्ली www.apeda.gov.in और राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र, http:/ncof.dacnet.nic.in की वेबसाइट देखें।

निष्कर्ष : आज देश के कई प्रदेशों में फलों व सब्जियों की जैविक खेती का भविष्य उज्जवल नजर आता है। ऑर्गेनिक फूड़ को लेकर लोगों में काफी जागरूकता बढ़ी है। ऑर्गेनिक फल व सब्जियां बाजार में मिलने वाले अन्य सामानों की अपेक्षा थोड़े अधिक दाम पर मिलते हैं। फिर भी सेहत की भलाई के लिए लोग इन्हें खरीद रहे हैं। साथ ही, जैविक खाद्य पदार्थ विदेशी मुद्रा अर्जित करने का भी मुख्य कृषि उत्पाद है। जैविक खेती के बारे में अधिक जानकारी व उत्पादों की बिक्री के लिए सस्य विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली व राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र, सेक्टर 19, हापुड़ रोड, कमला नेहरू नगर, गाजियाबाद, उ.प्र.–201002, फोन न. 120–2764906 व 2764212 से संपर्क किया जा सकता है। इसके अलावा, किसान भाई राष्ट्रीय–स्तर पर एपीडा, नई दिल्ली, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली तथा राज्य–स्तर पर जैविक खेती को प्रोत्साहन देने के लिए खाद्य एवं प्रसंस्करण विभाग, उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभागों से जानकारी प्राप्त की जा सकती है। पूसा संस्थान, नई दिल्ली में 9–11 मार्च, 2018 को आयोजित किसान मेले में भी जैविक खेती के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(लेखक जल प्रौद्योगिकी केंद्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कार्यरत हैं।)

ई–मेल : v.kumardhama@gmail.com

भारत में दलहन उत्पादन बढ़ाने की रणनीति

–जे.एस. संधू
–एस.के. चतुर्वेदी

पिछली तीन पंचवर्षीय योजना अवधियों (2002 से 2017) के दौरान दलहन उत्पादकता और उत्पादन में व्यापक प्रगति हुई है। सामान्य जनता और विशेष रूप से ऐसे निर्धनों के मामले में जो भोजन में अन्य स्रोतों से प्रोटीन प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं, दलहन को 'स्वास्थ्यवर्धक भोजन' (हेल्थ फूड) या 'पौष्टिक तत्वों से समृद्ध भोजन' (न्यूट्री–रिच फूड) के रूप में लोकप्रिय करने की संभावनाएं हैं, जिससे प्रोटीन की कमी से होने वाले कुपोषण की स्थिति में सुधार लाया जा सकता है। अधिक पैदावार देने वाली किस्मों की उपलब्धता, उनके गुणवत्तापूर्ण बीज, तदनुरूप फसल उगाने की प्रौद्योगिकियां और दलहन के प्रोत्साहन के लिए वर्तमान में अनुकूल नीतिगत वातावरण आदि के चलते राष्ट्र दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है।

दालें भारतीय उपमहाद्वीप में शाकाहारी भोजन का महत्वपूर्ण घटक हैं और मृदा सुधार तथा कृषि उत्पादन को टिकाऊ बनाने में उनकी भूमिका सर्वविदित एवं प्रमाणित है। भारत में करीब 2.5 से 2.6 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में एक दर्जन से अधिक दलहन फसलें उगाई जाती हैं, जिनसे हर वर्ष 1.8 से 1.9 करोड़ मीट्रिक टन दालों की पैदावार होती है। भारत दुनिया में दलहन का सबसे बड़ा उत्पादक, आयातक (50–60 लाख टन) और उपभोक्ता (250–260 लाख टन) है। निरंतर अनुसंधान और विकास प्रयासों से पिछली तीन पंचवर्षीय योजना अवधियों (2002 से 2017) के दौरान दलहन उत्पादकता और उत्पादन में व्यापक प्रगति हुई है। सामान्य जनता और विशेष रूप से ऐसे निर्धनों के मामले में जो भोजन में अन्य स्रोतों से प्रोटीन प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं, दलहन को 'स्वास्थ्यवर्धक भोजन' (हेल्थ फूड) या 'पौष्टिक तत्वों से समृद्ध भोजन' (न्यूट्री–रिच फूड) के रूप में लोकप्रिय करने की संभावनाएं हैं, जिससे प्रोटीन की कमी से होने वाले कुपोषण की स्थिति में सुधार लाया जा सकता है। अधिक पैदावार देने वाली किस्मों की उपलब्धता, उनके गुणवत्तापूर्ण बीज, तदनुरूप फसल उगाने की प्रौद्योगिकियां और दलहन के प्रोत्साहन के लिए वर्तमान में अनुकूल नीतिगत वातावरण आदि के चलते राष्ट्र दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है।

भूमिका : वर्ष 2015–16 के दौरान दालों के आयात में बढ़ोतरी के चलते 57.97 लाख टन दालें आयात की गईं और 2016–17 के दौरान भी आयात में वृद्धि का सिलसिला जारी रहा, जिसमें 66 लाख टन दालों का आयात किया गया। दलहन के आयात की इस स्थिति ने भारत सरकार को सचेत किया कि योजनाबद्ध कार्यनीतियां लागू की जाएं और सभी संबद्ध पक्षों को कारगर ढंग से काम करने के लिए एकजुट किया जाए। वर्ष 2016–17 में भारत दालों की मात्र 66 लाख मीट्रिक टन अतिरिक्त पैदावार कर सका और इसी वर्ष के दौरान विभिन्न एजेंसियों द्वारा लगभग इतनी ही मात्रा में दालों (66 लाख टन) का आयात किया गया। यही वजह रही कि घरेलू बाजार में काबुली चने और कुछ हद तक मसूर को छोड़कर लगभग सभी दालों के दामों में भारी कमी आई। दलहन के मुद्दे पर चूंकि भारत सरकार का अनुसंधान और विकास तंत्र सतर्क था; अतः बिना समय गंवाए किसानों से सीधे दालों की खरीद

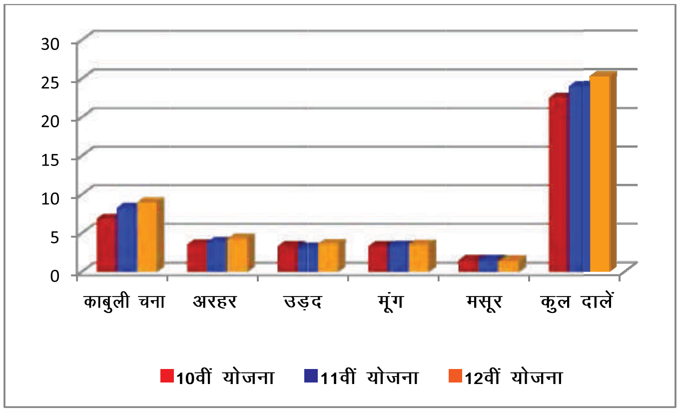

आकृति–1क : पिछली तीन पंचवर्षीय योजना अवधियों के दौरान दलहन का क्षेत्र (मिलियन हेक्टेयर)

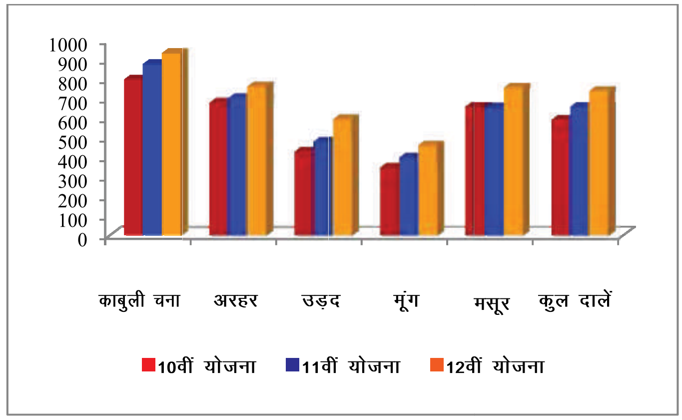

आकृति–1ग : पिछली तीन योजना अवधियों के दौरान दालों की उत्पादकता (किग्रा/हेक्टेयर)

कार्यक्रम तत्काल लागू किया गया। परिणामस्वरूप सरकार ने मूल्य स्थिरीकरण निधि का इस्तेमाल करते हुए सुरक्षित भंडार बनाने हेतु करीब 20 लाख टन दालों की खरीद की। भारत सरकार की इस पहल और अन्य कार्यनीतियों की बदौलत किसानों को दालों की अधिक खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इन उपायों में किसानों को उच्च पैदावार देने वाले गुणवत्तापूर्ण बीज समय पर उपलब्ध कराना, नई और अधिक पैदावार देने वाली किस्मों का बड़े पैमाने पर प्रदर्शन करना तथा उनके अनुकूल उत्पादन और संरक्षण प्रौद्योगिकी किसानों को उपलब्ध कराना शामिल है। इसका स्पष्ट परिणाम इस रूप में दिखाई दिया कि चालू वर्ष में 2016–17 की तुलना में रबी मौसम के दौरान दलहन की खेती के क्षेत्र में मामूली बढ़ोतरी दर्ज हुई, जो भारत में दालों की खेती के इतिहास में अब तक सर्वाधिक है। वर्ष 2017–18 के दौरान दालों की खेती के क्षेत्र में वृद्धि और काबुली चने तथा मसूर के उत्पादन में बढ़ोतरी की संभावना को देखते हुए, भारत सरकार ने काबुली चने और मसूर के आयात पर 30 प्रतिशत शुल्क लगा दिया और पीली दाल पर आयात शुल्क 50 प्रतिशत ही रखा, ताकि भारतीय किसानों के हितों की रक्षा की जा सके और उन्हें घरेलू–स्तर पर अधिक दालें पैदा करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। भारत न केवल पैदावार के स्तर को बनाए रखने में सक्षम है बल्कि दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करने में भी सक्षम है। चालू रबी मौसम में रिकार्ड बुआई (1.691 करोड़ हेक्टेयर) को देखते हुए 2017–18 के दौरान अधिक मात्रा में दालों की पैदावार की संभावना है और उम्मीद है कि भारत दलहन के उत्पादन में लगभग आत्मनिर्भर हो जाएगा।

दलहन के क्षेत्र, पैदावार और उत्पादकता की प्रवृत्तियां

भारतीय किसान विभिन्न प्रकार की खाद्य फसलों की खेती करता है। वर्ष 2016–17 के दौरान अनाज की पैदावार 27.568 करोड़ टन हुई, जो 2013–14 के पिछले रिकार्ड उत्पादन (26.504 करोड़ टन) से 1.064 करोड़ टन (4.01 प्रतिशत) अधिक है। भारत के दलहन उत्पादन ने भी 2.295 करोड़ टन पैदावार का रिकार्ड कायम किया और पिछले 1.978 मीट्रिक टन के रिकार्ड (2013–14) को तोड़ दिया। दालों में कुल दलहन उत्पादन में काबुली चने का योगदान 40.65 प्रतिशत से अधिक था, उसके बाद अरहर (20.82 प्रतिशत) और उड़द (12.20 प्रतिशत) का स्थान था। पिछली तीन योजना अवधियों (2002–17) के दौरान दालों की खेती के क्षेत्र, पैदावार और उत्पादकता में निरंतर बढ़ोतरी हुई है (आकृति–1क–ग और आकृति–2 देखें)। हालांकि पिछले पांच वर्षों (2012–17) के दौरान दालों की खेती के क्षेत्र और उत्पादन में उतार–चढ़ाव परिलक्षित हुए हैं (आकृति–3)।

वर्ष 2016–17 के दौरान दालों के रिकार्ड उत्पादन (2.295

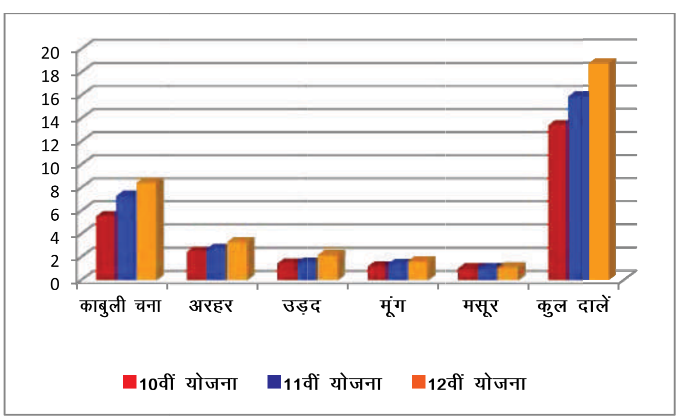

आकृति–1ख : पिछली तीन योजना अवधियों के दौरान दालों की पैदावार (मिलियन टन)

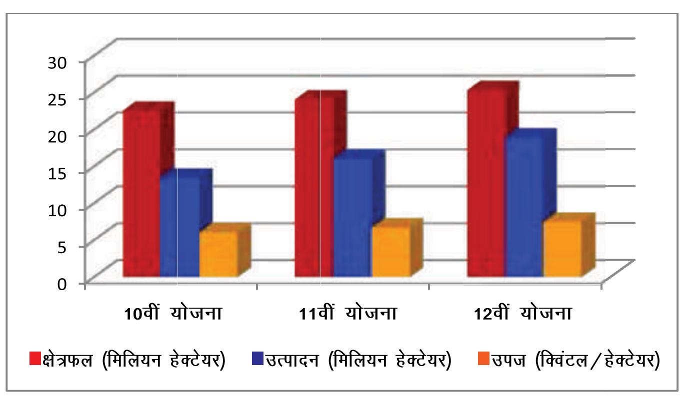

आकृति–2 : पिछली तीन पंचवर्षीय योजना अवधियों के दौरान दालों का खेती क्षेत्र, पैदावार और उत्पादकता

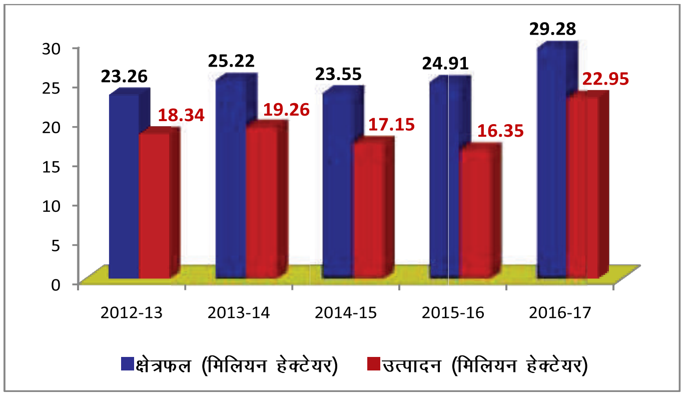

आकृति–3 : पिछले 5 वर्षों के दौरान दालों का कुल क्षेत्र और पैदावार

करोड़ टन) का श्रेय पिछले वर्ष दालों के ऊंचे दामों, बेहतर कृषि वैज्ञानिक पद्धतियों और नई प्रजातियों के गुणवत्तापूर्ण बीजों, फास्फोरिक उर्वरक तथा कृषि रसायनों के इस्तेमाल, अनुकूल मौसम, न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के संदर्भ में नीतिगत समर्थन, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई) और प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई) आदि को जाता है।

भारत में मध्यप्रदेश दलहन का सबसे बड़ा उत्पादक है। उसके बाद राजस्थान, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और ओड़िशा का स्थान है। इन सात राज्यों का दलहन की खेती में सर्वाधिक 80 प्रतिशत योगदान है और 2015–16 के दौरान दालों के कुल उत्पादन में इन राज्यों का योगदान करीब 78 प्रतिशत था। तमिलनाडु, झारखंड, छत्तीसगढ़, ओड़िशा, बिहार, पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में दलहन की खेती के विस्तार की प्रचुर संभावनाएं हैं।

दालों की मांग और आपूर्ति

भारत दालों का सबसे बड़ा उपभोक्ता है और अधिकाधिक व्यक्तियों के स्वास्थ्य के प्रति सजग होते जाने को देखते हुए देश में दालों की मांग बढ़ने की संभावना है। भारत सरकार दलहन के माध्यम से पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के अपने दायित्व के प्रति पूरी तरह सजग है। हाल ही में सरकार ने देश में दालों के उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक कार्यक्रम शुरू किए हैं, ताकि दलहन के क्षेत्र में अत्यंत आवश्यक आत्मनिर्भरता हासिल की जा सके और बहुमूल्य विदेशी मुद्रा बचाई जा सके। अनुमानित मांग से पता चलता है कि भारत को 2020 तक दलहन की मांग पूरी करने के लिए 2.650 करोड़ टन दालों की आवश्यकता होगी, जो बाद के वर्षों में और बढ़ सकती है। इससे मानव उपभोग के लिए प्रति व्यक्ति 38 ग्राम प्रतिदिन प्रोटीन उपलब्धता का वर्तमान स्तर बनाए रखने में मदद मिलेगी तथा बीज और अन्य उपयोगों के लिए दलहन की मांग पूरी की जा सकेगी। इसके अतिरिक्त यह अनुमान लगाया गया है कि 2020 तक दालों की मांग 2.65 करोड़ टन, 2030 तक 3.2 करोड़ टन और 2050 तक 3.9 करोड़ टन पर पहुंच जाएगी। यदि दालों की खेती के क्षेत्र के वर्तमान स्तर को बनाए रखा गया और उत्पादकता में न्यूतनम वृद्धि हासिल की गई, जो कठिन कार्य नहीं है, तो भारत निकट भविष्य में दलहन की पैदावार के मामले में आत्मनिर्भरता हासिल कर सकता है। परंतु नई प्रजातियों के सृजन, समेकित दलहन पैदावार और संरक्षण प्रौद्योगिकियों, त्वरित गुणवत्ता बीजों का उत्पादन, किसान–केंद्रित नीतियों, प्रशिक्षण, प्रौद्योगिकी नेटवर्क के सक्षम हस्तांतरण, बाजार, लाभदायक न्यूनतम समर्थन मूल्य और खरीद, दालों को मध्याह्न भोजन और सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा अन्य सामाजिक कार्यक्रमों में शामिल करने आदि के लिए बेहतर निवेश की आवश्यकता पड़ेगी। इससे दालों के उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करने के लिए अपेक्षित वार्षिक वृद्धि दर बनाए रखी जा सकती है।

अनुसंधान नेटवर्क और बुनियादी ढांचा

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) के तत्वावधान में कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग (डीएआरई), के अंतर्गत विभिन्न राज्यों/केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालयों में स्थित

दलहन फसलों को दुष्प्रभावित करने वाले प्रमुख जैविक और अजैविक दबाव

फसल	जैविक बीमारियां	रोगाणु/कीट	अजैविक दबाव
काबुली चना	फुसारियम विल्ट, ड्राइ रूट रॉट, वैट रूट रॉट्स, कलर रॉट, अस्कोचिता ब्लाइट, बोट्रिटिस, ग्रे मोल्ड	ग्राम पॉड बोरर, कटवार्म, टर्माइट	समय–समय पर सूखा और उच्च तापमान (पछेती फसल बुआई), शीत (समय पर बोई गई फसल में प्रजनन स्तर पर और पछेती फसलों में वनस्पति स्तर पर), और लवणता
मसूर	फुसारियम विल्ट, ड्राइ रूट रॉट, कलर रॉट और रस्ट,	अल्फीडिस, पोड बोरर	समय–समय पर सूखा (वर्षा पर निर्भर फसल), समय–समय पर गर्मी (पछेती फसल बुआई), मृदा लवणता/ अमलता
फील्ड पी	पाउडरी मिल्डयू, रस्ट एंड रूट रॉट्स	स्टेम फ्लाई	फ्रास्ट (सभी स्तरों पर), उच्च तापमान (पछेती फसल बुआई)
राजमा	येलो मोजैइक, लीफ कर्ल, एन्थ्राक्नोज़	थ्रिप्स	रबी मौसम के दौरान फ्रोस्ट और कम तापमान
लेथिरस	पाउडरी मिल्डयू और रस्ट	स्टेम फ्लाई	सूखा और मृदा अमलता
अरहर	फुसारियम विल्ट, स्टेरिलिटी मोजैइक रोग, फाइटोफथोरा, स्टेम ब्लाइट	हेलिकोवर्पा पॉड बोरर, पॉड फ्लाई, दीमक	स्मय–समय पर सूखा और गर्मी, फ्रास्ट और प्रजनन–स्तर पर शीत (उत्तरी और मध्यवर्ती भारत में) और जलभराव
मूंग और उड़द	येलो मोजैइक, सेरोकोस्पोरा लीफ स्पॉट, एन्थ्राक्नोज लीफ क्रिंकल, मैक्रोफोविनिया ब्लाइट, वेब ब्लाइट	थ्रिप्स, बिहार हेयरी कैटरपिलर	सूखा, गर्मी और फसल कटाई पूर्व, सतत वर्षा के कारण अंकुरण, उड़द बीन में गर्मी का दबाव अधिक महत्वपूर्ण है।

अखिल भारतीय अनुसंधान परियोजना (एआईसीआरपीज़) केंद्रों का अनुसंधान नेटवर्क (http://www.iipr.res.in) दलहन फसलों में सुधार के लिए काम कर रहा है। देश के विभिन्न भागों में दालों की खेती के क्षेत्र में बदलाव और क्षेत्रीय महत्व पर विचार करते हुए, आईसीएआर–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान (आईआईपीआर) ने दलहन फसलों के बारे में गहन अनुसंधान के लिए पिछले दशक में दो क्षेत्रीय केंद्र स्थापित किए। ये हैं– क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, भोपाल और क्षेत्रीय केंद्र एवं बेमौसम (आफ सीजन) नर्सरी, धारवाड़। हाल ही में आईसीएआर ने आईआईपीआर के दो और क्षेत्रीय केंद्रों की स्थापना का अनुमोदन किया, जिनमें से एक पश्चिमी भारत (बीकानेर) और दूसरा पूर्वी भारत (भुवनेश्वर) में खोला जाएगा। इसके अतिरिक्त आईसीएआर के अन्य संस्थान भी दलहन अनुसंधान में योगदान कर रहे हैं। अनुसंधान और विकास में निजी क्षेत्र का योगदान भी अपेक्षित है, ताकि प्रौद्योगिकी और गुणवत्तापूर्ण बीजों की पैदावार संबंधी अंतराल दूर किए जा सकें।

प्रमुख अनुसंधान उपलब्धियां

एकजुट प्रयासों की बदौलत विभिन्न दालों की 510 से अधिक उच्च पैदावार देने वाली किस्मों का विकास किया गया, जो उपयुक्त समेकित फसल प्रबंधन प्रौद्योगिकियों के साथ प्रमुख जैविक और अजैविक दबावों के प्रति रक्षित हैं। इन प्रौद्योगिकियों में दलहन उत्पादन में महत्वपूर्ण सुधार लाने की क्षमता है, जैसाकि अग्रणी प्रदर्शनों से सिद्ध हुआ है।

- **बेहतर कृषि वैज्ञानिक पद्धतियां :** परिष्कृत बीजों के अलावा समेकित फसल उत्पादन प्रौद्योगिकियां भी निर्धारित भूमिका अदा करती हैं। अतीत में विकसित की गई अनेक फसल उत्पादन प्रौद्योगिकियों को नई प्रौद्योगिकियों के साथ एकीकृत करने की आवश्यकता है, ताकि दलहन खेती के प्रति यूनिट क्षेत्र से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके। इन प्रौद्योगिकियों में समेकित पोषक तत्व प्रबंधन, शुष्क बुआई के बाद हल्की सिंचाई सहित सूक्ष्म–सिंचाई, बीज रक्षितता, कारगर खरपतवार प्रबंधन के लिए अंकुरण पूर्ववर्ती और परवर्ती तृणनाशकों का इस्तेमाल आदि शामिल हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियां भली–भांति स्वीकृत की गई हैं, जिनमें रिज प्लांटिंग यानी मेड़ पर खेती और सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग शामिल है।

दालों के खेतों का यंत्रीकरण

पॉवर पंप स्प्रेयर | संगोष्ठी | उन्नत बैड प्लांटर

स्पायरल ग्रेडर | रोटावेटर | उन्नत बैड रोपण

- **समेकित रोग प्रबंधन (आईपीएम) :** आईपीएम यानी समेकित रोग प्रबंधन पद्धति अपनाते हुए बीमारियों का प्रबंधन करना, किसी खास क्षेत्र में प्रचलित बीमारियों से होने वाले नुकसान में कमी लाने का सर्वाधिक किफायती तरीका है। मृदा जन्य रोगाणुओं से होने वाली बीमारियों का असर न्यूनतम करने के लिए सबसे कारगर नीति मेजबान पौधे की प्रतिरोधी क्षमता के दोहन और रोग प्रतिरोधी किस्मों के विकास में निहित है, क्योंकि फसल विकास की विभिन्न अवस्थाओं में कवकनाशियों के इस्तेमाल के जरिए मृदा जन्य बीमारियों (विल्ट और रूट रोट्स) पर नियंत्रण न तो किफायती है और न ही खेतों में किसानों के लिए व्यवहार्य है।
- **समेकित कीट/रोग प्रबंधन :** ग्राम पोड बोरर (हेलिकोवेर्पा आर्मीगेरा हब्नर) सबसे महत्वपूर्ण और खतरनाक कीट है, जो काबुली चने और अरहर की फसलों को संक्रमित करता है। विकसित किए गए आईपीएम माड्यूल हेलिकोवेर्पा आर्मीगेरा से होने वाले नुकसान को कम से कम करने में मददगार साबित हुए हैं।
- **प्रसंस्करण और लघु पैमाने पर मिलिंग :** अनाज के रूप में दालों के भंडारण के दौरान भारी क्षति होती है। दलहन को दाल में रूपांतरित करने अथवा मूल्य संवर्धन के बाद उसका भंडारण अपेक्षाकृत सुरक्षित होता है। आईसीएआर–आईआईपीआर, कानपुर; सीएफटीआरआई, मैसूर, आईसीएआर–सीआईएई और कुछ प्राइवेट कंपनियों ने छोटे पैमाने पर दलहन प्रसंस्करण मशीनें विकसित की हैं, जो सभी प्रकार के दलहन, अनाज से दाल बनाने में सक्षम हैं। सामुदायिक स्तर पर दालों के प्रसंस्करण और मिलिंग के लिए सक्षम मशीनों के विकास हेतु अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

जैव प्रौद्योगिकी विषयक उपाय

- **प्रजातियां उगाने में जेनोमिक ससाधनों का उपयोग :** मोलिक्यूलर मार्कर टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल रोजमर्रा फसल उगाई कार्यक्रमों में किया जाना चाहिए, जो जीन्स के अंतरण और अन्वेषण में मदद करती है। यह तकनीक किसी प्रजाति के जारी होने में लगने वाले समय में कमी ला सकती है। देसी और काबुली चने तथा अरहर की जेनोम श्रृंखलाओं संबंधी जानकारी सार्वजनिक क्षेत्र में उपलब्ध हैं अतः उसका इस्तेमाल लक्षण संबंधी चिन्हों के विकास के लिए किया जा सकता है। काबुली चने और अरहर के जेनोम को डी–कोडिड यानी कूटमुक्त किया गया है और उम्मीद की जा रही है कि एक वर्ष के भीतर मूंगबीन और मसूर की जेनोम श्रृंखला के प्रारूप का पता चल जाएगा। इससे अधिक यथार्थ और लक्षित

प्रौद्योगिकी के विकास में मदद मिलेगी।

- **मुद्दे और कार्यनीतियां :** दालों की कम उत्पादकता से संबंधित अनेक मुद्दों को अनुसंधान विकास और नीतिगत मुद्दों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। दालें अधिकतर वर्षा पर निर्भर और अवशेष नमी वाले क्षेत्रों में उगाई जाती हैं और यही दलहन की कम पैदावार के प्रमुख कारणों में से एक है। यदि समुचित उपाय किए जाएं, तो दालों के घरेलू उत्पादन को बढ़ाने के लिए ज्यादातर मुद्दों का समाधान किया जा सकता है। अनुसंधान संबंधी प्रमुख मुद्दों का ब्यौरा नीचे दिया गया है :
- **मुद्दे :** दालें प्रोटीन की दृष्टि से समृद्ध फसलें होती हैं, इसलिए उनमें जैविक और अजैविक दबावों की आशंका अधिक रहती है। इसे देखते हुए यह जरूरी है कि समेकित प्रजनन पद्धतियों को अपनाते हुए ऐसी प्रजातियां विकसित की जाएं, जो अनेक प्रतिकूलताओं को सहन करने में सक्षम हों। मांग, वैश्विक बाजार, साथी फसलों के बीच प्रतिस्पर्धा, जलवायु परिवर्तन आदि को देखते हुए दलहन सुधार अनुसंधान कार्यक्रमों की प्राथमिकता नए सिरे से निर्धारित करने की आवश्यकता है, ताकि सभी दलहन उत्पादक क्षेत्रों के लिए सुधार का वांछित–स्तर सुनिश्चित किया जा सके।
- **कार्यनीतियां :** जरूरत के जींस/क्यूटीएल्स अंतरित करने के लिए समेकित प्रजनन दोहन जेनोमिक टूल्स (मोलिक्यूलर मार्कर्स) आवश्यक हैं। दलहन सुधार कार्यक्रमों के लिए विभिन्न विषयों से संबद्ध वैज्ञानिकों की टीम तैनात करने की आवश्यकता है। चयन की सक्षमता बढ़ाने के लिए मोलिक्यूलर मार्कर टेक्नोलॉजी के एकीकरण को प्रौद्योगिकी विकास में तेजी लाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम बनाना होगा। ट्रांसजैनिक विकास की जरूरत आधारित वैकल्पिक प्रौद्योगिकी और जीन संपादन प्रौद्योगिकियां इस्तेमाल करनी होंगी ताकि ऐसी समस्याओं का समाधान किया जा सके, जिनका समाधान परंपरागत साधनों से संभव नहीं है। काबुली चना में हेट्रोसिस के इस्तेमाल के बारे में जारी अनुसंधान को और सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है।

दलहन उत्पादन बढ़ाने के लिए कार्यनीतियां

दो कार्यनीतियां अपनाते हुए भारत में दलहन उत्पादन में महत्वपूर्ण इजाफा किया जा सकता है। ये हैं– अतिरिक्त क्षेत्र को दलहन की खेती के अंतर्गत लाते हुए समानांतर विस्तार तथा दलहन की खेती की प्रति यूनिट पैदावार में बढ़ोतरी करते हुए शीर्षवत विस्तार।

- **समानांतर विस्तार :** पूर्वी भारत में विस्तृत क्षेत्र परती भूमि के अंतर्गत आते हैं और उन्हें चरणबद्ध तरीके से दलहन की खेती के अंतर्गत लाया जा सकता है और इसके जरिए दलहन के क्षेत्र में क्षेत्रीय आत्मनिर्भरता भी हासिल की जा सकती है। दूसरे, दलहन उत्पादन के लिए और साथ ही बीज उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए भी गैर–परंपरागत क्षेत्रों/वैकल्पिक मौसमों का भी इस्तेमाल किया जा सकता है।
- **उत्पादकता में बढ़ोतरी :** अधिक पैदावार देने वाली किस्मों को लोकप्रिय बनाने और विभिन्न दलहन फसलों के लिए अनुकूल उत्पादन प्रौद्योगिकियां इस्तेमाल करने से खेती क्षेत्र की प्रति यूनिट पैदावार निश्चित रूप से बढ़ाई जा सकती है। जैसाकि पहले कहा जा चुका है, अनुशंसित आईपीएम मॉड्यूलों सहित बेहतर कृषि वैज्ञानिक पद्धतियों में 20 से 30 प्रतिशत तक उत्पादकता बढ़ाने की क्षमता है।
- **कृषि यंत्रीकरण :** कृषि यंत्रीकरण में बढ़ोतरी से खेती की लागत कम करने और कृषि श्रमिकों का उपयोग गैर–कृषि कार्यों के लिए करने में मदद मिल सकती है। यंत्रीकरण से दलहन फसलों की समय पर बुआई और फसल कटाई में भी काफी हद तक मदद मिलेगी।
- **क्वालिटी बीज की उपलब्धता:** किसी भी फसल की अच्छी पैदावार के लिए बीज महत्वपूर्ण घटक है, जो पौधों की अनुकूलतम आबादी सुनिश्चित करते हुए फसल के समुचित स्वास्थ्य और वृद्धि में सहायक होते हैं। दलहन के मामले में गुणवत्तापूर्ण बीजों की आपूर्ति हमेशा उत्पादन और उत्पादकता के मार्ग में एक रुकावट रही है। हाल ही में दलहन की खेती के अंतर्गत क्षेत्र में 3 से 4 लाख हेक्टेयर का इजाफा हुआ है अतः: अतिरिक्त गुणवत्तापूर्ण बीज की मांग बढ़ने की संभावना है। दलहन की खेती के 30 प्रतिशत क्षेत्र को गुणवत्तापूर्ण बीजों से कवर करने के लिए करीब 30–35 लाख क्विंटल गुणवत्तापूर्ण बीजों की आवश्यकता हर वर्ष होगी। गुणवत्तापूर्ण बीज के महत्व पर विचार करते हुए कृषि सहकारिता और कृषक कल्याण विभाग, कृषि और कृषक कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार ने आईसीएआर की एक परियोजना का अनुमोदन किया है। ''भारत में देसी दलहन उत्पादन बढ़ाने के लिए बीज केंद्रों का निर्माण'' नामक इस परियोजना के अंतर्गत 24 राज्यों में 150 बीज केंद्र स्थापित किए जाएंगे, जिन पर कुल रुपये 22531.08 लाख की लागत आने का अनुमान है। यह

दालों का न्यूनतम समर्थन मूल्य (रु./क्विंटल)

	दालों का न्यूनतम समर्थन मूल्य (रु./क्विंटल)					
फसल	2012–13	2013–14	2014–15	2015–16	2016–17	2017–18
अरहर	3850	4300	4350	4625	5050	5450
काबुली चना	3000	3100	3175	3500	4000	4400
मूंग	4400	4500	4600	4850	5225	5575
उड़द	4300	4300	4350	4625	5000	5400
मसूर	2900	2950	3075	3400	3950	4250

परियोजना आईसीएआर–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान (आईसीएआर–आईआईपीआर), कानपुर के जरिए लागू की जा रही है। आईसीएआर के नौ संस्थान, विभिन्न राज्य कृषि विश्वविद्यालयों/केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालयों में स्थित 44 एआईसीआरपीज़; और 97 कृषि विज्ञान केंद्र इस परियोजना में भागीदार हैं। कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान (एटीएआरआईज़) बीज केंद्र परियोजना के कार्यान्वयन में सहयोग कर रहे हैं।

- **मानव संसाधन विकास :** दलहन के उत्पादन और उत्पादकता में सुधार लाने के लिए उन्नत किस्मों और बेहतर कृषि वैज्ञानिक पद्धतियों की दृष्टि से किसानों और अन्य संबद्ध पक्षों का सशक्तिकरण अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- **प्रौद्योगिकी हस्तांतरण :** पिछले दो दशकों में आयोजित किए गए अग्रणी प्रौद्योगिकी प्रदर्शनों से संकेत मिलता है कि दलहन उत्पादकता में कम से कम 20 से 30 प्रतिशत तक वृद्धि की जा सकती है। बशर्ते उपलब्ध प्रौद्योगिकियां हस्तांतरित कर दी जाएं और किसानों को इन प्रौद्योगिकियों के लाभों के बारे में जानकारी दी जाए। केंद्र सरकार ने दालों के बारे में ''क्लस्टर अग्रणी प्रदर्शनों'' का एक व्यापक कार्यक्रम शुरू किया है और उसके लाभ सामने आए हैं। किसानों की भागीदारी के साथ ट्रॉयल/प्रदर्शन किसानों को परिष्कृत खेती और प्रौद्योगिकियों के लाभ समझाने में मददगार सिद्ध हुए हैं। बड़ी संख्या में किसानों को बीज के नमूनों के छोटे पैकेट (2–5 किग्रा) वितरित करने से नई प्रजातियों और समेकित फसल प्रबंधन प्रौद्योगिकियों के तीव्र प्रसार में मदद मिलेगी। सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है इसलिए इस्तेमालकर्ता अनुकूल मोबाइल आधारित ऐप क्षेत्रीय भाषाओं में विकसित करने और आईटी साधनों का इस्तेमाल करते हुए उपयुक्त कृषि परामर्श जारी करने की आवश्यकता है।
- **मूल्य संवर्धन :** दालों को बिना दले हुए भंडारित करने की स्थिति में अनाज के भंडार में लगने वाले कीट दलहन के दानों को भारी क्षति पहुंचाते हैं, क्योंकि अधिकतर दालें करीब 14–15 प्रतिशत बीज नमी मात्रा के साथ उगाई जाती हैं। यह स्थिति ब्रुचिड जैसे रोगाणु/कीटों के बढ़ने के लिए अनुकूल होती हैं। अतः दालों के लिए मूल्य संवर्धन और छोटे पैमाने पर प्रसंस्करण एवं मिलिंग मशीनरी विकास के लिए क्षमता विकास के प्रयास तत्काल आवश्यक हैं। खपत पैटर्न में बदलाव और युवा भारतीयों की पसंद को ध्यान में रखते हुए पौष्टिक दालों से मूल्य संवर्धित, ''उपयोग के लिए तैयार उत्पादों'' के विकास हेतु अनुसंधान में निवेश परम आवश्यक है।
- **दालों की खरीद और भंडारण :** दालों की खरीद और भंडारण दो प्रमुख अनाजों गेहूं और चावल की तरह से नहीं किया जा सकता। उपभोक्ताओं के लिए दालों के मूल्य स्थिर रखने के वास्ते सुरक्षित भंडार बनाने हेतु दालों की खरीद और भंडारण के बारे में गहन विचार–विमर्श की आवश्यकता है, ताकि खरीद नेटवर्क के लिए मानव संसाधन जुटाने, गुणवत्ता बनाए रखने, भंडारण और निपटान–तंत्र कायम करने आदि सहित उपयुक्त नीतियां विकसित की जा सकें। दालों को भंडारण से पहले भली–भांति सुखाया जाना चाहिए। उनमें नमी की मात्रा 8 प्रतिशत से नीचे लाई जानी चाहिए और बीजों के लिए यह मात्रा करीब 10–12 प्रतिशत होनी चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि दालों के अनाज/बीजों हेतु भंडारण सुविधाएं विकसित की जाएं। सरकारी–निजी भागीदारी मॉडल का इस्तेमाल करते हुए भंडारण सुविधाएं विकसित की जा सकती हैं, जिनमें निर्माण के लिए प्रारंभिक निवेश आंशिक रूप में सरकार द्वारा दिया जाता है और किसानों को भंडारण के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। तटवर्ती क्षेत्रों अथवा राज्यों में दालों के लिए भंडारण सुविधाओं का निर्माण अत्यंत महत्वपूर्ण है, जहां वर्षा अधिक होती है और आर्द्रता की मात्रा ऊंची होती है। किसानों को भुगतान के आधार पर दालों या उनके बीजों को भंडारित करने हेतु प्रोत्साहित किया जा सकता है। यह महत्वपूर्ण है कि किसानों को उनके द्वारा भंडारित बीज/दालों के आधार पर ऋण सुविधाएं प्रदान की जाएं। सरकार सुरक्षित भंडार बनाने के लिए भी ऐसी भंडारण सुविधाओं का इस्तेमाल कर सकती है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य और लाभकारी मूल्य विभिन्न संबद्ध पक्षों के बीच हमेशा चर्चा का विषय रहते हैं। हाल ही में सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य में महत्वपूर्ण वृद्धि की है। (तालिका–4) और भविष्य में यदि यह प्रवृत्ति जारी रही तो समर्थन मूल्य लाभकारी मूल्य के स्तर तक पहुंच सकते हैं। 'न्यूनतम समर्थन मूल्य में बोनस भी शामिल है।

भविष्य : आईसीएआर और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियां जैसे अधिक पैदावार देने वाली प्रजातियां, जो प्रमुख जैविक और अजैविक दबावों से रक्षित हैं और पादप संरक्षण उपायों सहित बेहतर कृषि वैज्ञानिक पद्धतियां और उनके साथ सरकार द्वारा उत्पादन बढ़ाने के लिए शुरू किए गए विभिन्न कार्यक्रम और सकारात्मक नीति समर्थन, ये सब मिलकर निश्चित रूप से भारतीय किसानों को आने वाले वर्षों में दालों की अधिक पैदावार करने में सक्षम बना सकते हैं। ऐसे संकेत हैं कि 2017–18 के दौरान न केवल पिछले वर्ष के दलहन उत्पादन को बनाए रखना संभव होगा, बल्कि इसमें और बढ़ोतरी होगी। परंतु, दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता का लक्ष्य हासिल करने के लिए अनुकूल नीति समर्थन जारी रखने के अलावा अनुसंधान और विकास में स्थायी आधार पर दीर्घावधि निवेश करने की आवश्यकता है।

(जेएस संधू भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के पूर्व उपमहानिदेशक (फसल विज्ञान) हैं; एस.के. चतुर्वेदी आईसीएआर–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर में फसल सुधार प्रभाग में कार्यरत हैं।)

ई–मेल : js_sandhuin@yahoo.com

भारतीय कृषि के विकास में क्षेत्रीय असंतुलन

–डॉ. जसपाल सिंह
–डॉ. अमृतपाल कौर

भारत में कृषि उत्पादकता में राज्यों के बीच अंतर काफी ज्यादा है। लेकिन अब उन्नत राज्यों को कृषि उत्पादकता की विकास दर में गतिरोध का सामना करना पड़ रहा है। दूसरी ओर, पिछड़े राज्य बाजार सुधारों और कृषि के अनुकूल नीतियों को अपना कर और उन्हें बेहतर ढंग से लागू करते हुए उन्नत राज्यों के साथ कदम–से–कदम मिला रहे हैं। इस तरह समय के साथ सभी राज्यों के बीच कृषि उत्पादकता में एक–दूसरे के करीब पहुंचने का रुझान दिखाई दे रहा है। क्षेत्रों के बीच अंतर को खत्म करने के लिए कृषि के लिहाज से उन्नत और पिछड़े राज्यों के वास्ते अलग–अलग नीतियों की दरकार है। पिछड़े राज्यों को कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए खेती के आधुनिक तौर–तरीकों को ज्यादा–से–ज्यादा अपनाना चाहिए। दूसरी ओर, उन्नत राज्यों को विविधीकरण और कृषि व्यवसाय गतिविधियों जैसे खेती के विकास के दूसरे चरण का दोहन करना होगा।

कृषि क्षेत्र अब भी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। यह देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (सीएसओ) के द्वितीय अनुशंसित अनुमानों के मुताबिक 2011–12 के मूल्यों पर 2016–17 के सकल संवर्द्धित मूल्य (जीवीए) में कृषि तथा पशुपालन, वानिकी और मछली पालन जैसे संबंधित क्षेत्रों का हिस्सा 17.3 प्रतिशत रहा। अन्य क्षेत्रों में प्रगति के साथ–साथ देश के सकल घरेलू विकास (जीडीपी) में कृषि का हिस्सा बेशक घटा है लेकिन अब भी देश की लगभग आधी श्रमशक्ति कृषि क्षेत्र में ही लगी हुई है।

अर्थशास्त्र और सांख्यिकी निदेशालय (डीईएस) के 2016–17 के लिए चौथे अग्रिम अनुमानों के अनुसार किसी समय में मुख्यतः आयात पर निर्भर भारत अब लगातार 27.568 करोड़ टन खाद्यान्नों का उत्पादन कर रहा है। भारत गेहूं, धान, दलहन, गन्ना और कपास जैसी अनेक फसलों के चोटी के उत्पादकों में शामिल है। यह दूध का सबसे बड़ा तथा फलों और सब्जियों का दूसरे नंबर का उत्पादक है। वर्ष 2013 में विश्व भर के दलहन के 25 प्रतिशत, धान के 22 प्रतिशत और गेहूं के 13 प्रतिशत हिस्से का उत्पादन भारत में हुआ। विश्व के कपास उत्पादन में लगभग 25 प्रतिशत हिस्सा भारत का रहा। इसके अलावा, भारत पिछले कई वर्षों से कपास का दूसरा सबसे बड़ा निर्यातक भी है।

भारत में आजादी मिलने के बाद से कृषि उत्पादन और उत्पादकता में काफी तेजी से वृद्धि हुई है। लेकिन चीन, ब्राजील और अमेरिका जैसे चोटी के उत्पादक देशों की तुलना में भारत में ज्यादातर फसलों का ज़मीन की प्रति इकाई उत्पादन कम रहा है। इसके अलावा, देश के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में उत्पादकता से लाभ भी असमान रहा है। इस अध्ययन में कृषि विकास के स्तर में प्रमुख भारतीय राज्यों के प्रदर्शन को जानने–समझने की कोशिश की गई है। साथ ही, इसमें कृषि उत्पादकता के लिहाज से राज्यों के बीच अंतर की छानबीन का प्रयास किया गया है। अध्ययन में भारत में उत्पादकता असंतुलन और राज्यों के बीच सम्मिलन (कंवर्जेंस) की प्रकृति पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है।

आंकड़ों के स्रोत और प्रक्रिया

अध्ययनकाल 2004–05 और 2014–15 के बीच के 10 साल हैं। प्रांतों के बीच तुलना के लिए 23 बड़े राज्यों का अध्ययन किया गया है। अध्ययन में ज्यादातर द्वितीयक आंकड़ों का इस्तेमाल किया गया है। इनमें राष्ट्रीय लेखा आंकड़े (सीएसओ, भारत सरकार), कृषि आंकड़े एक नजर में (डीईएस, कृषि मंत्रालय) तथा राष्ट्रीय लेखा आंकड़े (सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार) शामिल हैं।

कृषि उत्पादकता का अनुमान इस तरह लगाया गया हैः

कृषि उत्पादकता (रुपये/हेक्टेयर) एनएसडीपी$_{it}$/एनएसए$_{it}$

जहां

एनएसडीपी– i^{th} राज्य का t^{th} समय पर शुद्ध–राज्यीय घरेलू कृषि उत्पादन

एनएसए– i^{th} राज्य का t^{th} समय पर शुद्ध रोपण क्षेत्र

सम्मिलन विश्लेषण के लिए इस पत्र में अल्फा कंवर्जेंस का अध्ययन किया गया है। अल्फा कंवर्जेंस किसी खास परिवर्ती के अनुप्रस्थ खंडीय वितरण के समय अंतराल में व्यवहार को मापता है।

कृषि उत्पादकताः वृद्धि और क्षेत्रीय असंतुलन

देश की खाद्यान्न की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृषि उत्पादकता और उसके विकास को बनाए रखने और उसमें सुधार की जरूरत है। ज्यादातर ज़मीन पर पहले से ही खेती हो रही है। इसलिए कृषि विकास का मुख्य तरीका प्रति इकाई ज़मीन उत्पादकता बढ़ाना ही होना चाहिए। लेकिन कृषि उत्पादकता में राज्यों के बीच काफी फर्क है। मौजूदा मूल्यों पर अरुणाचल प्रदेश की उत्पादकता सबसे ज्यादा 326917 रुपये प्रति हेक्टेयर है। उच्च उत्पादकता वाले राज्यों में आंध्र प्रदेश (260346 रुपये/हेक्टेयर) और तमिलनाडु (259921 रुपये/हेक्टेयर) भी शामिल हैं। वर्ष 2015–16 में मौजूदा मूल्यों पर राज्यों की कृषि उत्पादकता

को दिखाया गया है। चित्र में राज्यों को उनकी कृषि उत्पादकता के स्तर के आधार पर तीन वर्गों– उच्च (हरा), मध्यम (पीला) और निम्न (लाल) में बांटा गया है।

पंजाब और हरियाणा जैसे राज्य कई दशकों तक खासतौर से खाद्यान्नों की उत्पादकता रैंकिंग में प्रमुख स्थान पर हैं। लेकिन 2004–05 और 2014–15 के बीच पंजाब ने 1.73 प्रतिशत और हरियाणा ने 3.15 प्रतिशत की मामूली विकास दर दर्ज की है। बागवानी की बदौलत हरे क्षेत्र में शामिल जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और केरल जैसे राज्यों में भी उत्पादकता विकास दर कम रही है। दूसरी ओर ओडिशा, मध्य प्रदेश और गुजरात ने लाल वर्ग में रहने के बावजूद कृषि उत्पादकता में क्रमशः 6.12 प्रतिशत, 5.75 प्रतिशत और 5.54 प्रतिशत की ऊंची विकास दर हासिल की है। इन राज्यों ने विभिन्न बाजार सुधारों और कृषि के अनुकूल नीतियों को प्रभावी ढंग से अपनाया और लागू किया है।

तालिका–1 से पता चलता है कि उच्च कृषि उत्पादकता स्तर यानी हरा वर्ग वाले राज्यों में विकास दर कम रही। खेती के लिहाज से विकसित ज्यादातर राज्यों में कृषि उत्पादकता वृद्धि दर बेहद मामूली या अवरुद्ध रही। इन राज्यों में कृषि क्षेत्र अधिकतम वृद्धि की स्थिति में पहुंच गया है। पहले से ही इस्तेमाल की जा रही प्रौद्योगिकी के जरिए इनमें और विकास मुश्किल है। दूसरी ओर, लाल वर्ग में निम्न उत्पादकता वाले राज्यों ने अध्ययनकाल के दौरान उच्च विकास दर दर्ज की। इन राज्यों में उत्पादकता में सुधार की व्यापक संभावनाएं मौजूद हैं।

कृषि उत्पादकता में ये क्षेत्रीय असमानताएं सिंचाई कवरेज, फसलों की संख्या, उर्वरक के इस्तेमाल, ऋण, खेत के आकार, नीतिगत समर्थन के स्तर और संस्थागत कारकों जैसे कई तत्वों के अंतर्संबंधों का परिणाम है। अध्ययन में कृषि उत्पादकता में क्षेत्रीय असंतुलनों के एक बड़े निर्धारक के रूप में कृषि विपणन और किसानों के अनुकूल सुधारों के सूचकांक (एएमएफएफआरआई) में स्थान पर भी विचार किया गया है (चंद और सिंह, 2016)। तालिका–2 में अंतरक्षेत्रीय उत्पादकता असंतुलन के इन कारकों और भारत के बड़े राज्यों में उनकी स्थिति को दिखाया गया है। भारत में खेती के इंफ्रास्ट्रक्चर और कृषि आदानों के इस्तेमाल में क्षेत्रीय असमानता बहुत ज्यादा है। पंजाब (98.7 प्रतिशत), हरियाणा (89.1 प्रतिशत) और उत्तर प्रदेश (80.2 प्रतिशत) में सिंचाई का कवरेज सबसे ज्यादा है। इसलिए इन राज्यों में सबसे अधिक फसलें ली जाती हैं। देशभर में उच्च उत्पादकता वाले राज्यों में उर्वरक (किलो प्रति हेक्टेयर) और ऋण (रुपये प्रति हेक्टेयर) का इस्तेमाल अधिक और खेतों का आकार बड़ा है। इसलिए इन कारकों का अपने कृषि क्षेत्र में प्रभावी ढंग से इस्तेमाल करने में सक्षम राज्य बेहतर उत्पादकता और उत्पादन दर हासिल करते हैं। एएमएफएफआरआई में महाराष्ट्र ने विभिन्न सुधारों को लागू करने में पहला स्थान हासिल किया है। इस राज्य ने ज्यादातर विपणन सुधारों को लागू किया है। वह सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों

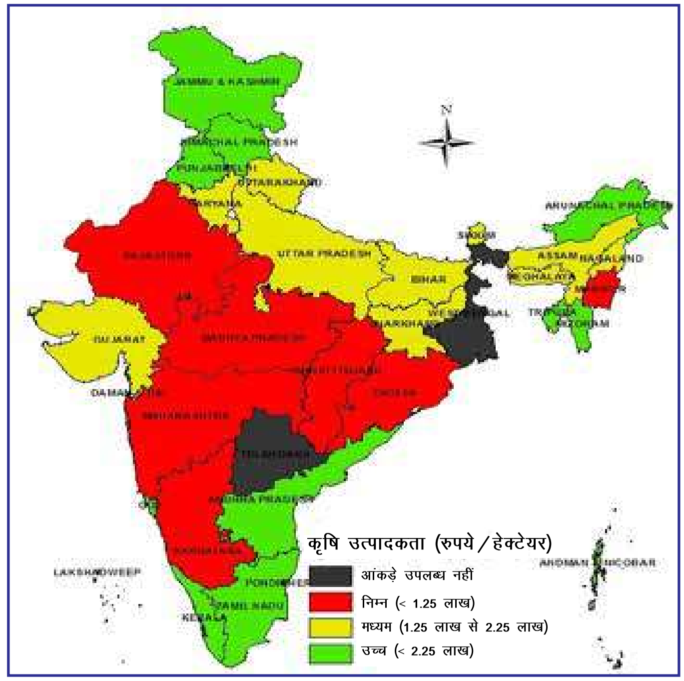

चित्र 1: वर्तमान मूल्यों पर 2015–16 के दौरान राज्यों की कृषि उत्पादकता

के बीच कृषि व्यवसाय के लिए सबसे अच्छा माहौल उपलब्ध कराता है। गुजरात 100 में से 71.5 अंक लेकर सूचकांक में दूसरे स्थान पर है तथा राजस्थान और मध्य प्रदेश उसके ठीक पीछे हैं। कृषि के क्षेत्र में विकसित राज्य पंजाब 43.9 अंक लेकर चौदहवें स्थान पर है। इसकी वजह पंजाब में विपणन सुधारों को खराब ढंग से लागू किया जाना है। लगभग दो–तिहाई राज्य और केंद्रशासित प्रदेश सुधारों के 50 प्रतिशत अंक तक भी नहीं पहुंच सके हैं। इस श्रेणी में उत्तर प्रदेश, पंजाब, पश्चिम बंगाल, असम, झारखंड, तमिलनाडु और जम्मू–कश्मीर जैसे बड़े राज्य शामिल हैं। तालिका से पता चलता है कि ऊंची उत्पादकता–स्तर वाले राज्य में कृषि आदानों का बेहतर उपयोग होता है।

जिन राज्यों का बाजार सुधारों और कृषि के अनुकूल नीतियों को अपनाने में प्रदर्शन अच्छा है, वे एएमएफएफआरआई में ऊंची रैंकिंग पर हैं। इन राज्यों में कृषि उत्पादकता विकास दर ज्यादा है और वे उन्नत राज्यों के नजदीक पहुंच रहे हैं।

भारत में कृषि विकासः सम्मिलन का विश्लेषण

भारत में कृषि विकास में सम्मिलन की प्रकृति की व्याख्या करने की अनेक कोशिशें की गई हैं। इस पत्र में अल्फा सम्मिलन का अध्ययन किया गया है। इसमें उत्पादकता में वृद्धि से शुरुआती यानी 2004–05 की उत्पादकता के लॉग को घटा दिया जाता है जैसाकि चित्र–2 में दिखाया गया है। सम्मिलन का अध्ययन कृषि उत्पादकता विकास दर से सभी राज्यों की शुरुआती कृषि उत्पादकता को घटा कर किया जाता है। इसका परिणाम चित्र–1 में दिखाया गया है। नीचे की ओर जाती रेखाएं अध्ययनकाल के दौरान कृषि उत्पादकता में राज्यों के बीच सम्मिलन के रुझान का संकेत करती हैं। ओडिशा, गुजरात और मध्य प्रदेश जैसे ज्यादातर

तालिका 2: अंतर–क्षेत्रीय उत्पादकता असंतुलन के निर्धारक तत्व

राज्य / केंद्रशासित प्रदेश	सिंचाई कवरेज प्रतिशत	फसली तीव्रता प्रतिशत	उर्वरक उपयोग (किग्रा / हेक्टेयर)	ऋण (रुपये / हेक्टेयर)	खेत आकार (हेक्टेयर)	एएमएफ एफआरआई में रैंकिंग
आंध्र प्रदेश	50.5	123.3	226	118883	1.08	7.4
अरुणाचल प्रदेश	18.7	132.8	2	7594	3.51	21.1
असम	9.2	144.4	45	13812	1.1	37.1
बिहार	68.7	145.4	220	76809	0.39	12.4
छत्तीसगढ़	31.2	122.4	100	18110	1.36	47
गोवा	24.6	122.0	49	44567	1.14	52.8
गुजरात	47.1	124.0	125	43257	2.03	70.1
हरियाणा	89.1	185.6	220	141379	2.25	65
हिमाचल प्रदेश	21.0	167.0	57	93133	0.99	59.6
जम्मू–कश्मीर	42.8	155.3	64	36403	0.62	7.4
झारखंड	14.3	112.2	55	26450	1.17	49.2
कर्नाटक	34.2	121.9	175	84462	1.55	55.5
केरल	17.9	128.5	44	212406	0.22	10.8
मध्य प्रदेश	43.3	155.1	84	33941	1.78	64.4
महाराष्ट्र	18.2	135.3	122	36194	1.44	66.4
मणिपुर	18.0	100.0	42	418	1.14	7.4
मेघालय	37.1	120.0	0	3774	1.37	14.3
मिजोरम	14.5	100.0	18	6842	1.14	37
नगालैंड	21.2	130.3	6	3074	6.02	33.3
ओडिशा	28.7	115.6	63	40793	1.04	27.9
पंजाब	98.7	190.8	249	205525	3.77	43.9
राजस्थान	42.0	138.3	62	38597	3.07	69.6
तमिलनाडु	56.6	124.4	175	218339	0.8	17.7
उत्तर प्रदेश	80.2	157.5	156	22490	0.76	45.8
उत्तराखंड	49.5	156.7	169	90492	0.89	25.2

स्रोतः कृषि आंकड़े एक नजर में, डीईएस, एमओएफडब्ल्यूपीआई

कम कृषि उत्पादकता वाले राज्य समय के साथ अरुणाचल प्रदेश, पंजाब और हरियाणा की तरह उन्नत राज्यों से सम्मिलन की ओर बढ़ रहे हैं। क्षेत्रीय असमानता बने रहने के दुष्परिणामों को देखते हुए इस रफ्तार को बनाए रखने के प्रयास किए जाने चाहिए। विकास में क्षेत्रीय संतुलन को बढ़ावा देने के लिए उपाय करने की जरूरत है। उत्पादकता में क्षेत्रीय असमानता की नीतियों को बेहतर ढंग से लागू करके दूर किया जा सकता है।

अंत में, यह अध्ययन भारत के प्रमुख राज्यों के कृषि उत्पादन और उत्पादकता में विकास के प्रदर्शन को जानने–समझने की कोशिश करता है। इसमें कृषि के क्षेत्र में राज्यों के बीच असमानता की प्रकृति और परिमाण पर भी गौर किया गया है। विकास के प्रदर्शन के विश्लेषण से पाया गया है कि मध्य भारत के कृषि की कम उत्पादकता–स्तर वाले राज्यों को उर्वरकों, उन्नत बीजों, सिंचाई, मशीनों, ऋण और प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल को बढ़ावा देना चाहिए। ये राज्य इन कारकों को मजबूत करके कृषि उत्पादकता को बढ़ाने में सफल हो सकते हैं। उच्च कृषि उत्पादकता वाले राज्यों में विकास अवरुद्ध हो गया है। मसलन, पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में कृषि गतिरोध की अवस्था में पहुंच गई है। इनमें मौजूदा प्रौद्योगिकियों और प्राकृतिक संसाधनों के जरिए और विकास बहुत कठिन है। इनमें उन कारकों पर विचार करने की जरूरत है जो उच्च मूल्य वाली बागवानी, पशुपालन और विशिष्ट उत्पादों की ओर विविधीकरण के अनुकूल हैं। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग ज्यादातर श्रम–आधारित होता है। इसे निर्यात का प्रमुख उद्योग बना कर कामगारों के लिए रोजगार के काफी अवसर पैदा किए जा सकते हैं। पिछड़े राज्यों के लिए अलग तरह की नीतियों की जरूरत है। इसके विपरीत उन्नत राज्यों के लिए उच्च मूल्य वाली बागवानी, पशुपालन से संबंधित उत्पादों और कृषि–आधारित व्यवसायों की ओर विविधीकरण जैसे अलग तरह के हस्तक्षेप की जरूरत है।

कृषि उत्पादकता में क्षेत्रीय असमानता को खत्म करने के लिए पिछड़े क्षेत्रों में ज्यादा–से–ज्यादा निवेश किया जाना चाहिए। इसके अलावा, दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी और गैर–सरकारी ऋण के विस्तार की जरूरत है। खुश्क भूमि क्षेत्रों को उपजाऊ बनाने के बारे में अनुसंधान तथा पानी और उर्वरक के कम इस्तेमाल पर आधारित और सस्ती कृषि प्रौद्योगिकी के विकास को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। देश में ज्यादा संतुलित और धारणीय कृषि को बढ़ावा देने के लिए इन उपायों के अलावा आमूल विकास के नजरिए को लागू करने की जरूरत है। पूर्वी राज्यों और वर्षा पर निर्भर अन्य क्षेत्रों की जरूरतों की ओर खासतौर से ध्यान देना आवश्यक है।

(लेखक डॉ. जसपाल सिंह नीति आयोग, नई दिल्ली में सलाहकार हैं; डॉ. अमृतपाल कौर नीति आयोग, नई दिल्ली में शोध सहायक हैं।)

ई–मेलः jaspal.singh82@nic.in
amrit.pal44@nic.in

आगामी अंक

मार्च, 2018 : बजट 2018–19

कृषि क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता

–गौरव कुमार

विशेषज्ञों का मानना है कि अगर कृषि में महिलाओं को बराबर का दर्जा मिले तो कृषि कार्यों में महिलाओं की बढ़ती संख्या से उत्पादन में बढ़ोतरी हो सकती है, भूख और कुपोषण को भी रोका जा सकता है। इसके अलावा ग्रामीण अजीविका में सुधार होगा, इसका लाभ पुरुष और महिलाओं, दोनों को होगा। महिलाओं को अच्छा अवसर तथा सुविधा मिले तो वे देश की कृषि को द्वितीय हरितक्रांति की तरफ ले जाने के साथ देश के विकास का परिदृश्य भी बदल सकती हैं।

आज देश की कुल आबादी में आधा हिस्सा महिलाओं का है, इसके बावजूद वे अपने मूलभूत अधिकारों से भी वंचित हैं खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में। अधिकारों के अतिरिक्त देखा जाए तो जिन क्षेत्रों मे वे पुरुषों के मुकाबले बराबरी पर भी हैं, वहां उनकी गिनती पुरुषों की अपेक्षा कमतर ही आंकी जा रही है। इसी में से एक क्षेत्र है कृषि। इसमें भी महिलाओं को अधिकतर मजदूर का दर्जा ही प्राप्त है, कृषक का नहीं। बाजार की परिभाषा में अनुकूल कृषक होने की पहचान इस बात से तय होती है कि ज़मीन का मालिकाना हक किसके पास है, इस बात से नहीं कि उसमें श्रम किसका और कितना लग रहा है। और इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि भारत में महिलाओं को भूमि का मालिकाना हक ना के बराबर है। इन सबके अतिरिक्त अगर महिला कृषकों के प्रोत्साहन की बात की जाए तो देश मे केंद्र और राज्य सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने हेतु अनेक प्रकार की योजनाएं, नीतियां व कार्यक्रम हैं परंतु उन सबकी पहुंच महिलाओं तक या तो कम है या बिलकुल नहीं है। यही कारण है कि देश की आधी आबादी देश के सबसे बड़े कृषि क्षेत्र मे हाशिए पर है।

कृषि जनगणना (2010–11) की रिपोर्ट के मुताबिक भारत में मौजूदा स्थिति में केवल 12.78 प्रतिशत कृषि जोत ही महिलाओं के नाम पर हैं। यही कारण है कि 'कृषि क्षेत्र' में उनकी निर्णायक भूमिका नहीं है। कृषि भूमि पर मालिकाना हक महज एक प्रशासनिक पहलू नही है, बल्कि इसका सामाजिक–आर्थिक निहितार्थ भी है। इस एक हक से व्यक्ति की पहचान, उसके अधिकार, निर्णय की क्षमता, आत्मनिर्भरता व आत्मविश्वास जुड़ा हुआ है। महिलाओं के पास ज़मीन पर अधिकार न होने से उनका सर्वांगीण विकास और सशक्तीकरण प्रभावित होता है। साथ ही गंभीर और आपदा की स्थिति में अपने पैतृक भूमि का उपयोग करने में भी वे अक्षम होती हैं। अतः जरूरी है कि पैतृक जोत भूमि में पत्नी का नाम भी पति के साथ दर्ज हो, ऐसा कानून में प्रावधान किया जाना चाहिए। यह भी समझने की आवश्यकता है कि पुरुषों के पलायन के कारण कृषि कार्य पुरुषों से ज्यादा महिलाओं के हाथ में चला गया है, इसके बावजूद महिलाएं कृषक नहीं हैं, क्योंकि उनके पास कृषि के मालिकाना हक का दस्तावेज नहीं है अर्थात वह खेत की वास्तविक मालिक नहीं हैं।

कृषि क्षेत्र मे उनकी सहभागिता का दूसरा पहलू भी है, अधिकतर घरेलू काम जैसे जलावन की लकड़ी, पशुओं के लिए चारा, परिवार के लिए लघु वन उपज, पीने का पानी समेत हर काम में महिलाओं की केंद्रीय भूमिका है, किंतु उनकी पहचान श्रमिक अथवा पुरुष सहायक के रूप में ही है। मातृसत्तात्मक परिवारों को छोड़ दिया जाए तो वे सामान्य परिवारों में कभी घर की मालिक

भी नहीं बन पाती हैं जिसकी वजह से कृषि सबंधी निर्णय, नियंत्रण के साथ–साथ किसानों को मिलने वाली समस्त सुविधाओं में से 65 प्रतिशत कृषि कार्य का भार अपने कंधों पर उठाने वाली महिला वंचित रह जाती हैं और इस सबके बावजूद उन्हें किसान का दर्जा नहीं मिलता है।

विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार भारतीय कृषि में महिलाओं का योगदान करीब 32 प्रतिशत है, जबकि कुछ राज्यों (जैसेकि पहाड़ी तथा उत्तर–पूर्वी क्षेत्र तथा केरल राज्य) में महिलाओं का योगदान कृषि तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पुरुषों से भी ज्यादा है। भारत के 48 प्रतिशत कृषि से संबंधित रोजगार में औरतें हैं जबकि करीब 7.5 करोड़ महिलाएं दुग्ध उत्पादन तथा पशुधन व्यवसाय से संबंधित गतिविधियों में सार्थक भूमिका निभाती हैं। आंकड़ों के मुताबिक कृषि उत्पादनों में महिलाओं का योगदान 20 से 30 प्रतिशत ही है।

विशेषज्ञों का मानना है कि अगर कृषि में महिलाओं को बराबर का दर्जा मिले तो कृषि कार्यों में महिलाओं की बढ़ती संख्या से उत्पादन में बढ़ोतरी हो सकती है, भूख और कुपोषण को भी रोका जा सकता है। इसके अलावा ग्रामीण अजीविका में सुधार होगा, इसका लाभ पुरुष और महिलाओं, दोनों को होगा। सरकार की विभिन्न नीतियों जैसे जैविक खेती, स्वरोजगार योजना, भारतीय कौशल विकास योजना, इत्यादि में महिलाओं को प्राथमिकता दी जा रही है और यदि महिलाओं को अच्छा अवसर तथा सुविधा मिले तो वे देश की कृषि को द्वितीय हरितक्रांति की तरफ ले जाने के साथ देश के विकास का परिदृश्य भी बदल सकती हैं।

यही वजह है कि महिलाओं को कृषि क्षेत्र के प्रति जागरूक करने और उन्हें इस क्षेत्र में सम्मानजनक स्थान दिलाने के उद्देश्य से पिछले वर्ष कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रति वर्ष 15 अक्तूबर को राष्ट्रीय महिला किसान दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया था। निर्णय का आधार संयुक्त राष्ट्र संगठन द्वारा 15 अक्तूबर को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाना था। 15 अक्तूबर, 2017 को देशभर के समस्त कृषि विश्वविद्यालयों, संस्थानों एवं कृषि विज्ञान केंद्रों में 'राष्ट्रीय महिला किसान दिवस' मनाया गया। इस दिवस का उद्देश्य कृषि में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को बढ़ाना है।

इसके अलावा, कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में महिलाओं को और अधिक सशक्त बनाने के लिए तथा उनकी ज़मीन, ऋण और अन्य सुविधाओं तक पहुंच को बढ़ाने के लिए कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने किसानों के लिए बनी राष्ट्रीय कृषि नीति में उन्हें घरेलू और कृषि भूमि दोनों पर संयुक्त पट्टे देने जैसे नीतिगत प्रावधान किए हैं। इसके साथ कृषि नीति में उन्हें किसान क्रेडिट कार्ड जारी करना, फसल, पशुधन पद्धतियों, कृषि प्रसंस्करण आदि के माध्यम से जीविका के अवसरों का सृजन करवाए जाने जैसे प्रावधानों का भी जिक्र है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय का लक्ष्य कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के साथ–साथ किसानों के कल्याण के लिए उपाय करना है। साथ ही अपने समग्र जनादेश लक्ष्यों और उद्देश्यों के भीतर यह भी सुनिश्चित करना है कि महिलाएं कृषि उत्पादन और उत्पादकता में प्रभावी ढंग से योगदान दें और उन्हें बेहतर जीवनयापन के अवसर मिले। इसलिए महिलाओं को सशक्त बनाने और उनकी क्षमताओं का निर्माण करने और इनपुट प्रौद्योगिकी और अन्य कृषि संसाधनों तक उनकी पहुंच को बढ़ाने के लिए उचित संरचनात्मक, कार्यात्मक और संस्थागत उपायों को बढ़ावा दिया जा रहा है और इसके लिए कई प्रकार की पहल की जा चुकी है।

इसी तरह की पहल में एक महत्वपूर्ण पहल थी कृषि में महिलाओं की अहम भागीदारी को ध्यान में रखते हुए कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने वर्ष 1996 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत केंद्रीय कृषिरत महिला संस्थान की स्थापना भुवनेश्वर में की। यह संस्थान कृषि में महिलाओं से जुड़े विभिन्न आयामों पर कार्य करता है। इसके अलावा, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के 100 से अधिक संस्थानों ने कई तकनीकों का सृजन किया ताकि महिलाओं की कठिनाईयों को कम कर उनका सशक्तिकरण हो। देश में 680 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं। हर कृषि विज्ञान केंद्र में एक महिला वस्तु विषेशज्ञ हैं। वर्ष 2016–17 में महिलाओं से संबंधित 21 तकनीकियों का मूल्यांकन किया गया और 2.56 लाख महिलाओं को कृषि संबंधित क्षेत्रों जैसे सिलाई, उत्पाद बनाना, वेल्यू एडिशन, ग्रामीण हस्तकला, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, पोल्ट्री, मछली पालन, आदि का प्रशिक्षण दिया गया।

इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रमुख योजनाओं, कार्यक्रमों और विकास संबंधी गतिविधियों के अंतर्गत महिलाओं के लिए कम से कम 30 प्रतिशत धनराशि का आबंटन सुनिश्चित किया गया है। साथ ही विभिन्न लाभार्थी–उन्मुखी कार्यक्रमों, योजनाओं और मिशनों के घटकों का लाभ महिलाओं तक पहुंचाने के लिए महिला समर्थित गतिविधियां शुरु करना तथा महिला स्वयंसहायता समूहों के गठन पर ध्यान केंद्रित करना ताकि क्षमता निर्माण जैसी गतिविधियों के माध्यम से उन्हें सूक्ष्म ऋण से जोड़ा जा सके और सूचनाओं तक उनकी पहुंच बढ़ सके एवं साथ ही विभिन्न स्तरों पर निर्णय लेने वाले निकायों में उनका प्रतिनिधित्व हो। इसके अलावा कृषि मंत्रालय द्वारा कई महिला समर्थित कदम भी उठाए गए हैं जो काफी महत्वपूर्ण हैं।

किंतु सरकार द्वारा इतना करना ही काफी नहीं है। महिला सशक्तिकरण के लिए तो वैश्विक–स्तर पर भी तमाम प्रयास किए गए हैं किंतु इसका समग्र रूप में अब तक लाभ नहीं लिया जा सका है। अब आधुनिक समय में यदि इस तरह की पहल की जाती है जिसमें इन समस्याओं से मुक्ति का रास्ता निकलता है तो इसे सामाजिक रूप से स्वीकार्य बनाने की चुनौती प्रकट हो सकती है। महिला सशक्तिकरण और महिला शिक्षा की दिशा में किए जा रहे प्रयासों का भी यही हाल है। किंतु इसके विपरीत सामाजिक रुझान भी यह है कि लड़कियों के प्रति तमाम अंकुश और शोषण

के बावजूद आज महिलाओं के बीच अपने पैरों पर खड़े होने की जिद भी समाज में देखने को मिलती है। वास्तविक भारत यानी ग्रामीण क्षेत्र की जो तस्वीर है उसे बदलने की भी जरुरत है। वैसे महिलाओं की शिक्षा, आर्थिक– सामाजिक सशक्तिकरण के लिए काफी प्रयास किए गए हैं किंतु जरूरत इस बात की है कि बदलते समय के अनुकूल उनके हक मे समुचित विधान बनाए जाएं। महिला कृषक को वैधानिक आधार मिले, तब जाकर हम समाज में वास्तविक बदलाव ला सकते हैं। इसके साथ ही उनकी सामाजिक स्वीकृति भी मिलनी प्रारंभ होगी।

इन सबके साथ कृषि और संबद्ध गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी को सुदृढ़ बनाने के लिए, केंद्र सरकार द्वारा उचित संरचनात्मक, कार्यात्मक और संस्थागत उपायों द्वारा महिलाओं को सशक्त, क्षमता निर्माण और इनपुट प्रौद्योगिकी तक उनकी पहुंच बढ़ायी जा रही है। कृषि मंत्रालय के अनुसार, केवल वित्तीय वर्ष 2016–17 में ही महिलाओं से संबंधित कम से कम 21 तकनीकों का मूल्यांकन किया गया और 2.56 लाख महिलाओं को कृषि संबंधी क्षेत्रों जैसेकि पशु से जुड़े पशुपालन और पोल्ट्री में प्रशिक्षित किया गया।

भारत सरकार ने राज्यों को विधवा, अबला, परित्यक्त और निराश्रित महिलाओं की पहचान करने की सलाह दी है जिन्हें मनरेगा के तहत 100 दिन का रोजगार प्राप्त हो। जब कृषि क्षेत्र और महिला के उत्थान की बात आती है, तो बागवानी की भूमिका को भूलना नहीं चाहिए। ये भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बागवानी कृषि गहन श्रमसाध्य क्षेत्र है और इस कारण ये महिला रोजगार के अवसरों को बढ़ाते हैं। फलों और सब्जियों का इस्तेमाल घरेलू उपभोग के लिए ही नहीं किया जाता है, बल्कि ये विभिन्न उत्पादों – जैसे अचार, संसाधित सॉस, जैम, जेली स्क्वैश, आदि के लिए भी जरूरी हैं। वास्तव में, देश के कई राज्यों जैसे– पूर्वी क्षेत्र में सिक्किम, मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम, नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश सहित हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उत्तर प्रदेश में ग्रामीण महिलाओं के लिए बागवानी एक प्रमुख व्यवसाय है। राष्ट्रीय–स्तर पर देखें तो 28.2 लाख टन फल और 66 लाख टन सब्जियों के उत्पादन के साथ भारत विश्व मे फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है।

महिला रोजगार और ग्रामीण विकास के क्षेत्र मे यदि देखें तो झारखंड राज्य ने महत्वपूर्ण उदाहरण पेश किया है। राज्य सरकार ने लीक से हटकर स्थानीय भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता दिखाते हुए एक योजना बनाई है जिसके तहत हर गांव में एक पानी और स्वच्छता समिति शामिल होगी जिसमें अनिवार्य रूप से गांव की एक महिला सदस्य होगी। समिति के उस विशेष सदस्य को 'जल सहिया' (जल मित्र) के रूप में पहचाना जाएगा। उस समिति में महिला सशक्तिकरण सुनिश्चित करने के लिए, यह भी अनिवार्य किया गया है कि उक्त महिला सदस्य समिति की कोषाध्यक्ष होगी। अधिकारियों के मुताबिक, यह समिति गांवों में जल आपूर्ति योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार है। इससे निश्चित रूप से सामुदायिक भागीदारी सुनिश्चित हुई है और बेहतर परिणाम भी सामने आए हैं।

(लेखक राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार में कार्यरत हैं।)

ई–मेल : gauravkumarsss1@gmail.com

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने मनाया स्वच्छता पखवाड़ा

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने 16 जनवरी से 31 जनवरी, 2018 तक 'स्वच्छता पखवाड़ा' मनाया। इस पखवाड़े के दौरान मंत्रालय के अंतर्गत आने वाले विभिन्न मीडिया संगठनों ने स्वच्छ भारत अभियान के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कई प्रकार की गतिविधियां आयोजित की।

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के सचिव श्री एन. के. सिन्हा "स्वच्छता पखवाड़ा" के अवसर पर 17 जनवरी, 2018 को नई दिल्ली में श्रमदान करते हुए।

मंत्रालय द्वारा 'पखवाड़े' के दौरान आयोजित गतिविधियां

(1) 'स्वच्छता श्रमदान' का आयोजन हुआ, जिसमें सूचना एवं प्रसारण सचिव श्री एन.के. सिन्हा समेत मंत्रालय और विभिन्न मीडिया इकाइयों के अन्य अधिकारियों ने हिस्सा लिया।

(2) कर्मचारियों ने 'स्वच्छता शपथ' ली।

(3) पुरानी फाइलों पुराने फर्नीचर और बेकार सामान को हटाया गया। कार्यालय के उपकरणों की साफ–सफाई हुई और कार्यालय परिसरों का सौंदर्यीकरण किया गया।

(4) 'स्वच्छता' पर निबंध/चित्रकारी/वाद–विवाद प्रतियोगिताओं का आयोजन हुआ।

(5) मंत्रालय की विभिन्न मीडिया इकाइयों के जरिए स्वच्छ भारत मिशन से संबद्ध सफलता की कहानियों का प्रचार किया गया।

(6) विशेष संपर्क कार्यक्रमों के जरिए समुदायों को साथ लिया गया।

(7) प्रकाशन विभाग की पत्र–पत्रिकाओं – 'योजना', 'कुरुक्षेत्र', 'रोजगार समाचार', 'बाल भारती' में लेख तथा सफलता की गाथाओं का प्रकाशन किया गया।

(8) स्वच्छ भारत अभियान पर फिल्मों/वृत्तचित्रों का निर्माण एवं प्रदर्शन।

(9) सभी उपलब्ध साधनों के जरिए स्वच्छता के विषय में जागरूकता फैलाई गई।

स्वच्छता की सफलता गाथा : ओडिशा

स्वच्छता को पोषण, स्वास्थ्य और आजीविका से जोड़ हासिल की सफलता

गांवों में सिर्फ स्वच्छता के एजेंडे को ज्यादा स्वीकार्यता नहीं मिल पाती। इसे पोषण, स्वास्थ्य और आजीविका के साथ जोड़ दिया जाए तो ग्रामीणों में इसकी स्वीकार्यता काफी बढ़ जाती है। 'स्वाभिमान' परियोजना को डिजाइन करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखा गया है। इन सभी तत्वों को जोड़ने के लिए कार्यक्रम में महिला स्वयंसहायता समूहों (एसएचजी) को शामिल किया गया है। कार्यक्रम का मकसद समुदायों को खुले में शौच से मुक्त (ओडीएफ) बनाना और इसके जरिए उनका सशक्तीकरण है।

आईकेईए फाउंडेशन की मदद से चलाया जा रहा 'स्वाभिमान' किशोरियों और महिलाओं तक पहुंच बनाने का आशाजनक और सम्मिलन की संभावना वाला कार्यक्रम है। इसके जरिए दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (डीएवाई–एनआरएलएम) के तहत महिला एसएचजी के ग्राम पंचायत–स्तरीय महासंघों (जीपीएलएफ) को स्वास्थ्य और पोषण सेवाओं का एक पैकेज मुहैया कराया जाता है।

ओडिशा में कोरापुट जिले के कोरापुट प्रखंड और आंगुल जिले के पल्लाहारा प्रखंड में यह समेकित कार्यक्रम 2016 से चलाया जा रहा है। वास्तव में एसएचजी के संचालन के 10 सूत्रों में पानी, स्वच्छता और साफ–सफाई (वॉश) का स्थान अब प्रमुख हो गया है। एसएचजी के प्रशिक्षण में एक वॉश मॉड्यूल को भी शामिल कर लिया गया है।

जहां तक ओडीएफ अभियान का सवाल है, इसकी अगुवाई एसएचजी कर रहे हैं। निगमणिगुडा गांव में 111 में से 106 परिवार अपने शौचालय बना चुके हैं। इनमें से 88 परिवारों ने फिलहाल इन शौचालयों का इस्तेमाल भी शुरू कर दिया है।

'स्वाभिमान' को शुरू हुए अभी साल भर ही हुआ है मगर महिला सशक्तीकरण में इसके योगदान के पर्याप्त प्रमाण सामने हैं। शौचालयों के नियमित इस्तेमाल, उनके निर्माण के लिए कर्ज लिए जाने और शौचालय उपयोग की निगरानी में यह सशक्तीकरण स्पष्ट है। इन सभी कार्यों को नैसर्गिक नेतृत्व के तौर पर काम करने वाली एसएचजी की सदस्य ही करती हैं। 'स्वाभिमान' सुरक्षित स्वास्थ्य प्रणालियों को अपनाने के लिए बर्ताव में बदलाव लाने के अलावा विभिन्न परियोजनाओं के जरिए महिलाओं का सशक्तीकरण भी कर रहा है।

'स्वाभिमान' में समुदायों के अंदर से महिलाओं की जबर्दस्त भागीदारी और दिलचस्पी देखने को मिली है। खुले में शौच से मुक्त समुदाय बनाने की उनकी कोशिशें अब अलग–थलग गतिविधि नहीं रहीं। अब ये कोशिशें सशक्तीकरण के लिए विस्तृत अभियान का हिस्सा बन चुकी हैं।

पोषण, स्वास्थ्य और आजीविका के क्षेत्रों में 'स्वाभिमान' मासिक बैठकों के जरिए 'पोषण सखियों' और एसएचजी को एक मंच पर लाता है। पोषण सखियां और एसएचजी की सदस्य किशोरी क्लब बनाकर किशोरियों को माध्यमिक शिक्षा के लिए प्रेरित करती हैं। वे खेती के पोषण के लिहाज से संवेदनशील तकनीकों पर कृषि मित्रों और कृषक उत्पादक समूहों के साथ काम करती हैं। वे कुपोषण की आशंका वाली महिलाओं और नवविवाहिताओं को भोजन, देखभाल और आजीविका संयोजन के मामले में सहायता देती हैं।

निगमणिगुडा गांव में स्वयंसहायता समूहों ने पोषण से जुड़े नाजुक मसलों पर एक सूक्ष्म योजना तैयार और लागू की है। इस योजना में रक्ताल्पता, मलेरिया, जो माताएं जोखिम वाली स्थिति में (एट रिस्क) हैं, उनकी पहचान और बाल विवाह की रोकथाम जैसे स्वास्थ्य से जुड़े महत्वपूर्ण मसलों पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। समय–समय पर मनाए जाने वाले ग्राम स्वास्थ्य और पोषण दिवस (वीएचएनडी) को भी काफी महत्व दिया जाता है। वीएचएनडी में माताओं और किशोरियों को साबुन से हाथ धोने जैसे स्वास्थ्य से जुड़े प्रमुख संदेशों से अवगत कराया जाता है। उन्हें बताया जाता है कि यह कैसे माताओं और शिशुओं के स्वास्थ्य से जुड़ा हुआ है।

न्यूनतम खर्च में मिश्रित सब्जियों की बागवानी का प्रशिक्षण दिए जाने के बाद 14 भूमिहीन परिवारों ने रसोई के पिछवाड़े में यह काम शुरू कर दिया है। इसके अलावा, एसएचजी की सदस्य पपीता, सहजन, केला और अन्य फल–सब्जियों के बीज खरीदने के लिए बागवानी विभाग तक जा रही हैं।

बहुक्षेत्रीय प्लेटफॉर्म के रूप में डीएवाई–एनआरएलएम के इस्तेमाल से यूनिसेफ का प्रायोगिक महिला किशोरी पोषण कार्यक्रम छत्तीसगढ़ और बिहार में भी चलाया जा रहा है। ❑

स्वच्छ सर्वेक्षण-2018

आवास और शहरी मामले मंत्रालय की स्वच्छ भारत मिशन टीम ने देश में शहरों की स्वच्छता में सुधार के लिए उनके बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा विकसित करने के मकसद से अक्तूबर, 2015 में 'स्वच्छ सर्वेक्षण' की शुरुआत की।

जनवरी, 2016 में शुरुआती 'स्वच्छ सर्वेक्षण' में 73 शहरों की रेटिंग की गई। इसके बाद जनवरी और फरवरी, 2017 में किए गए दूसरे सर्वेक्षण में 434 शहरों की रैंकिंग की गई।

अब मंत्रालय स्वच्छ भारत मिशन–शहरी (एसबीएम–यू) के तहत तीसरा 'स्वच्छ सर्वेक्षण' कराने जा रहा है जिसमें सभी 4041 शहरों

की जनवरी, 2017 से दिसंबर, 2017 तक उनके प्रदर्शन के आधार पर रैंकिंग की जाएगी।

स्वच्छ सर्वेक्षण 2018 के उद्देश्य

इस सर्वेक्षण का मकसद शहरों को स्वच्छ बनाने के काम में नागरिकों की बड़े पैमाने पर भागीदारी को बढ़ावा देना है। इसके जरिए कस्बों और शहरों को रहने के लिए बेहतर जगह बनाने की दिशा में मिल–जुलकर काम करने के महत्व के बारे में समाज के सभी तबकों में जागरूकता पैदा करने का प्रयास भी किया जाएगा। इसके अलावा, यह सर्वेक्षण शहरों को स्वच्छ बनाने के उद्देश्य से नागरिकों को दी जाने वाली सेवाओं में सुधार लाने के लिए शहरों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना को भी बढ़ावा देगा।

अब तक स्वच्छ सर्वेक्षणों में प्रक्रिया और आउटपुट आधारित संकेतकों पर ध्यान केंद्रित किया गया था। लेकिन इस सर्वेक्षण में इनके बजाय नतीजों और धारणीयता पर आधारित संकेतकों पर ध्यान दिया जाएगा।

एक जैसे छोटे शहरों को समान अवसर सुनिश्चित करने के लिए स्वच्छ सर्वेक्षण 2018 में रैंकिंग की दो श्रेणियां होंगी–

1. एक लाख से ज्यादा आबादी वाले 500 शहरों की राष्ट्रीय रैंकिंग तैयार की जाएगी।
2. एक लाख से कम आबादी वाले 3541 शहरों की राज्यीय और क्षेत्रीय रैंकिंग होगी।

सर्वेक्षण में निम्नलिखित छह विस्तृत मानदंडों में प्रगति को मापने की कोशिश की जाएगी–

1. **म्युनिसिपल ठोस कचरे का संग्रह और परिवहन:** यह सुनिश्चित करना कि घरों से सूखे और गीले कचरे का रोजाना अलग–अलग संग्रह किया जाए ताकि सार्वजनिक इलाके साफ रहें।
2. **म्युनिसिपल ठोस कचरे का प्रसंस्करण और निस्तारण:** शहरों को कचरे के प्रसंस्करण और यथासंभव सूखे कूड़े के पुनर्चक्रण के लिए प्रेरित करना।
3. **स्वच्छता संबंधी प्रगति:** इस बात की पुष्टि करना कि क्या शहर खुले में शौच से मुक्त (ओडीएफ) हैं और नागरिकों को शौचालय उपलब्ध हैं। देश के सभी पेट्रोल पंपों तक ने इस साल अपने शौचालयों को सार्वजनिक शौचालय के तौर पर इस्तेमाल के लिए देने की पेशकश की है।
4. **आईईसी (सूचना, शिक्षा और संचार):** यह देखना कि क्या शहरों ने स्वच्छ सर्वेक्षण को बढ़ावा देने तथा कचरा प्रबंधन और सामुदायिक और सार्वजनिक शौचालयों के रखरखाव में नागरिकों को शामिल करने के लिए अभियान शुरू किया है।
5. **क्षमता निर्माण:** यह पता लगाना कि क्या शहरी स्थानीय निकायों के अधिकारियों को प्रशिक्षणों में भाग लेने और ज्ञानवर्धक यात्राओं पर जाने के पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराए गए।
6. **नवाचार और सर्वश्रेष्ठ कार्यप्रणाली:** इस मानदंड को स्वच्छ सर्वेक्षण में पहली बार शामिल किया गया है। इसका मकसद शहरों को स्वच्छ भारत मिशन में अपनी सर्वश्रेष्ठ कार्यप्रणाली से सबको अवगत कराने के लिए प्रेरित करना है। इससे देश को यह जानने में मदद मिलेगी कि अक्तूबर, 2019 तक भारत को स्वच्छ और ओडीएफ बनाने के आह्वान पर हमारे शहरों ने किस तरह काम किया है।

मल प्रबंधन : स्वच्छ भारत अभियान के लिए चुनौती

–पद्म कांत झा
–योगेश कुमार सिंह

देश को विकेंद्रीकृत ट्रीटमेंट संयंत्र की बहुत अधिक आवश्यकता है। इनसे निजी क्षेत्र के प्रतिभागियों को अधिक मौके मिलेंगे, रोजगार की दर बढ़ेगी, वातावरण स्वच्छ और सुरक्षित होगा। स्थानीय निकायों को बढ़ती हुई जनसंख्या की चुनौतियों से निपटने और विष्ठा मलबे के निपटारे अर्थात् टैंक खाली करने से लेकर ट्रीटमेंट संयंत्र तक ले जाने की प्रभावी व्यवस्था मुहैया कराने में सक्षम बनाना आवश्यक है।

पूरे देश में 2 अक्टूबर, 2014 को आरंभ किए गए स्वच्छ भारत अभियान ने 76 प्रतिशत ग्रामीण घरों और 97 प्रतिशत से अधिक शहरी घरों में शौचालय बनाने में मदद की है, जबकि पहले ग्रामीण क्षेत्रों में 38 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 91 प्रतिशत घरों में शौचालय थे। इन आंकड़ों से ही पता चल जाता है कि अभियान 2 अक्तूबर, 2019 तक खुले में शौच से मुक्त (ओडीएफ) हो जाने का अपना उद्देश्य प्राप्त करने की दिशा में बढ़ रहा है।

भारत सरकार के पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के अनुसार ओडीएफ का अर्थ है मल अथवा विष्ठा में पाए जाने वाले विषाणुओं या जीवाणुओं का मुंह के रास्ते पहुंचना बंद होना। ओडीएफ तब माना जाता है, जबः

(अ) वातावरण अथवा गांव में विष्ठा नहीं दिखती है।

(आ) प्रत्येक घर तथा सार्वजनिक/सामुदायिक संस्था में विष्ठा के निस्तारण के लिए सुरक्षित तकनीक का प्रयोग होता है। सुरक्षित तकनीक के विकल्प का अर्थ हैः

क– भूमि, भूजल तथा सतह पर पाया जाने वाला जल प्रदूषित नहीं होना।

ख– मक्खियों अथवा पशुओं का विष्ठा तक नहीं पहुंच पाना।

ग– ताजी विष्ठा हटाने की नौबत नहीं आना।

घ– बदबू और घृणाजनक स्थितियों से मुक्ति मिलना।

पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने बन रहे शौचालयों की वास्तविक संख्या की निगरानी करने के लिए प्लेटफॉर्म तैयार किया है, लेकिन मंत्रालय की निगरानी व्यवस्था में शौचालय के प्रकार का पता नहीं लगाया जा सकता, जो बहुत महत्वपूर्ण सूचक है। एकदम ज़मीनी–स्तर पर पहुंचना और अभियान के तहत बनाए जा रहे शौचालयों की निगरानी करना आवश्यक है।

ज़मीनी–स्तर पर ग्रामीण स्वच्छता की बदलती स्थिति को समझने के लिए भारतीय गुणवत्ता परिषद ने पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के निर्देश पर एक सर्वेक्षण 'स्वच्छ सर्वेक्षण – ग्रामीण' कराया। सर्वेक्षण के अनुसार लगभग जिन ग्रामीण घरों में शौचालय हैं, उनमें से 91 प्रतिशत उनका प्रयोग कर रहे हैं। इससे मिशन की सफलता का पता चलता है। जो परिवार शौचालय होने के बाद भी उनका प्रयोग नहीं कर रहे हैं, उनसे इसका कारण जानने का प्रयास भी सर्वेक्षण ने किया। सर्वेक्षण के आंकड़े बताते हैं कि खुले में शौच करने की पुरानी आदत तो शौचालयों के प्रयोग की राह में बड़ी बाधा है ही, 31.97 प्रतिशत घर शौचालयों के निर्माणाधीन होने, सीट टूटी होने और गड्ढे या टैंक भर जाने के कारण उनका प्रयोग नहीं करते। शौचालय इस्तेमाल नहीं करने के अन्य कारण हैं– पानी की किल्लत (10.33 प्रतिशत), शौचालय में बैठने की स्थिति नहीं होना (3.25 प्रतिशत), बदबू आना (1.41 प्रतिशत), शौचालय में अंधेरा होना (1.11 प्रतिशत) और ताजी हवा नहीं आना (0.91 प्रतिशत)। इससे अभियान के लिए तकनीकी चुनौती खड़ी होती है।

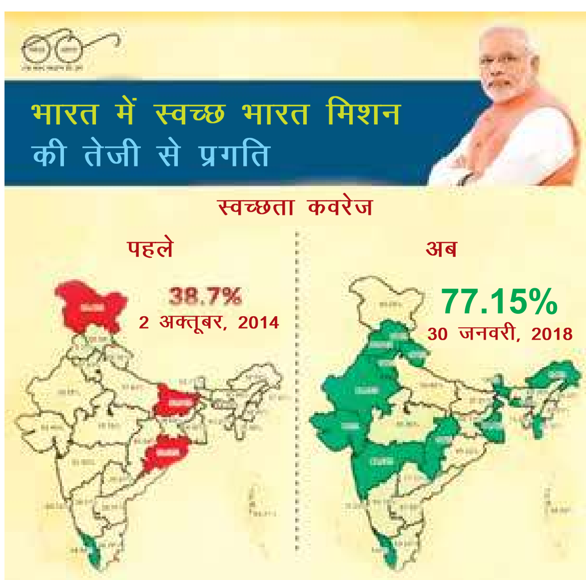

गड्ढे लबालब भर जाने, शौचालय में अंधेरा होने, हवा की आवाजाही नहीं होने, बदबू आने और पानी नहीं होने जैसे कारणों से कुछ लाभार्थी शौचालयों का इस्तेमाल नहीं कर रहे हैं। हो सकता है कि जिन शौचालयों का प्रयोग किया जा रहा है, इन्हीं कारणों से आगे चलकर उनका प्रयोग नहीं किया जाए। अभियान के लिए यह चुनौती है। जो लाभार्थी शौचालय जैसी सुविधाओं के निर्माण के लिए सरकार से वित्तीय सहायता ले चुके हैं, उन्हें दोबारा वित्तीय सहायता नहीं मिल सकेगी, जिससे अभियान के तहत खुले में शौच से मुक्ति का उद्देश्य अधूरा रह सकता है। शौचालयों की घटिया गुणवत्ता पिछले स्वच्छता कार्यक्रमों की असफलता का एक कारण रही है और इस अभियान में वही नहीं दोहराया जाना चाहिए।

विष्ठा की गाद या मलबे का प्रबंधन स्वच्छता सुविधाओं से जुड़ा अहम पहलू है। विष्ठा के मलबे में फ्लश किया हुआ पानी, सफाई करने वाली

सामग्री और विष्ठा होती है, जो शौचालय के पास स्थित टैंक आदि में रहती है। लेकिन पानी के साथ फ्लश वाले शौचालय या शौच बहाने के लिए अधिक पानी की जरूरत वाले शौचालय विष्ठा के मलबे का प्रबंधन करने में चुनौती खड़ी कर रहे हैं। अधिकतर शहरों और गांवों में सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट का अभी तक इंतजार हो रहा है। ऐसी स्थितियों में प्रत्येक शौचालय में ही विष्ठा के मलबे का शोधन जरूरी हो जाता है। अभियान के तहत यह नई चुनौती है। देशभर में जनसंख्या बहुत सघन होने और प्रत्येक घर में सीवेज कनेक्शन नहीं होने के कारण शौचालय के पास ही ट्रीटमेंट का संयंत्र बनना या विकेंद्रीकृत कचरा प्रबंधन की सुविधा होना आवश्यक है।

पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय दो टैंकों या गड्ढों वाले शौचालयों को लोकप्रिय बनाने के लिए कई जागरूकता कार्यक्रम चलाता आया है। किंतु स्वच्छ सर्वेक्षण की रिपोर्ट बताती है कि जिन घरों का सर्वेक्षण किया गया, उनमें से 40.87 प्रतिशत में केवल एक टैंक वाले शौचालय हैं, 31.93 प्रतिशत में सेप्टिक टैंक वाले शौचालय और 23.89 प्रतिशत घरों में दो टैंक वाले शौचालय हैं।

एक टैंक वाले शौचालय में केवल एक गड्ढा होता है, जिसमें मल, मूत्र और सफाई के लिए इस्तेमाल किया गया पानी इकट्ठा होता रहता है। अगर पानी का इस्तेमाल बहुत कम हो तो यह शौचालय भरने में बहुत समय लेता है। लेकिन भारत में पानी शौचालयों का अभिन्न अंग होता है, ऐसे में यदि गड्ढे से पानी आर–पार जा सकता है और भूजल का स्तर काफी ऊंचा हो तो विष्ठा के मलबे से रिसकर पानी भूजल में मिल जाएगा। दोनों ही स्थितियां शौचालयों के सतत इस्तेमाल और भूजल को प्रदूषित होने से बचाने की राह में चुनौती हैं। साथ ही गड्ढा भर जाने पर उसे खाली करना दूसरी चुनौती होती है। इसके अलावा गड्ढा पूरा भरने और खाली होने के बीच की अवधि में लाभार्थी को वर्तमान शौचालय का विकल्प ढूंढना पड़ेगा। जिन गांवों में आबादी की सघनता बीचोंबीच में होती है, वहां शौचालय खाली करना दूर–दूर बने घरों वाले गांव की तुलना में अधिक कठिन होता है। लेकिन शहरों में अधिकतर सेप्टिक टैंक घरों के नीचे बनाए जाते हैं, जहां टैंक साफ करने वाला वाहन पहुंच ही नहीं सकता। चूंकि अधिकतर स्थानीय निकायों के पास सेप्टिक टैंक खाली करने की पर्याप्त सुविधा नहीं है, इसलिए निजी क्षेत्र की भूमिका शुरू हो जाती है, जिसे सेप्टिक टैंक साफ ही नहीं करना चाहिए बल्कि विष्ठा के मलबे को सुरक्षित तरीके से निपटाना भी चाहिए।

सेप्टिक टैंकों से जुड़ी कुछ अन्य समस्याएं भी हैं। भारतीय मानक ब्यूरो के निर्देश के अनुसार 2,000 लीटर से अधिक क्षमता वाले सेप्टिक टैंक के लिए कम से कम दो चैंबर होने चाहिए, जिनके बीच में दीवार हो। लेकिन गांवों और शहरों में इन मानकों का पालन नहीं किया जा रहा है, जिसके कारण एक ही चैंबर वाले टैंक बनाए जाते हैं, जिनके पाइप से मलबा निकलता रहता है। ऐसे मलबे से कभीकभार पेयजल भी दूषित हो जाता है। ऐसे सेप्टिक टैंकों को समय–समय पर साफ करने और कचरे का शोधन करने के लिए स्थानीय निकायों द्वारा कोई वैज्ञानिक प्रणाली विकसित किया जाना बहुत जरूरी है।

खुले इलाके या खुली नाली में विष्ठा बहाना भी ग्रामीण और शहरी इलाकों में बड़ी समस्या है। सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट का इस्तेमाल बहुत कम नगर निगम कर रहे हैं। ये प्लांट तब तक आर्थिक रूप से व्यावहारिक भी नहीं हैं, जब तक बारिश का पानी, सतह पर इकट्ठा पानी और बेकार पानी अलग–अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि विष्ठा के मलबे में अतिरिक्त पानी मिल जाने से सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट पर ज्यादा बोझ पड़ जाता है। इसीलिए देश को ऐसी प्रौद्योगिकी अपनानी चाहिए, जिनमें शौचालय आदि में पानी की जरूरत ही नहीं पड़े या कम पड़े।

सुशील सैम्युअल के 'सेप्टेजः केरलाज लूमिंग सेनिटेशन चैलेंज' लेख में बताया गया है कि केरल में प्रत्येक घर में शौचालय उपलब्ध कराने के बाद समुदाय के सामने सेप्टिक टैंक को बार–बार साफ करने और उससे निकले मलबे के सुरक्षित निस्तारण की दूसरी चुनौती खड़ी हो गई है। उन्होंने बताया कि टैंक खाली करने से जुड़ी अधिकतर गतिविधियां रात 10 बजे से सुबह 5 बजे के बीच ही निपटायी जाती हैं और उससे निकला मलबा खुले में डाल दिया जाता है क्योंकि सुरक्षित निपटारे की कोई प्रणाली ही नहीं है।

शौचालयों में पानी के अधिक इस्तेमाल से दुर्लभ जन संसाधनों का नुकसान ही नहीं होता है बल्कि कंपोस्टिंग की प्रक्रिया में भी देर होती है। स्वच्छता के क्षेत्र में श्री बिंदेश्वर पाठक द्वारा स्थापित प्रसिद्ध संस्था सुलभ फाउंडेशन ने 25 से 28 डिग्री ढलान वाली शौचालय की सीट बनाई है, जिसमें मल बहाने के लिए केवल एक से 1.5 लीटर पानी की जरूरत होती है। इससे पानी बचाने और कंपोस्टिंग की प्रक्रिया तेज करने में मदद मिलती है।

सेप्टिक टैंक वाले शौचालयों के लिए दूसरा विकल्प ईकोसैन शौचालय है, जो बेहद सस्ता है, जिसमें पानी की जरूरत नहीं होती और जो पानी की कमी वाले इलाकों के लिए भी उचित है तथा गांवों में ऊंचे भूजल–स्तर वाले क्षेत्रों के लिए भी। शौचालय का बुनियादी सिद्धांत विष्ठा में से पोषक तत्व पुनः प्राप्त करना और उन्हें कृषि कार्यों में इस्तेमाल करना है। प्रयोग के बाद हर बार विष्ठा को मिट्टी अथवा राख से ढक देना चाहिए और शौचालय का इस्तेमाल नहीं होने पर टैंक को ढक्कन से ढक देना चाहिए। ईकोसैन शौचालय में जब गड्ढा भर जाता है तो उसे सीलबंद कर दिया जाता है। चैंबर में इकट्ठी विष्ठा को छह से नौ महीने के लिए छोड़ दिया जाता है

बायो–डायजेस्टर शौचालय

ताकि यह सड़कर कंपोस्ट में बदल जाए। चैंबर से निकले कंपोस्ट का इस्तेमाल खेतों में खाद के रूप में किया जाता है। कंपोस्ट बनने की अवधि में शौचालय के लिए दूसरे गड्ढे का इस्तेमाल किया जा सकता है।

सौर ऊर्जा से स्वयं ही साफ होने वाले शौचालय हाल के वर्षों में तैयार की गई नई प्रौद्योगिकी है। इन स्वचालित, छोटे आकार वाले स्टेनलेस स्टील के शौचालयों की डिजाइन इस तरह तैयार की गई है कि जहां भी बिजली और विष्ठा के मलबे के शोधन की सुविधा नहीं है, वहां इन्हें लगाया जा सकता है। स्वचालित शौचालय होने के कारण ये इस्तेमाल के बाद हर बार सेंसर की मदद से पानी की कम से कम मात्रा प्रयोग कर खुद ही साफ हो जाते हैं। आमतौर पर विष्ठा बहाने के लिए हर बार 1.5 लीटर पानी का इस्तेमाल होता है, जबकि सामान्य शौचालयों में 8–10 लीटर पानी लगता है। 10 बार इस्तेमाल के बाद इसका फर्श भी स्वयं ही धुल जाता है। बत्ती अपने–आप जलती है और उसके लिए बिजली इसमें लगे सोलर पैनल से ली जाती है। हवा के बगैर ही जैव अपघटन के जरिए कचरे के ट्रीटमेंट की व्यवस्था भी है। कम से कम ऊर्जा में काम करने वाले इस शौचालय में सबसे अच्छी बात यह है कि एक बुनियादी ढांचे पर पूरा शौचालय फिट किया जा सकता है। ऐसी प्रौद्योगिकी ग्रामीण और शहरी दोनों इलाकों के लिए सर्वोत्तम है। झुग्गियों के लिए भी हमें ऐसी तकनीक चाहिए, जिसमें विष्ठा का ट्रीटमेंट स्वयं ही हो जाए।

जहां विष्ठा के मलबे के ट्रीटमेंट की प्रभावी प्रक्रिया उपलब्ध नहीं है, वहां बायो–डायजेस्टर शौचालय भी बहुत उपयोगी होते हैं। बायो–डायजेस्टर शौचालय आरंभ में रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) की ग्वालियर स्थित प्रयोगशाला ने सशस्त्र बलों के लिए ऊंचाई वाले इलाकों में लगाने के उद्देश्य से बनाए थे। इन्हें बनाने का मकसद यह था कि विष्ठा को हाथ से नहीं उठाना पड़े और उसका सुरक्षित निस्तारण भी हो जाए। पहले शौचालयों के गहरे गड्ढों से मल निकालने के लिए कर्मचारी नियुक्त किए जाते थे और उस मल को ऊर्जा का इस्तेमाल कर जला दिया जाता था क्योंकि कम तापमान पर कचरे का प्राकृतिक जैव अपघटन नहीं होता। ऊंचाई पर इसी तरह के शौचालय बनाए जाते हैं, जिनमें 240 वॉट का सोलर पैनल भी होता है ताकि कचरे को निपटाने के लिए जरूरी ऊर्जा तैयार हो सके। इन शौचालयों को ऐसे तैयार किया गया है कि ये मानव मल को गैस और खाद में बदल देते हैं। बायो–डायजेस्टर शौचालयों में इस्तेमाल होने वाले सूक्ष्म जीवाणु मानव विष्ठा को इस्तेमाल लायक पानी और गैप में तब्दील कर देते हैं। बायो–डायजेस्टर शौचालयों में बायो–डायजेस्टर टैंक लगे होते हैं, जिनमें हवा के बगैर ही पाचन की क्रिया होती है। इन टैंकों से बनी मीथेन गैस का इस्तेमाल गैस के चूल्हे जलाने और बिजली बनाने में किया जाता है, जबकि बचे हुए पदार्थ को बागवानी और खेती में खाद के तौर पर इस्तेमाल किया जा सकता है। चूंकि ऐसे शौचालयों के साथ किसी भौगोलिक क्षेत्र या तापमान की बंदिश नहीं होती, इसलिए इन्हें कहीं भी लगाया जा सकता है और इन्हें

सौर ऊर्जा से स्वयं साफ होने वाले शौचालय

सीवर नेटवर्क से जोड़ने की जरूरत भी नहीं होती। श्रीनगर के हाउसबोट और भारतीय रेल में लगे ऐसे शौचालय काफी सफल साबित हुए हैं। ऊंचे भूजल–स्तर वाले इलाकों में भी उपयुक्त होने के कारण लक्षद्वीप में भी बड़ी तादाद में ऐसे शौचालय बनाए गए हैं।

बायो–डायजेस्टर शौचालय बनाने का खर्च स्वच्छ भारत अभियान के तहत बन रहे शौचालयों के लिए मिल रही वित्तीय सहायता से अधिक होता है, लेकिन अगर सेप्टिक टैंक से मलबा इकट्ठा करने और ट्रीटमेंट प्लांट तक ले जाने या सीवर प्रणाली लगाने में आने वाला खर्च अथवा सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट लगाने के लिए जमीन की कीमत और उसे चलाने पर आने वाला खर्च देखा जाए तो ये शौचालय आर्थिक रूप से फायदेमंद लग सकते हैं। बड़े स्तर पर निर्माण किया जाए, जागरूकता फैलाई जाए और आम आदमी के बीच मांग पैदा की जाए तो बायो–डायजेस्टर शौचालयों की लागत भी घटाई जा सकती है।

ऊपर बताए गए स्वच्छता के मॉडल ऐसे इलाकों के लिए सबसे कारगर हैं, जहां सीवेज व्यवस्था नहीं है। मलबे के निपटारे की केंद्रीकृत व्यवस्था के बजाय विकेंद्रीकृत व्यवस्था अपनाने के लिए यह एकदम सही समय है। साथ ही यह भी देखा गया है कि केंद्रीकृत व्यवस्था में खर्च भी अधिक होता है और कई मंत्रालयों तथा विभागों का दखल भी होता है। देश को विकेंद्रीकृत ट्रीटमेंट संयंत्र की बहुत अधिक आवश्यकता है। इनसे निजी क्षेत्र के प्रतिभागियों को अधिक मौके मिलेंगे, रोजगार की दर बढ़ेगी, वातावरण स्वच्छ और सुरक्षित होगा। स्थानीय निकायों को बढ़ती हुई जनसंख्या की चुनौतियों से निपटने और विष्ठा मलबे के निपटारे अर्थात् टैंक खाली करने से लेकर ट्रीटमेंट संयंत्र तक ले जाने की प्रभावी व्यवस्था मुहैया कराने में सक्षम बनाना आवश्यक है। यदि शौचालयों का सही नमूना चुना जाता है और स्थानीय निकायों को विष्ठा के मलबे की समस्या से निपटने में सक्षम बनाया जाता है तो स्वच्छता की बेहतर सुविधा प्रदान करने के पूरे फायदे उठाए जा सकते हैं।

(पद्म कांत झा नीति आयोग में उप सलाहकार (पेयजल एवं स्वच्छता) हैं; योगेश कुमार सिंह नीति आयोग में यंग प्रोफेशनल (ग्रामीण विकास) हैं।)

ई–मेल : jha.pk@gov.in; singh.yogeshkr@gmail.com

राष्ट्रपति ने असाधारण उपलब्धियां हासिल करने वाली महिलाओं को किया सम्मानित

राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोविंद ने 20 जनवरी, 2017 को राष्ट्रपति भवन में उन असाधारण महिलाओं को सम्मानित किया, जिन्होंने अपने–अपने क्षेत्रों में पहली बार असाधारण उपलब्धि हासिल की। इन महिलाओं का चयन महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने किया, जिसका उद्देश्य असाधारण उपलब्धि हासिल करने वाली उन महिलाओं को सम्मानित करना था जिन्होंने रूढ़ियों और बंदिशों को तोड़ कुछ नया किया।

इस अवसर पर राष्ट्रपति ने कहा कि महिलाओं की उन्नति किसी भी देश या समाज की प्रगति का सूचक है। हम अपने देश में महिलाओं की सहभागिता में सकारात्मक परिवर्तन देख रहे हैं। उन्होंने कहा कि महिला सशक्तिकरण की गति ही यह तय करेगी कि हम अधिक संवेदनशील एवं निष्पक्ष समाज की ओर कितनी तेजी से बढ़ रहे हैं।

राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोविंद राष्ट्रपति भवन में 20 जनवरी, 2017 को अपने–अपने क्षेत्र में असाधारण उपलब्धि हासिल करने वाली महिलाओं के साथ।

जिन महिलाओं का सम्मान किया गया, वे किसी भी क्षेत्र में पॉयनियर अर्थात् पहली रही हैं, जैसे पहली महिला न्यायाधीश, पहली महिला कुली, मिसाइल परियोजना की अगुआई करने वाली पहली महिला, पहली पैरा–ट्रूपर, पहली महिला ओलंपिक खिलाड़ी आदि।

प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) पर कार्यशाला

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय ने 16 जनवरी, 2018 को प्रधानमंत्री आवास योजना–ग्रामीण के बारे में एक कार्यशाला का आयोजन किया। कार्यशाला का विषय था, 'सहयोग की संभावनाएं : प्रधानमंत्री आवास योजना–ग्रामीण'। इसमें पीएमएवाई–जी के अंतर्गत बनाए जा रहे मकानों की गुणवत्ता बनाए रखते हुए निर्माण कार्य में तेजी लाने के उपायों पर ध्यान केंद्रित किया गया।

कार्यशाला का उद्घाटन केंद्रीय ग्रामीण विकास, पंचायती राज और खान मंत्री श्री नरेंद्र सिंह तोमर ने किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि अभी तक 16 लाख ग्रामीण आवास बनाए जा चुके हैं, और देशभर में एक करोड़ ग्रामीण मकान बनाने का लक्ष्य है।

केंद्रीय ग्रामीण विकास, पंचायती राज और खान मंत्री श्री नरेंद्र सिंह तोमर प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) के बारे में कार्यशाला को संबोधित करते हुए।

प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) का शुभारंभ 20 नवंबर, 2016 को प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने किया था। इस कार्यक्रम का लक्ष्य ग्रामीण क्षेत्रों में "सबके लिए आवास" मुहैया कराना है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत सरकार का प्रयास है कि प्रत्येक ग्रामीण परिवार को 2022 तक ऐसा सुरक्षित पक्का मकान उपलब्ध कराया जाए, जो पर्यावरण की दृष्टि से उपयुक्त हो। प्रथम चरण के दौरान मार्च 2019 तक एक करोड़ मकानों का निर्माण कार्य पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। इन मकानों के लिए प्रति यूनिट निर्माण लागत में पर्याप्त बढ़ोतरी की गई है और अब समाभिरूपता के जरिए प्रत्येक परिवार को न्यूनतम सहायता करीब 1.5 लाख रुपये से 1.6 लाख रुपये तक दी जा रही है। इसमें 70,000 रुपये के बैंक ऋण का भी प्रावधान है, बशर्ते लाभार्थी इसका इच्छुक हो। लाभार्थियों का चयन पूरी तरह पारदर्शी प्रक्रिया के जरिए किया जाता है। इसके लिए 2011 में कराई गई सामाजिक–आर्थिक गणना को आधार बनाया जाता है और ग्रामसभा के माध्यम से उसकी जांच की जाती है।

रसोई, बिजली, एलपीजी, शौचालय और स्नानघर, पेयजल आदि की व्यवस्था के साथ एक पूरा घर बनाने में समाधिरूपता के जरिए बड़े पैमाने पर स्थानीय सामग्री का इस्तेमाल किया जाता है। इस कार्यक्रम का लक्ष्य ग्रामीण निर्धनों को सहायता पहुंचाना है। सही लाभार्थियों के चयन की पुनः पुष्टि करने और कार्य की प्रगति पर निगरानी रखने के लिए सूचना संचार प्रौद्योगिकी और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का सहारा लिया जाता है। लाभार्थी की सहमति से सभी भुगतान आईटी/डीबीटी के माध्यम से आधार से जुड़े बैंक खातों में किए जाते हैं, ताकि पूर्ण पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित की जा सके। ❑

विश्व पुस्तक मेला 2018 में प्रकाशन विभाग

प्रकाशन विभाग (डीपीडी) ने 6–14 जनवरी 2018 को प्रगति मैदान, नई दिल्ली में हुए विश्व पुस्तक मेले में प्रतिभागिता की। डीपीडी ने गांधी साहित्य, कला एवं संस्कृति, राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्रीय नेताओं की जीवनियां, बाल पुस्तक व भारतीय परिदृश्य के अन्य क्षेत्रों की अपनी पुस्तकें शामिल की। परंपरा के अनुसार, प्रकाशन विभाग ने जीवनियों, बच्चों की किताबों व अन्य प्रकाशनों समेत अंग्रेज़ी, हिंदी व उर्दू की 15 किताबों का विमोचन किया। डीपीडी की किताबों के स्टॉल का उद्‌घाटन मेले के पहले दिन अर्थात 6 जनवरी, 2018 को सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के सचिव श्री एन.के. सिन्हा द्वारा किया गया।

इसी दिन, श्री सिन्हा ने वरिष्ठ उप निर्वाचन आयुक्त श्री उमेश सिन्हा तथा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी की उपस्थिति में डीपीडी की 4 किताबों का लोकार्पण किया। ये किताबें हैं: **मतदान में विश्वास,** जो भारत की चुनाव प्रणाली को समझने का नज़रिया देता है; सुभाष कश्यप की पुस्तक **भारतीय संविधान और आम आदमी,** जो सामान्य आदमी के नज़रिए से भारतीय संविधान की व्याख्या करती हैं, प्रतिष्ठित नृत्य आलोचक श्रीमती लीला वेंकटरमण रचित 36 आलेखों का संग्रह **इंडियन डांस: थ्रू ए क्रिटिक्स आई** और **हमारे संस्कार और संस्कृति** जो मूल्य–आधारित परवरिश के महत्व की बात करता है।

8 जनवरी, 2018 को पीआईबी के पूर्व महानिदेशक डॉ. उमाकांत मिश्रा व सस्ता साहित्य मंडल की सचिव डॉ. रीता रानी पालीवाल द्वारा 11 अन्य किताबों का लोकार्पण किया गया। इन किताबों में राष्ट्रीय नेताओं की जीवनियां, बाल साहित्य व प्रमुख पब्लिशिंग हाउस सस्ता साहित्य मंडल के सह–प्रकाशन में आई किताबें शामिल हैं।

निसंदेह विश्व पुस्तक मेले ने प्रकाशन विभाग को पुस्तक प्रेमियों के विशाल समूह तक पहुंचने व उनकी महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया जानने का अवसर दिया। ❑

आर. एन. आई./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2018-20
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-54/2015-17
1 फरवरी, 2018 को प्रकाशित एवं 5-6 फरवरी, 2018 को डाक द्वारा जारी

R.N.I/708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2018-20
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2015-17
to Post without pre-payment at R.M.S. Delhi.

Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी को समर्पित मासिक पत्रिका

दृष्टि The Vision

करेंट अफेयर्स टुडे

वर्ष 3 | अंक 8 | कुल अंक 32 | फरवरी 2018 | ₹ 100

प्रमुख आकर्षण

▸ महत्त्वपूर्ण लेख ▸ टू द पॉइंट ▸ ऑडियो आर्टिकल ▸ टॉपर से रूबरू ▸ महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं का जिस्ट

अब और भी बेहतर स्वरूप में...

- ☑ समसामयिक मुद्दों पर आधारित महत्त्वपूर्ण लेख।
- ☑ मुख्य परीक्षा के लिये सामान्य अध्ययन पर महत्त्वपूर्ण सामग्री।
- ☑ प्रारंभिक और मुख्य परीक्षा पर केंद्रित सामान्य अध्ययन के विभिन्न खंडों के रिवीज़न हेतु 'टू द पॉइंट' सामग्री।
- ☑ प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं (साइंस रिपोर्टर, डाउन टू अर्थ, इकॉनमिक एंड पोलिटिकल वीकली, द हिंदू आदि) के महत्त्वपूर्ण लेखों का सारांश।
- ☑ प्रारंभिक परीक्षा पर केंद्रित टारगेट प्रिलिम्स खंड।
- ☑ तैयारी कर रहे अभ्यर्थियों के लिये प्रेरणादायक कॉलम।
- ☑ इंटरव्यू की तैयारी के लिये महत्त्वपूर्ण सामग्री।

पत्रिका का सैम्पल निःशुल्क पढ़ने के लिये हमारी वेबसाइट: **www.drishtiias.com** पर विज़िट करें।

"क्योंकि किताबें ही होती हैं हमारी सच्ची यार; चलो बुक फेयर चलें, देखें किताबों का संसार।"

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2018

दृष्टि The Vision

स्टॉल नंबर 330-337 | हॉल नंबर 12A
06 -14 जनवरी 2018 | प्रगति मैदान, नई दिल्ली

To Subscribe, Call - 8130392351, 8130392359
For business/advertising enquiry, Call - 8130392355
Web : www.drishtiias.com, Email : info@drishtipublications.com

प्रकाशक और मुद्रक: डॉ. साधना राउत, महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : जे.के. ऑफसेट, बी-278, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110020, वरिष्ठ संपादक: ललिता खुराना